

भूमिका

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

दण्डाधिकं नमस्कृत्य श्रीगुरुं गिरिजापतिम् ।

मीनरूपदीनानन्दस्य भूमिकेत्यं विरचयते ॥ १ ॥

अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तत्र वेदलम् ।

प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्राङ्गो यत्र साक्षिणो ॥ १ ॥

इस श्लोकका अर्थ है— अज्ञानता की अनेक भ्रमनाह हैं जिनमें प्रथम अनुभव तथा वेदोंके सम्बन्धों का उपयोग किया है, कि जिनको पढ़कर मनुष्य सम्पूर्ण पदार्थों को समझ जान सकता है, वेद के अङ्ग ६ हैं जिनमें कि—

शिक्षा कल्पों व्याकरणं निरुक्तं ज्योतिषां गति ।

द्वन्द्वमां लक्षणं चैव पदंगो वेद उच्यते ॥ २ ॥

१ शिक्षा, २ कल्प, ३ व्याकरण, ४ निरुक्त, ५ ज्योतिष, ६ द्वन्द्व इन छे अङ्गों में ज्योतिषशास्त्र प्रधान है जिनमें सूर्य चन्द्रमा मासों हैं अन्य शास्त्र अश्रयण हैं केवल विवाद मात्र हैं, कारण यह कि—

द्वन्द्वः पादो तु वेदस्य तौ कल्पोव कथ्यते ।

ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ॥ ३ ॥

शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुत्रं व्याकरणं स्मृतम् ॥

वेदकी पुरुष के द्वन्द्व पाद हैं, कल्प दोनों हाथ हैं, ज्योतिष नेत्र प्रधान है तथा निरुक्त दोनों कान हैं, शिक्षा नासिका है, व्याकरण मुख कटा है—जिन शरीर विषे ममस्त इन्द्रियों में नेत्र प्रधान हैं ।

सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानम् ॥

नेत्र ही वेदकी पुरुष का नेत्र होने से ज्योतिःशास्त्र प्रधान है ।

तथाच—यथा शिक्षा मयूराणां नागानां मणयोयथा ।

तद्वद्वेदांगशस्त्राणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम् ॥ ४ ॥

जैसे मोरों में शिखा प्रधान है और जैसे सर्पों में मणि तद्वत् वेदाङ्गशास्त्रों में ज्योतिष शास्त्र शिरोमणि है, इसी के द्वारा पण्डित जन भूत, भविष्य, वर्तमान कहने में समर्थ होते हैं विशेष विचार करने से ज्ञात होता है कि ज्योतिष शास्त्र ही विद्वान की प्रतिष्ठा आदि का कारण है, इसी को पढ़कर पूर्व विद्वान् त्रिकालज्ञ कहलाते थे, उस ज्योतिष शास्त्र में भी अनेक विषय हैं, जैसे गणित, मुहूर्त, प्रश्न, स्वर, शकुन, जातक ताजिक इत्यादि यहाँ ताजिक विषय में ताजिकालंकार, ताजिकदर्पण, ताजिकसिन्धु, ताजिक केशवी, ताजिक भूषण, ताजिकसुधारण, ताजिकरत्न, ताजिकतन्त्र, ताजिकप्रकाश, समाप्रकाशिनी, हायनरत्न, हायनसुन्दर, ताजिकनीलकण्ठी ताजिक ग्रन्थों में इक्कवाल, इत्थशाल, ईमराफ आदि पारसी शब्द बहुतसे आये हैं इसका कारण यह है कि—

ब्रह्मणा गदितं भानोर्भानुना यवनाय तत् ।

यवनेन च यत्प्रोक्तं ताजिकं तत्प्रचक्षते ॥ ५ ॥

ब्रह्मानी ने जो सूर्यनारायण से कहा, वह सूर्य ने यवनाचार्य को उपदेश किया और यवनाचार्य ने जो वर्णन किया उसी को ताजिक कहना चाहिये, ताजिकके टोडरानन्द, रोमक, द्विब्राज, दृमुख, भिषणा आदि आचार्य हैं, ये आचार्य ब्राह्मण थे इस कारण यहाँ पारसी शब्दों के कथन में दोष नहीं ।

फले प्राप्ते मूले किं प्रयोजनम् ॥

फल प्राप्त होने में मूल से क्या प्रयोजन इत्यादि ।

सम्पूर्ण ताजिक ग्रन्थों में, ताजिकनीलकण्ठी अत्यन्त प्रसिद्ध और माननीय ग्रन्थ है, जिसमें नीलकण्ठ देवरा ने वर्षाग्र द्वारा प्रत्येक वर्षका फल दर्पणान्त दर्शाया है ।

ग्रन्थकर्ता ने इस ग्रन्थ को तीन तन्त्रों में विभक्त किया है, प्रथम सहातन्त्र, जिसमें गतिस्मरण वर्षप्रक्रम प्रदम्पष्टकरण भावनायन पंचवर्गी बलप्रकार द्वारद्वारी बल प्रदक्षि, ग्रहस्वल्प भावकल, पौटशयोग, सहस्र, दशाप्रकार, दशा के अन्तर्गत मान, मान प्रयोग, दिन प्रयोग आदि गणित द्वारा दर्शाकर द्वितीय तन्त्र में सम्पूर्ण फल कथन किया है, अन्त के तीसरे प्रश्नतन्त्र में अनेक आचार्यों की सम्प्रति प्रदत्त काले प्रश्नकर्ता के सम्पूर्ण प्रश्नों के उत्तर प्रकाशित किये हैं, अन्तिम दशा तन्त्रों में ग्रन्थ ज्योतिषि जनों

परन्तु यह परमोच्चम शक्तिरूप अन्व संकृत में होने के कारण सामान्य लोगों के धीरे-धीरे की समझ में आना दुर्लभ जानकर हमने इसकी भाषाटीका करने कीजि में की है, परन्तु मैं यद्यपि इस अन्व का भाषान्तर अन्वय भी सुझाने का प्रयास है, यद्यपि यह टीका कल्प सर्वोपरि होगी है, कारण यह कि, हमने इस भाषान्तर में उदाहरण पूर्वक अन्व का सम्पूर्ण व्याख्यान बहुत परिश्रम से करने प्रयास किया है, हम स्वयं अपने भाषान्तर की प्रशंसा नहीं करने जैसे कि—

न गुणं न न शोभायां स्वयं स्वगुणवर्णनं ।
यथैव च पुरंध्रीणां स्वहस्तकुचमर्दनं ॥ ६ ॥

जिसका गुण अपने स्वरूप वर्णन करने में न गुण मग्न होना, न शब्दात्मकता है जैसे कि शियों को अपने स्वरूप मर्दन करने में कृप स्तनन्त नहीं जाना ।

ऐसे ही हम अपने भाषाटीका की प्रशंसा न करने प्रयत्न इतना तो कहना चाहते हैं कि इस भाषान्तर में हमने जहाँ पर अन्य ग्रन्थों के श्लोकों की व्याख्यान देनी पड़ी वे श्लोक लिखकर भाषा कर दिया है, जिसमें यह प्रिय शब्द सर्वोपरि हो गया है ।

वाणवाणनिधिन्द्रुद थापाडस्यासिते दले ।
त्रयोदश्यांगुरोवरी भाषारम्भ कृतो मया ॥

ममस्त पण्डितों के परमहितपी—

पण्डित नारायणप्रसाद सीतारामजी,

पुस्तक सिन्धुने का ठिकाना—

पं० शंघर शिवलाल,

किशनलाल द्वारकाप्रसाद,

मानसगढ़ छापाखाना,

कम्बई अथवा छापाखाना,

मार्टिंगा—बम्बई ।

मथुरा ।

विषय.	पृष्ठांक.	विषय.	पृष्ठाङ्क.
द्विचिदा से मुखशिल का विचार	५१	उत्तम मध्यम कंबूलों का उदाहरण	
अन्य भी फल विचार का वर्णन	५२	सचक	६४
अशुभ फल का वर्णन	५२	प्रकारांतर में मध्यम तथा धन कंबूल	
ईश्वरक योग का लक्षण	५३	का लक्षण	६५
नक्त योग का लक्षण	५३	मध्यमाधम कंबूलों का उदाहरण सचक	६५
नक्त योग का उदाहरण सचक	५३	अधमोत्तम कंबूल का लक्षण	६६
यमया योग का ल०	५४	” ” उदाहरण सचक	६७
यमया योग का उदाह० सचक	५५	अधममध्यम कंबूल लक्षण सोदाहरण	
मगड योग का ल०	५५	सचक	६७
मगड योग का दोष चक	५६	अधम कंबूल लक्षण सोदाहरण सचक	६८
मगड योग का भेद	५७	अधमाधम कंबूल लक्षण	६८
उमता उदाह० सचक	५७	अधमाधम कंबूल योग का उदाहरण	
कम्बूल योग का ल०	५८	सचक	६९
कम्बूल योग का चक	५८	उत्तमोत्तम कंबूल योग का उदाहरण	
उत्तमोत्तम कम्बूल योग का ल०	५९	सचक	६९
उत्तम, मध्यम, केवा कम्बूल योग		दूसरा अधमाधम कंबूल योग का	
का लक्षण	५९	उदाहरण सचक	७०
उत्तम, मध्यम कम्बूल का उदाहरण		दूसरे आचार्य के मत से एक राशि में	
साक्षर	५९	स्थित मन्द गृह शीघ्र गृह इनका	
उत्तमोत्तम, मध्यमोत्तम, मध्यम		मुखशिल योग	७०
कम्बूल का ल०	६०	उपरोक्त मत का दूराण सदृशान्त	७०
उत्तमोत्तम कम्बूल का उदाहरण सचक	६१	फलत्पत्ति क्षान्तार्थ कंबूल योग के	
मध्यमोत्तम " " "	६१	दूसरे भेद	७२
उत्तमोत्तम कम्बूल का उदाहरण		गैरिकंबूल योग	७३
सचक	६२	गैरिकंबूल योग का लक्षण	७३
उत्तमोत्तम कम्बूल का लक्षण	६२	गैरिकंबूल का उदाहरण सचक	७३
उत्तमोत्तम कम्बूल का लक्षण सचक	६३	मध्यम योग का लक्षण	७४
उत्तमोत्तम कम्बूल का लक्षण	६३	मध्यम योग का लक्षण	७४
उत्तमोत्तम कम्बूल का लक्षण	६३	मध्यम योग का समय विज्ञेय में फल पात्र	७६
उत्तमोत्तम कम्बूल का लक्षण	६३	द्विचिदा योग	७६
उत्तमोत्तम कम्बूल का लक्षण	६३	द्विचिदा योग	७६

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
कलि सङ्गम का शुभाशुभ फल	१०३	द्वितीय तंत्र वर्ष संज्ञम् । प्रथमाध्याय वर्षतंत्र का आरम्भ १२१ वर्षेश का निर्णय १२२ वर्षेश्वर स्थिति वरा से फल १२२ पञ्चवर्षी बलानुरोध से वर्षेश्वर फल १२३ सूर्याब्द का फल १२३ चन्द्र वर्षेश फल १२४ भौम " फल १२६ दुध " फल १२७ गुरु " फल १२८ शुक्र " फल १२९ शनि " फल १३० वर्षेश के द्वारा सम्पूर्ण वर्ष शुभाशुभ फल ज्ञान १३१ इत्यशाल द्वारा वर्षेश का फल १३१ हृदा द्वारा " का फल १३१ जन्मकाल क शुभाशुभ फल देने वाले ग्रहों के द्वारा वर्षेश का फल १३२ उदाहरण १३२ द्वितीयाध्याय । सुषहानयन प्रकार १३३ सुभा की उत्पत्ति द्वारा ग्रहों के समान गति का वर्णन १३४ श्यामी और शुभ ग्रहों की दृष्टि द्वारा सुभा का फल १३४ चतुर्थोक्ति भाव में स्थित सुभा का फल १३४ लग्न में स्थित सुभा का फल १३४ घन्त्य सुभा का फल १३५	
विवाह सङ्गम का " "	१०३		
यश सङ्गम का " "	१०४		
आशा लङ्गम का " "	१०४		
रोग सङ्गम का " "	१०५		
अर्थ सङ्गम का " "	१०५		
शत्रु मित्र दृष्टि का फल	१०६		
पुत्र सङ्गम का शुभाशुभ फल	१०६		
पितृ सङ्गम का " "	१०७		
दधन सङ्गमका " "	१०७		
गौरव सङ्गमका " "	१०८		
दम सङ्गम का " "	१०८		
कई मंत्रधितार्थ सङ्गमों का अर्थ मन्त्रों का प्रयोजन कहते हैं	१०९		
व्यगानयन प्रकार	११०		
पान्यास साधन प्रकार	१११		
व्यगमों दिवस लाने का प्रकार	१११		
अंग मान्य का निर्णय मोदाहरण	११२		
मचक्र	११२		
कान्तसंज्ञा लेने का प्रकार	११४		
व्यगम उदाहरण व चक्र	११५		
समाप्त प्रवेग व निःप्रवेग लाने का प्रकार	११५		
व्यगम गुरु से साम प्रवेग वटकाटि लाने का प्रकार	११६		
व्यगम उदाहरण	११६		
विशेष करों से आंगों का वर्ष प्रवेग व ध्रुवा- नयन	११६		
व्यगम गुरु से वर्ष लाने का ज्ञान	११७		

विषय.	पृष्ठांक.	विषय.	पृष्ठांक.
चंद्रारिष्टपवाद	१५०	दूसरा धन प्राप्ति योग	१६१
मुख्यदा कृत अरिष्ट योग	१५१	बहुत धन लाभ योग	१६२
चतुर्थाध्यायः (अरिष्टभङ्गाध्याय)		दूसरा धन लाभ योग	"
अरिष्ट भङ्ग नामक चतुर्थाध्याय का व्याख्यान	१५१	धन प्राप्ति व धन नाश के दूसरे योग	१६३
गुरु के योग से अरिष्ट भङ्ग	१५२	दुष्ट शनि के अपवाद से धन नाश योग "	
"पन्य " योग	"	जन्म समय धन भाव के स्वामी गुरु का वर्ष समय लग्नादि बारह भावों में घिराजमान होने से	
" शुभ योग	१५४	पृथक २ फल	"
राजयोग सम्बंधी शुभाशुभ फल	१५५	सदज भाव विचार	१६४
" भङ्ग	"	" संबंधी शुभाशुभ फल	"
पञ्चमाध्याय ।		ध्रातृ सौख्य योग	१६५
शुभकार विचारध्याय का व्याख्यान	१५६	" दोष्टय योग	१६६
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	दूसरा ध्रातृ सौख्य योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	ध्रातृ सौख्यकारक दूसरे दो योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	सदज भाव में दु.ग्वकारक योग	१६७
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	भाङ्गों के शुभाशुभ योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	१५७	चतुर्थ भाव विचार	१६८
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	माता पिता के अरिष्ट योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	१५८	माता पिताओं के क्लेश योग	१६९
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	शुभाशुभ योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	१५९	पंच भाव विचार	१७०
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	पुत्र प्राप्ति योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	१६०	" और पुत्र दोष्टय योग	१७१
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	दूसरा पुत्र प्राप्ति योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	शुभाशुभ योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	पुत्र प्राप्ति व पुत्र नाश योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	पुत्र नाश विचार	१७२
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	अशुभ फल योग	"
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	१६१	दुष्ट का फल	१७३
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	शनि कृत अरिष्ट योग	१७४
शुभाशुभ का शुभाशुभ फल	"	शुभाशुभ योग	१७५

विषय	पृष्ठाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
दीप्तादि अवस्थाओं का माहात्म्य	२३४	द्रोष्काण वश से लाभालाभ ज्ञान	२४३
” ” नाम	२३४	लाभ आदि के विषे समय का निर्णय	२४३
” ” वर्णन	२३४	भूत भविष्य वर्तमान प्रश्न में शुभाशुभ	
” ” फल	२३५	फल	२४४
ग्रहोंका स्वरूप वर्णन—सूर्य का स्वरूप	२३५	शुभ फल का कथन	२४५
चंद्रमा का स्वरूप	२३६	अशुभ ” ”	२४५
मङ्गल का ”	२३६	द्वितीय घर सरवन्धी पूरन	२४५
बुध का ”	२३६	पूरन दीपक के अनुसार धनलाभ योग	२४६
गुरु का ”	२३६	तृतीय ” ”	२४७
शुक्रका ”	२३७	चतुर्थ ” ”	२४८
शनि का ”	२३७	पञ्चम ” ”	२४९
राहु व केतुका	२३७	षष्ठ ” ”	२५३
भागों का लक्षण इसमें प्रथम लग्न भाव में		श्यामी सेवक और चतुष्पद का पूरन	२५५
क्या विचारना	२३७	सप्तम ” ”	२५७
धन भाव में क्या विचारना	२३८	स्त्री पूरम का पूरन	२५८
तृतीय ” ”	२३८	कष्ट स्त्री के आने का फल	२५८
चतुर्थ ” ”	२३८	कन्या परीक्षा	२५९
पञ्चम ” ”	२३८	पूरुति ”	२६०
षष्ठ ” ”	२३८	पतिव्रता ”	२६१
सप्तम ” ”	२३९	अष्टम ”	२६२
अष्टम ” ”	”	नवम ”	२६४
नवम ” ”	”	दशम स्थान संबंधी पूरन	२६६
दशम ” ”	”	एकादश ” ” ”	२६९
एकादश ” ”	”	द्वादश ” ” ”	२७०
द्वादश ” ”	”	पथिक के आगमन का पूरन	२७१
त्रयोदश ” ”	२४०	स्थानसे पथिक चला या नहीं यह पूरन	२७१
चतुर्दश ” ”	२४०	शत्रु के आने का पूरन	२७७
पञ्चदश ” ”	२४१	त्रय पराजय ”	२७८
षोडश ” ”	२४१	दुर्ग ”	२८०
सप्तदश ” ”	२४१	सोमों के शुभशुभ ”	२८१
अष्टादश ” ”	२४२	देवसेव ज्ञान ”	२८२
नवदश ” ”	२४२	श्यामी और सेवकी का पूरन	२८५
दशम ” ”	२४२	दुर्गरे श्यामी का ”	२८५

अथ ताजिकनीलकण्ठी प्रारंभ्यते

नारायणाभाषार्थममन्विता टिप्पणीसहिता च ।

भाषावाक्येन मंगलानुगमम् ।

मन्मन्त्रशंकररवीन्द्रकुजतज्जीवशुकार्कमृनुगणनाथगुरुन्मण्डपम् ॥
श्रीनीलकण्ठमुखनिर्गतताजिकस्य नारायणोऽष्टमधुनाविवृणोमि
श्रुस्त्वम् ॥ १ ॥

भा०—तस्मा, इन्द्र, शिव, मरु, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि
गणेश शीघ्र गुरुदेव को मण्डप पर है श्री नीलकण्ठ आचार्य के मुख से
निरन्तर मया पद कटितन ताजिक ग्रन्थ (नीलकण्ठी) को पं० नारायण प्रसाद
नाम से इस मनव भाषा में वर्णन करता है ।

ग्रन्थकारकृतं मंगलानुगमम् ॥

प्रणम्य हेस्त्वमथो दिवाकरं गुरोरनन्तस्य तथा पदाम्बुजम् ॥
श्रीनीलकण्ठोविविनक्ति सूक्तिभिस्तत्ताजिकं सूरिमनः प्रसादकृतं १

अन्वयः—श्री नीलकण्ठः तत् (पूर्वाचार्योक्तं) ताजिकं सूक्तिभिः
(मृदुवाचनेः) भाषा इन्द्रोभिरा विविनक्ति (प्रकटी करोति) । किं कृत्वा ।
हेस्त्वं (गणेशं) अथो दिवाकरं (मरु) तथा (तेन प्रकारेण) अनन्त-
श्रेयज्ञान्पुंगवोः पदाम्बुजं (चरण कमलं) प्रणम्य (नमस्कृत्यं) । कर्षभूतं
ताजिकं ? सूरिमनः प्रसादकृतं (मूर्यां सिद्धोः तेषां मन अनन्तः करण तस्य
प्रसादः तं करोतीति सूरिमनः प्रसादकृतं) एतद्ग्रन्थावलोकनेन विद्वन्मनः
प्रमत्तनां यातीति भावः ॥१॥

भा०—ग्रन्थकर्ता श्री नील कण्ठ देवदत्त उम प्राचीन आचार्यो के कहे
हुए ताजिक शास्त्र को सुन्दर वचनों अथवा उपजाति, इन्द्रवत्सा, वसन्ततिलक,

शालिनी, स्तम्भरा आदि अनेक उच्चम छन्दों करके प्रगट करें हैं, क्या करिके (कि) गणेश, और सूर्य, तथा अनन्त देवज्ञानाम (अपने) गुरु के चरण कमलों को प्रणाम करके, कैसा है यह (नीलकण्ठी) ताजिक ग्रन्थ ? कि ज्योतिर्विपण्डितों के मन (अन्तः करण) को प्रसन्न करता है, भावार्थ यह कि—इस ग्रन्थ के देखने से विद्वानजनों का मन प्रसन्न हो जाता है ॥ १ ॥

अथ द्वादशराशिस्वरूपमाह । तत्रादौ मेपराशिस्वरूपमाह ।

पुमांश्वरोऽग्निः सुदृढश्चतुष्पाद्रक्त्रोष्णपित्तोऽतिरवोद्विरुग्रः ॥
पीतो दिनंप्राग्विपमोदयोऽल्पसङ्गप्रजोरुत्तनृपःसमोऽजः ॥ २ ॥

अथ ग्रन्थारम्भ में बारह राशियों के स्वरूप वर्णन करते हैं—इहां प्रथम मेप राशिका स्वरूप कहते हैं, नर राशि चर संज्ञा अग्नितत्त्व, बलिष्ठ शरीर, चाण्ड, रक्तवर्ण, गर्म स्वभाव, पित्त प्रकृति, महाशब्दकारी, पर्वतचारी, क्रूर, पीतवर्ण, दिशावली, पूर्वदिशा का स्वामी विपम उदय, थोड़ी स्त्री व प्रजा मंग, मक्ष कानि (तेजदीन) क्षत्रिय वर्ण, सम (बराबर) अंग ऐसा अज कहिये मेपराशि का स्वरूप जानना, समरगिह आदि पूर्वाचार्यों ने मेप, मिह, और पन, इन राशियों के दो वर्ण कहे हैं, उमीसे मेपराशि के रक्त, पीत, दो वर्ण यहां ग्रन्थकर्ता ने कहे हैं ॥२॥

अथ त्रुपराशिस्वरूपमाह ।

नृपः म्निगःस्रोक्षिनिशीतरुत्तोयाम्येष्टमूर्ध्वायुनिशाचतुष्पातः ॥
स्नेतोऽनिशब्दो विपमोदयश्च मध्यप्रजासंगशुभोऽपि वैश्यः ॥३॥

अथ—अथ त्रुपराशि का स्वरूप कहते हैं, त्रुपराशि म्निगमज्ञक, स्त्री राशि सुखी चर, पीतवर्ण स्वभाव, कानि गदित, दक्षिण दिशाका स्वामी, सुन्दर, क्षत्रिय वर्ण, वाहनहाति, राशिवर्ती, चाण्ड चाण्ड, श्वेतवर्ण, महाशब्दकारी, दिग्ग प्रसन्न म पम स्त्री व मन्वान मंग, मोंम्यराशि, और वैश्य वर्ण है ॥ ३ ॥

अथ म्निगनाशिस्वरूपमाह ।

श्वेतवर्णमंगः शुक्रमो द्विपान्नाइन्द्रं द्विमूर्तिविपमोदयोष्णः ॥
मन्वप्रजासंगरत्न्यशुभो दीर्घम्वनः म्निग्वदिनेष्ट तथोग्रः ॥४॥

भा०—इस मिथुन राशिका स्वरूप वर्णन करने हैं—यद्विषम दिशाका स्वामी परमहंस, वायवर्ही, सुखार्थी है ममान हवा रग, दो चरण, धूप राशि, मिथुन, शिखाभाषादि शर्मान् पूरे मण्ड विर उन्नत शरण परमहंस, विषय, उदय, मम स्वभाव, मध्य श्री य पुत्रायन, जननार्थी, लक्षण, भारी मण्ड, विरला यज्ञ, शिखाः, तथा उग्र (कं) होने लहो मे युक्त मे लक्षण मिथुन राशि है जानना ॥ ४ ॥

अथ चंद्रगानिस्वरूपमाह ।

चहुप्रजाः संगपदः कुलोशरोमना पाटलहीनशब्दः ॥

शुभः कर्षी शिग्धजनाशुचारी समोदयी विप्रनिशोत्तरेशः ॥५॥

भा०—इस चंद्र गानि का स्वरूप वर्णन करने हैं—बहुत मन्वान व श्री व परण तिपदे, चर मशक, री राशि, पाटल (श्वेतम्ना) वर्ण, शब्द हीन मीम्वभवाय, ककवादि, विरला यज्ञ, जलमय, जलचारी समउदय, आत्मगर्ण, राशिकी, उद्यम दिशाका स्वामी, शौरि निधिन शब्द, ये लक्षण हूतोर्ण कहिये कर्षी राशि के है ॥ ५ ॥

अथ मिहगानिस्वरूपमाह ।

पुमान् श्विरोऽग्निदिनपतिरुजः पित्तोष्णपूर्वेशहृदश्चतुष्पात् ॥

समोदयो दीर्घरवोऽल्पसंगप्रजो हरिः शैलनृपोऽधप्रः ॥ ६ ॥

भा०—इस मिहगानिका स्वरूप वर्णन करने हैं—प्रका राशि, श्विरमंडा, अग्निमय, दिन में चलो, पानरण, कान्निगहित, पित्तप्रकृति, मम स्वभाव पूर्व दिशाका स्वामी, पृष्ट, यज्ञ, चार चरण (चतुश्चरशि) सम उदय भारी नन्द शोदी प्रजा वा श्री मज्ञ, परेनचारी, क्षत्रियवर्ण, कंस्वभाव, धूमवर्ण, धुंवांकामा यज्ञ, हरि कहिये मिहगानि के ये लक्षण हैं पूरे आचार्यों का मत-विचार यहां भी ग्रन्थकर्तान दो रद दर्शाये हैं ॥ ६ ॥

अथ कन्याराशिस्वरूपमाह ।

पागडुद्विपातस्त्री द्वितनुर्यमाशा निशा मरुद्धीतसमो दयाच्मा ॥

कन्याऽर्धशब्दा शुभभूमिवेश्या रुद्धाऽल्पसंगप्रसवा शुभा च ॥७॥

१ यहाँ पति वर्ण कदा और प्रथम रक्ष रने कहा ता दाना देय मिलाकर पाटल वर्ण जानना ।

२ श्री श्री पुरा के जोरा श्री हृद और मिथुन कहने हैं, इस कारण वहाँ मिथुन राशिका प्रयोग है ।

भा०—अथ कन्या राशिका स्वरूप वर्णन करते हैं—पिंडोरकासा रङ्ग, द्विपद (दोचरण) स्त्री राशि, द्विस्वभाव (पूर्व भाग स्थिर, उत्तर भाग चर,) दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, रात्रिमें बली, वात प्रकृति, शीतल स्वभाव, समोदयी भूमितत्व, खण्डित शब्द, सौम्यराशि, भूमिचारी, वैश्यवर्ण रूखी (कन्तिरहित) थोड़े प्रजा व स्त्री मंग, सौम्यराशि, और डीले अंग, ये कन्या राशि के लक्षण हैं ॥ ७ ॥

अथ तुलाराशिस्वरूपमाह ।

पुमांश्चरश्चित्रसमोदयोष्णः प्रत्यक् मरुत्स्निग्धरवोनवन्यः ॥

स्वल्पप्रजासंगमशूद्र उग्रस्तुलो द्युवीर्यो द्विपदः समानः ॥ ८ ॥

भा०—अथ तुलाराशिका स्वरूप लिखते हैं,—पुरुपरशि, चरसंज्ञक, सम उदय, गरमस्वभाव, पश्चिम दिशाका स्वामी, वायुतत्व, तथा वातप्रकृति विरुद्धा, अङ्ग, शब्द रहित, वनचारी, थोड़े संतान व स्त्री सङ्ग, शूद्रवर्ण, मृगस्वभाव, दिनमें बली, द्विपद (दो चरण,) और समान अङ्ग, ये तुलाराशि के लक्षण हैं ॥ ८ ॥

अथ वृश्चिकराशिस्वरूपमाह ।

स्थिरः सितः स्त्री जलमुत्तरंश निशा स्वोनो बहुपात्कफा च ॥

समोदयो वारिचरोऽतिमंग प्रजः शुभः स्निग्धतनुर्द्विजोऽलिः ॥ ९ ॥

भा०—अथ वृश्चिक राशिका स्वरूप वर्णन करते हैं—स्थिरसंज्ञा, सफेद रंग, सौ राशि, उत्तराश्व, उत्तर दिशाका स्वामी, रात्रिमें बली, शब्दहीन, बहुपात्कफ, वातप्रकृति, सम उदय, जलचारी, बहुतमन्वान व स्त्री मङ्ग, शुभ राशि विरुद्धे अङ्ग, सौम्यवर्ण वर्ण ये लक्षण अलि कश्चिे वृश्चिकराशिके हैं ॥ ९ ॥

अथ धनुर्गणेश्वरमाह ॥

ना स्वर्गभाः शैलममोदयोऽतिशब्दो दिनं प्राकृष्टदरुजपीतः ॥

गजोष्णदिनो धनुर्गणेश्वर मृतिःसंगो द्विमृतिर्द्विपदोऽग्निरुग्रः ॥ १० ॥

भा०—अथ धनुर्गणेश्वर स्वरूप वर्णन करते हैं,—पुरुष राशि, सुवर्ण मङ्गल रङ्ग, उत्तर राशि, समउदय, मार्ग शब्द, दिनमें बली, पूर्व दिशाका स्वामी, सुवर्ण रङ्ग, शब्द रहित, शीतवर्ण धर्मिस्वभाव, गरम स्वभाव, पित्त-

द्वारि, जोशो मन्वान व श्री मङ्ग, द्विस्वभाव, (पूर्वाय स्थिर उभयानं चर)
 दो धर्मः दक्षिण चर, और स्वस्वभाव, ये पशु सावित्री लक्षण हैं ॥ १० ॥

अथ मन्वराशिसंस्कृतम् ॥

शुभशरणाश्रयणो यमाशा स्त्री पिंगलुजः शुभभूमिशीतः ॥
 स्वल्पप्रजासंगममीररात्रिराशौ चतुष्पाद्विपमोदयो विट् ॥ ११ ॥

भा०—अथ मन्वरा शिस या स्वभाव कहेने हे-पर मन्वरा, पृथ्वीतन्त्र,
 रसोदय नाशरणा, दक्षिण दिशा का यमाशौ श्योगति, पिंगल पक्षीया माङ्ग,
 काशिकर्मा, शुभ भूमिशीत, मीनस्वभाव, धारें मन्वान व श्री मङ्ग जिनके
 पाशुवृत्ति, सावित्री शरीर पूजा में साव अरुण और उभयानं चरचर, विपम-
 उदय, वैदयधर्मों से मन्वराशिके लक्षण जानना ॥ ११ ॥

अथ कुम्भगाशिसंस्कृतम् ॥

कुम्भोऽपदो ना दिनमध्यसंगमसूः स्थिरः कर्तुस्वन्यवायुः ॥
 स्निग्धोऽल्पस्वगदस्वरतुल्यधातुः शुद्रः प्रतीची विपमोदयोः ॥ १२ ॥

भा०—अथ कुम्भगाशिका स्वल्प वर्णन करने हे-अपद (चरणरहित) प्रकृत-
 गति, दिनमें बली, मध्यम प्रजा व श्री मङ्ग, स्थिरसंज्ञक, विनिघ्नवर्ण, पनचारी
 परानवध, निकना शरीर, उष्ण (गरम) स्वभाव, गणितस्वर, धान पिच
 व कृत् ये मीनों ममान जिनमें ऐसी पृथ्वी, शुद्रवर्ण, विपमउदय, उग्र (क्रूर)
 स्वभाव, ये कुम्भगाशि के लक्षण हैं ॥ १२ ॥

अथ मीनराशिसंस्कृतम् ॥

मानोऽपदः स्त्री कफवारिरात्रिनिः शदच भुद्धितनुजलस्थः ॥
 स्निग्धोऽतिमंगप्रमवोऽपिविप्रः शुभोत्तराशेट् विपमोदयश्च ॥ १३ ॥

भा०—अथ मीनराशिका स्वल्प वर्णन करने हे, पैरों से हीन, स्त्रीराशि
 कफवृत्ति, जनतन्त्र, राशिमें बली, शब्दरहित श्यालाके समान रंग द्विस्वभाव
 (पूर्वादल स्थिर परदल चर) जलचर, निकनाशरीर, बहुत पूजा व स्त्री संग-
 ब्राह्मणवर्ण, सौम्य स्वभाव उत्तरदिशाका स्वामी, विपमउदय और शिथिल-
 अंग, ये मीनराशि के लक्षण हैं ॥ १३ ॥

अथ वर्षसारिणीयम् ।

मनाञ्च ध्रुवाङ्केषु जन्मवारादि संभोजनात् वर्ष प्रवेशे वारादिर्भवति ।

मनाञ्च	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
वार	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
पक्ष	५	३	४	३	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
दिना	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
मनाञ्च	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०
वार	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
पक्ष	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७
दिना	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
मनाञ्च	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
वार	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
पक्ष	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७
दिना	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
मनाञ्च	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०
वार	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५
पक्ष	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७
दिना	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
मनाञ्च	८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६	९७	९८	९९	१००
वार	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
पक्ष	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	९	८	७
दिना	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

१. ति. २. व. ३. म. ४. म. ५. म. ६. म. ७. म. ८. म. ९. म. १०. म. ११. म. १२. म. १३. म. १४. म. १५. म. १६. म. १७. म. १८. म. १९. म. २०. म. २१. म. २२. म. २३. म. २४. म. २५. म. २६. म. २७. म. २८. म. २९. म. ३०. म. ३१. म. ३२. म. ३३. म. ३४. म. ३५. म. ३६. म. ३७. म. ३८. म. ३९. म. ४०. म. ४१. म. ४२. म. ४३. म. ४४. म. ४५. म. ४६. म. ४७. म. ४८. म. ४९. म. ५०. म. ५१. म. ५२. म. ५३. म. ५४. म. ५५. म. ५६. म. ५७. म. ५८. म. ५९. म. ६०. म. ६१. म. ६२. म. ६३. म. ६४. म. ६५. म. ६६. म. ६७. म. ६८. म. ६९. म. ७०. म. ७१. म. ७२. म. ७३. म. ७४. म. ७५. म. ७६. म. ७७. म. ७८. म. ७९. म. ८०. म. ८१. म. ८२. म. ८३. म. ८४. म. ८५. म. ८६. म. ८७. म. ८८. म. ८९. म. ९०. म. ९१. म. ९२. म. ९३. म. ९४. म. ९५. म. ९६. म. ९७. म. ९८. म. ९९. म. १००. म.

१. ति. २. व. ३. म. ४. म. ५. म. ६. म. ७. म. ८. म. ९. म. १०. म. ११. म. १२. म. १३. म. १४. म. १५. म. १६. म. १७. म. १८. म. १९. म. २०. म. २१. म. २२. म. २३. म. २४. म. २५. म. २६. म. २७. म. २८. म. २९. म. ३०. म. ३१. म. ३२. म. ३३. म. ३४. म. ३५. म. ३६. म. ३७. म. ३८. म. ३९. म. ४०. म. ४१. म. ४२. म. ४३. म. ४४. म. ४५. म. ४६. म. ४७. म. ४८. म. ४९. म. ५०. म. ५१. म. ५२. म. ५३. म. ५४. म. ५५. म. ५६. म. ५७. म. ५८. म. ५९. म. ६०. म. ६१. म. ६२. म. ६३. म. ६४. म. ६५. म. ६६. म. ६७. म. ६८. म. ६९. म. ७०. म. ७१. म. ७२. म. ७३. म. ७४. म. ७५. म. ७६. म. ७७. म. ७८. म. ७९. म. ८०. म. ८१. म. ८२. म. ८३. म. ८४. म. ८५. म. ८६. म. ८७. म. ८८. म. ८९. म. ९०. म. ९१. म. ९२. म. ९३. म. ९४. म. ९५. म. ९६. म. ९७. म. ९८. म. ९९. म. १००. म.

नियं मे वार प्रयान है और जन्ममास से कभी पूर्व मास में कभी पीछेवाले मास में वर्ष प्रवेश होता है उसका प्रमाण यह है कि, “तत्कालेऽर्को जन्मकाल रविणा ग्याद्यतः समः । से एव मासो विज्ञेयो वर्षा वेशे युधै ध्रुवैम् । १” जन्मकालीन सूर्य के तुल्य सूर्य जिस महीना में हो वही महीना वर्ष प्रवेश का जानना, ऐसा पंडितों करके निश्चय किया गया है, नीचे ग्रन्थान्तर में बड़े बड़े रीति में नक्षत्र और योग निकालने की रीति भी टिप्पणी लिखते हैं गां, ‘द्योमेन्दुभिः’ इत्यादि पद्य से देखना ॥ १७ ॥

अथ तिथ्यानयनस्योदाहरणम् ।

अथ वर्षप्रवेशसमयो लिख्यते ।

अथ वर्ष प्रवेश समय लिखा जाता है,—सम्बन् १६८५ शके १५५० माघ कृष्ण सप्तमी पन्द्रहवां वर्षी २७ वर ३३ हस्त नक्षत्र घटी १७ पल २० मुहूर्ता योग घटी २७ पल २८ इस शुभ दिन में वर्ष के उदय से मत्र घटी १२ पल १८ तिथि २० में पदार्थगत वर्ष प्रवेश भया गतार्थगत ३७ या भाषा में उदात्तया लिखा हय संस्कृत में वर्ष प्रवेश समय इस कारण लिखते हैं कि—मासान्त अंगी के पौषदशो को संस्कृत में लिखने का हय मर-त्ता से जान पड़े ।

श्रीः आदिपारिव्रहाम्बरं मनसाम्भगनायः ॥ दीर्घमायुः प्रयच्छति
 वर्षेरा वर्ष विभिता ॥ १ ॥ श्री शुभविजयीय मन्त्र १६८५ नव श्रीमन्ना,
 विद्यानभुम्भुंदाय १५५० मया श्रीमन्नायने भास्करं शिशिरनीं माधोनामे
 माधनामे कृष्ण पक्षे विद्या मन्त्राय पन्द्रहामरे घटी ३७ पलेषु ३३ हस्तनक्षत्रे
 घटी १७ पलेषु २७ मुहूर्तायोगे पदयादि २७ । २८ वरनाशिकरणे पलं
 पन्धिकोपिर्वानांगमुळे नव दिनमानं पदयादि २५ । २८ दिनार्थं पदयादि १२।
 ४४ मरुगार्कगणांताः ७।२०।६ नदिने श्रीं मूर्धोदयादिष्टं पदयादि १२।
 १० । ३० नदा मेपलमनोदये पूर्वांनमनस्याष्टधिरामतंगपकाश्वप्रवेशः ३८
 गनाश्वगत ॥ ३७ ॥

अथ वर्षभंगसमये स्पष्टा ग्रहाः गाध्याः नत्रार्दी चालन माहः ग्रंवान्तरं ।
 प्रस्तारस्तु यदाग्रे स्यादिष्टं मंशोधयेदृणम् ॥ हृष्टकालं यदाग्रे
 स्यात्प्रस्तारं शोधयेद्धनम् ॥ १ ॥ अथवा । स्वेषादग्रे भवेत्पं-
 क्तिःपंकोस्वेष्टं विशोधयेत् ॥ स्वेषात्पृष्टे भवेत्पंक्तिरस्वेष्टे पंक्तिं
 विशोधयेत् ॥ ऋणं धनं तथा ज्ञेयं चालनं विधिरेव हि ॥ २ ॥

भा०—अथ वर्ष प्रवेश समय सूर्य आदि ग्रहोंका स्पष्ट करना लिखते हैं
 तहाँ प्रथम चालन प्रकार कहतेहैं, पंचांग (तिथिपत्र) में जो आठ २ दिन
 में सूर्यादि ग्रह स्पष्ट किये होते हैं उसको मन्तार वा पंक्ति कहते हैं, वह
 मन्तार जो हृष्टकाल (जन्म दिन वा वर्ष प्रवेश दिन] में आगे होवे तो
 मन्तार के चार घटी पलमें हृष्ट समय का चार घटी पल घटा देवे, जो शेष

रहें वही वारादि ऋण चालन होता है, तथा जो इष्टकाल आगे होवें और प्रस्तार पीछे होंवे तो इष्टकाल के वार घटी पलमें प्रस्तार का वार घटी पल घटा देंवे तो शंभं अङ्क वारादि धन चालन होता है, इस प्रकार ऋण धन चालन का प्रकार जानना इसका प्रयोजन आगे है ॥ २ ॥

अथ ग्रहस्पष्टीकरणमाह ।

गतेष्यदिवसाद्येन गतिर्निष्नी खपटूहता ॥ लब्धमंशादिकं
शोभ्यं योज्यं स्पष्टो भवेद्गहः ॥ १८ ॥

भा०— गत और एष्य दिवसों करके अर्थात् ऋण चालन और धन चालन में ग्रहों की गतियों गुणा कर फिर गोघुत्रिका क्रम से साठ ६० का भाग देने में जो अंश कला विकलात्मक लब्ध होवें उसको पंचांग स्थितग्रहों में घटावे वा युक्त करे अर्थात् ऋण चालन होवें तो घटावें और धन चालन होवें तो जोड़ देंवे, जोड़ने से न घटाने से वह तात्कालिक स्पष्टग्रह होवेगा यहां अर्थगति याता ग्रह और गह्वर केतु इन सबों का चालन मार्गों ग्रहों की अपेक्षा में सिपरीन जानना अर्थात् धनचालन में ऋण चालन और ऋण चालन में धन चालन एसा क्रम जानना चाहिये ।

अथ ग्रहसाधनोदाहरणम् ।

एतत् सर्वगतं नक्षत्रं नक्षत्रानुसन्धाय नक्षत्रं भवान् भोगं मायनम् ।
 गतर्चनात्पञ्चरसैषु ज्ञानस्योदयादिष्टमर्त्रीषु युक्ता ॥ भयातमंज्ञा
 भवतीति तस्य निजर्चनात्पञ्चदिनाभोगः । चतस्रेष्टशलात्प्रागेव
 ज्ञानं यदि समाचरेत् । तदष्टकालनो ज्ञानात्पञ्चशोभ्या गतर्चकम्
 भोगा पूर्ववत्कार्या ततः मायन्तु चन्द्रमा ॥ २ ॥

भा०—इस सर्वोदय नक्षत्र में चन्द्रमा के नक्षत्रों को प्रकार वर्णन करते हैं—
 १० यहाँ प्रथम भवान् भोगं मायनं करने हैं । कि—गत नक्षत्र की घड़ियों
 को ६० घड़ियों में घटा देते तो पड़ी पत्र लेते हैं । उनको सूर्योदय में छह घड़ियों
 में जोड़ देते, जोड़ने में उनकी भवात् संज्ञा होती है । और अपने नक्षत्र की
 घड़ियों को साठ में घटाई हुई घड़ियों में जोड़ देने में भोग होता है ॥ २ ॥
 जो इष्टकाल में पहिले ही नक्षत्र बनाने होतारें तो इष्टकाल घड़ियों में नक्षत्र
 की पत्र घटा देने में भवान् होता है और पत्रनक्षत्र घड़ियों को साठ में शोभ
 (घटा) कर उगी में पत्र दिन माने नक्षत्र की घड़ियों के जोड़ देने में
 भोग हो जाता है, इस प्रकार भवान् १ भोग बनाकर नक्षत्र चन्द्रमा का
 मायन करना ॥ २ ॥

अथ चन्द्रमाभनमाह ।

स्वपदम् भवानं भोगोद्भूतं तत् स्वतकत्रधिष्णेषु युक्तं द्विनिघ्नम् ॥
 नचासं शशीभागपूर्वस्तु भुक्तिः सत्त्वाभ्रष्टवेदा ४८००० भभोगेन
 भक्ताः । १६ ॥

भा०—अथ चन्द्रमा के सप्त करने का प्रकार वर्णन करते हैं—
 भवान् प्रयात् वर्ष प्रवेश समय जो नक्षत्र हो उनकी भुक्त घड़ियों को साठ
 ६० से गुणा देते फिर उगी में भोग अर्थात् छह नक्षत्र की सम्पूर्ण घड़ियों से
 भाग लेते, भाग लेने में जो लब्ध मिले, उसको ६० साठ से गुणा किये हुये
 अश्विनी आदि गत नक्षत्रों में जोड़े देते फिर जोड़े हुये में सबसे भाग लेते
 भाग लेने पर जो लब्धांक मिले सो अंश जानना, शेष बचे हुये को ६० से
 गुणा कर, उसमें भी नक्का भाग देते, लब्धांक को कला जान, एवं शेष
 अङ्कको ६० से गुणाकर नक्का भाग देने पर लब्धांक को विकला जान,
 अंशों में ३० का भाग देकर राशि निकाल लेते, अथ गति लावने का प्रकार

अथ ननुवादि भाव माथन माह ।

पूर्वं नतं स्याद्विनशत्रिम्यगहं दिवानिशोरिष्टघट विहीनम् ॥

दिवानिशोरिष्टघटापु शुद्धं सुत्रिम्यगहं त्वपरं नतं स्यात् ॥ २० ॥

भा०—अथ ननुवादि भावी वा माथन कहने है, यहाँ प्रथम 'नत' और 'अगह' माथन करने कहे है दिन रात्रि अगह में दिन रात्रि की इष्टमान की घट जाने में पूर्वगत होता है, अर्थात् दिनार्थ में दिनगत इस घटी पर जाये तो रात्रि में पूर्वगत होता है, रात्रि अगह (अथवा रात्रि में) रात्रिगत घटी पर जाये तो रात्रि में पूर्वगत होता है, तथा दिन रात्रि की इष्ट घटी में दिन रात्रि अगह पर जाये तो दिवा रात्रि परगत होता है, अर्थात् दिनगत इष्ट घटी में दिनार्थ पर जाये तो दिन परगत और रात्रिगत इष्ट घटी में रात्रि अगह पर जाये तो रात्रि परगत होता है, यहाँ पर यात्र समझा रहे कि, यहाँ रात्रि गत घटी कहा यहाँ पूर्वगत के अर्थगत मत घटी लेना, दिन रात्रि का पृथक् पृथक् विभाग करने नत माथन करना नत जो ३० में घटाने से शेष उन्नत घटजाति होता है ॥ २० ॥

अथ नतोद्वाहरणम् ।

भा०—अथ नतोद्वाहरणम्—दिनगत २५१२० उभय भाषा १२१५५ नत दिनार्थ घटी पर महा इको दिनगत उभयन घटजाति १२१६०३० को घटमा तो दिन में घटजाति ०१२५१२० को यह पूर्वगत भव ॥ १ ॥

अथ ननुवादि भाव माथन माह ।

तत्काले मायनार्कस्य भुक्त भोग्यांशसंगुणात् ॥ स्योदयात्स्वग्नि ३० लब्धं यद्भुक्तं भोग्यं स्वस्सयजन् ॥ २१ ॥ इष्टनाडीपलेभ्यश्च गतगम्यान्निजोदयात् ॥ शेषं स्वव्याहृतं भक्तमशुद्धेन लवादिकम् ॥ २२ ॥ अशुद्धशुद्धभे हीनं युक्तं तनुर्व्ययनांशकं ॥ एवं लंकोदयेर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात् ॥ २३ ॥ पूर्वपरचान्नतादन्यत्प्राग्वद्दशमं

१ अथनत वा अथरात्रिमे दिने में पूर्वा वा पार्श्वे योनि के भाग का नाम नत है ।

भवेत् ॥ सपडभे लग्नखे जाया तुर्योलग्नोन तुर्यतः ॥२४॥
 पठांशयुक्तनुसंधिरग्रे पठांशयोजनात् ॥ त्रयस्तसन्धयो भावाःषष्ठां-
 शोनैकयुक् सुखात् ॥ २५ ॥ अग्रे त्रयः पडेवंते भार्थयुक्तापरेऽपि
 पट् ॥ खेटभावसमे पूर्णं फलं सन्धिमै तुखं ॥ २६ ॥

भाषार्थः—अब लग्नादि भावों का साधन वर्णन करते हैं—तात्कालिक कष्टिये इष्टकाल के समय सायनार्क के अर्थात् स्पष्ट सूर्य में अयनांशों को संयुक्त कर देने से सायनार्क संज्ञा होती है, उस सायनार्क के भुक्त अथवा भोग्यांशों को निजदेशोदयी राशिसे गुण देने अर्थात् जब ऋण लग्नसाधन करना हो तो भुक्तांशों का ग्रहण करना और धन लग्नसाधन करना हो तो भोग्य अंशों को लेना योग्य है, उनको अपने देशीय उदयरशि प्रमाण से गुणा करे, फिर उममें तीमका भाग देवे, भाग देने से जो लब्ध अंक मिले वे सूर्य के भुक्त अथवा भोग्य अंक पत्तादि होते हैं, उसी भुक्त व भोग्य को इष्टघटी पत्तों में घटावे देवे ॥ २१ ॥ घटा देने से जो शेष रहे उममें अपने उदय से जो लब्ध गम्य राशि प्रमाण को घटावे अर्थात् जब भुक्त काल माया गया हो तब गृणित उदय से विद्यादी के उदय राशियों को घटावे और जब भोग्यकाल माया गया हो तो गृणित उदय से अगादी के उदय राशियों को घटाना चाहिये घटाने से जो शेष मिले उमको तीममें गुणा करे फिर उमीमें अशुद्धोदय से भाग देवे भाग देने से जो लब्ध अंशादि मिलें ॥ २२ ॥ उनको अशुद्ध से घटा देवे और शुद्ध में जोड़ देवे अर्थात् लग्नलग्न के मायन करने में उदय से मायन करके जितनी संख्या बाका अशुद्धोदय होवे उतनी राशि मायन करने से अंशादि का जो घटावे देवे और धन लग्न के मायन करने में उदय से मायन करके जितनी संख्या बाका शुद्धोदय होवे उमीमें जोड़ देवे, तदनन्तर उदयमें जो उममें घटा देवे, घटाने से जो शेष रहता में वह राश्यादि इष्टकाल होती है, उसी प्रकार पूर्वोक्त रीति से सायनार्क के भुक्त काल व भोग्य काल ही ज्ञात करे अंशादियों को लग्नमायन स्पष्ट करने के अर्थ से उदय से मायन से गुणा करे और उममें भाग लगाकर पत्तादि को ग्रहण करे २३ ॥ फिर उस भुक्त व भोग्य कालमें अंशोंको पूर्वोक्त वा परिचयानुव से

शोचन करे और जोर सब क्रिया पूर्ण करे अनुगत करे तो दशम भाग स्वष्ट हो जाता है, अर्थात् जो पूर्वगत होर जब पूर्वगत को दृष्टकाल कलना करके, उर्ध्व में नक्षोदयी राशियों में सूर्य के भूत कालको पनाकर शोचन करे और सप्तम भाग शेष क्रिया पूर्ण काल के समान करे, और जोर पश्चिमगत होरि जो पश्चिमगत को ही दृष्ट काल कलना करके उर्ध्व में नक्षोदयी राशियों में सूर्य के भोग्य कालको पनाकर शोचन करे अथवा सब क्रिया भल लगन के समान करती नादिये तो यह दशम भाग सिद्ध होता है अब अन्य भागों का मान कहते हैं कि, लगन में छे राशि जोड़ देने से सप्तम ७ भाग होता है, और दशम भागमें छे राशि जोड़ देने से चतुर्थे ४ भाग होता है, इस प्रकार ये चार भाग हुए, अब ज्ञाने के भाषोत्रा नायन प्रकार कहते हैं, कि-चौथे भागमें लगन घटा देते ॥ २५ ॥ उसका पहला (एटा दिग्मा) ग्रहण करने लगन में जोड़ देते तो लगन को सन्धि होती है, फिर उसमें पहला जोड़ दिया तो द्वितीय भाग होता है, इसमें पहला पुनः क्रिया तो दूसरे भागकी संधि होती है, इसी प्रकार पहला जोड़ने से तीन भाग सन्धि संधिके होते हैं, फिर पहला को एक राशि में घटाकर उसको चौथे भाग में जोड़ना प्रारम्भ करे २५ तो चौथे भागकी संधि में छे भागकी सन्धि में तीन भाग स्पष्ट होजाते हैं, इस प्रकार लगन से छे भागवतक सिद्ध करने शेष छे भागों को सिद्ध करने अथं लगन में छे राशि संयुक्त कर देते तो बाकी भाग सिद्ध होजाते हैं, जैसे - चतुर्भागे में ६ राशि मिलने से सप्तम भाग दूसरे भागमें ६ युक्त करनेसे आठवां भाग, तीसरे भाग में ६ राशि जोड़ने से नवां भाग चौथे भाग में ६ राशि जोड़ने से दशम भाग, पंचम में ६ जोड़ने से लाभ भाग, छे भाग में ६ जोड़ने से बारह भागकी सिद्ध होती है, सन्धियों में छे छे राशि जोड़ने से उस उम भागकी सन्धि होती है, इस प्रकार ये छे भाग भी सिद्ध होते हैं, जो खेट (ग्रह) भाग के समान होवे तो पूर्ण फल करे है और जो ग्रह सन्धि के समान होने तो शून्य फल करे है ॥ २६ ॥

भुक्तं भोग्यं स्वष्टकालत्र शुद्धये त्रिंशन्निघात्स्वोदयासं लवाद्यम् ।
हीनंयुक्तंभास्करतेत्तनुःस्याद्रातो लग्नं भार्धयुक्ताद्रवेस्तु ॥ २७ ॥

भा०—अब यह आशंका है कि, उक्त रीति से लाया हुआ सूर्य का

भुक्तकाल अथवा भोग्यकाल यदि वह इष्टकी घटी पलों से नहीं घटे तो किस प्रकार लग्न साधन करना चाहिये । तहां समाधान कहते हैं, कि—जब सूर्यका भुक्त अथवा भोग्य इष्टकी घटी पलों से शुद्ध नहीं होवै, तो इष्ट घटी पलको तीम से गुणा करे अनन्तर सायन सूर्य के राश्युदय से भाग लेवै भाग लेने से जो अंशाधिक लब्ध मिले उनको सूर्य में घटा देवे वा जोड़ देवै, अर्थात् जब सूर्य का भुक्त आया हो तो लब्ध हुये अंशादिकों को सूर्य में घटा देवै और जब सूर्य का भोग्य आया हो तब लब्ध हुये अंशादिकों को सूर्य के मध्य में जोड़ देना चाहिये घटाने वा जोड़ देने से ही लग्न होती है और यदि रात्रि में लग्न का साधन करना होवै तो छे राशियों को सूर्य में जोड़ देवै जोड़कर भुक्त वा भोग्य काल से लग्नका संज्ञा साधन करे और ऐसे ही रात्रि के विषे दशम लग्न के साधन में भी छे राशियों को सूर्य में जोड़ कर भुक्त काल वा भोग्यकालका साधन करे, अन्य सम्पूर्णा क्रिया पूर्वोक्त प्रकार करने से दशम लग्न सिद्ध होती है ॥ २७ ॥

अथ अयनांशसाधनम् (ग्रन्थान्तरे)

वेदाध्ययनः खरसहस्रः शकोयनांशाः ॥ तथाच ॥

भूनेत्रवेदानशकं त्रिनिशोऽयामाभनेत्रैर्विहृतोऽयनांशाः ।

त्रिशोऽर्कं राशिः स्वदलेन युक्ता तावन्मिता स्याद्विकलभिराद्या ?

भा०—प्रथम लग्न और दशम मानन के अर्थ अयनांश साधन प्रकार लिखते हैं—जाणिसान जाके में ४४४ घटाय देवै और साटका भाग देवै, भाग देवे से लग्नका जो अंश, और शेष को कला जानना, उदाहरण—इष्ट शाके १५५० से ४४४ घटाया तो ११०६ शेष रहे, उनमें ६० का भाग लगाया, जो शेष से लग्न १८ अंश, शेष २६ कला अर्थात् १८।२६ से अयनांश ग्रह लग्नसिद्ध होते, निदानदेना भावः भटी अयनांश ग्रहण करते हैं एगन्तु पत्र-दोषो न लग्नस्य तस्य शिषोषं दक्षिणदक्षिण नोरे निष्ये प्रकार अयनांश सर्वत्र इत्यादि भावो है कि इष्ट शाके में ४४४ चणमां उक्तोम घटाय, देवै, घटाने से जो लब्ध हो उक्तोम शेष से लग्न करते तो मां २०० से भाग लेवै, भाग लेने से जो लब्ध होवे अंश शेष को साट ६० से गुणाकर २०० से भाग

इसमें परमार्थिक को कला जानना, योग को ६० से गुणाकर २०० से भाग देने में परमार्थिक को विद्या जानना, ये अथवांग हृत्प्राण मर्होना की गणना अथवांग स्वाध्याय योग को जब मर्होना की मूर्ध राशि को विद्या का अर्थ उच्यते तथा तौदृश विद्या जानना और अथवांग के विकलात्मक में संयुक्त कर देने को वा-रात्रिक अथवांग होने है उदाहरण—एक आके १५५० में २२१ घटाये तो १३२९ रहे, इनको तीन से गुणा किया तो ३९८७ हुये, इनमें २०० को भी का भाग दिया, भाग देने में लब्ध १६ अंश हुये, योग १८७ को ६० से गुणा किया तो ११ । २२० हुये, २०० का भाग दिया तो लब्ध ५६ कला हृत्प्राण योग २० को ६० से गुणा किया तो ३३०० हुये २०० का भाग दिया, देने में लब्ध ६ विकल हुये तो १६ । ५६ । ६ अंशोंदि अथवांग भये यहाँ माघ भाग में मकर राशि के मूर्ध है वा-रात्रिक अथवांग स्वाध्याय है तो मकर राशि की योग्या २० को विद्या किया तो ३० हुये इसका आधा १५ जोड़ दिये ४५ हुये यह विकलात्मक ४५ अंश को अथवांग के विकलात्मक ६ में जोड़ दिये, जोड़ देने में ५१ हुये तो वा-रात्रिक अथवांग १६ । ५६ । ५६ से अथवांग भये इस प्रकार अथवांग कथन करने लगन साधन का उदाहरण निम्नवे है ॥ १ ॥

अथ लगनसाधनादाहरणम् ।

अथ लगन बनाने का उदाहरण निम्नवे है, स्पष्ट मूर्ध राश्यादि ६ । ७ । ३० । ६ इनमें अथवांग १८ । २६ हुये तो स्पष्ट मूर्ध में युक्त किया तो तात्कालिक तादना २ । २५ । ५६ । ६ हुआ यह भुक्त राश्यादि मूर्ध में राशि को छोड़ भक्त्यादि २५ । ५६ । ६ हुये इनको ३० अंशों में घटाया तो ४ । ३५४ में भोग्यांश हुये, यहाँ पर यह विचार लेना योग्य है, कि—सुक्तांश गोटे

हो और भोग्यांश अधिक हो तो भोग्यांशों पर से लगन बनाने यहाँ इस उदाहरण में भोग्यांश घटे हैं, इसकारण यहाँ भोग्यांशों पर से लगन

जन्मभूमाष्टदयचक्रम् ।					
योग	वृष	मिथुन	कर्क	मिह	कन्या
२००	२३६	२६८	३४८	३४६	२५०
मौन	कुम्भ	मकर	धन	शुक्र	तुला

का बनवाना निश्चय किया, क्योंकि योदि अंशों से किया करने में लघुता होती है, भोग्यांश ४ । ३ । ५४ को मकर राशि के उदय २९८ से गुणा किया तो १२ । ११ । २२ । १२ हुये इसमें ३० का भाग लिया भाग लेने से

में एकान पष्ठांशको जोड़
 दिया तो ५१३।४६।३२ यह
 द्वा भाव हुआ फिर एकान पष्ठांश
 को जोड़ा तो ६।०।५१।५५
 यह द्वा भाव की सन्धि हुई, इस
 इस प्रकार ये द्वा भाव स्पष्ट हुए,
 अब इन्हीं सन्धियों सहित द्वा
 भावों में प्रत्येक द्वा के जोड़ने से
 सन्धभाव सन्धि सहित क्रमशः
 गिद्व होजाते हैं इन मन्वों को सर-

अथ तन्नादिद्वादशभावः ससन्धयः स्युः												
भा	त	मै	ध	मै	सै	सै	सु	सै	सु	सै	रि	मै
ग	०	१	१	१	२	२	३	३	४	४	५	६
ज	१०	०	१३	२६	६	२२	५	२२	६	२६	१३	०
क	१०	५	४६	३६	२८	१८	८	१८	२८	३८	४६	५६
वि	१६	५३	३०	७	४४	२१	०	२३	४६	६	३२	५५
भा जा सै मू मै धा सै क सै ला सै व्य सै												
रा	६	७	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	००
प	१०	०	१३	२६	६	२२	५	२२	६	२६	१३	०
क	१०	५	४६	३६	२८	१८	८	१८	२८	३६	४६	५६
वि	१६	५३	३०	७	४४	२१	०	२३	४६	६	३२	५५

मता से जानने के अर्थ भावचक्र को देखो जिससे शीघ्र समझ में आजायेगा ॥

अथ भावस्थग्रहफलम् ।

खेटे सन्धिद्वयान्तस्ये फलं तद्भावजं भवेत् ।

हीनेऽधिके द्विसन्धिभ्यां भावे पूर्वापरे फलम् ॥२८॥

भा०—अब भावमें स्थित ग्रह का फल कथन करते हैं कि—दोनों संधियोंके बीच जो भाव हो उसी भाव में स्थितग्रह उसी भावका फल करने वाला होगा है, अर्थात् आरम्भ सन्धि से अधिक विराम सन्धि से न्यून ग्रह जिस भाव में स्थित हो वह उसी भाव का फल देता है, और आरम्भ विराम इन दोनों सन्धियों से हीन अथवा अधिक ग्रह के होने हुए पूर्व व पर भाव में फल देता है, अर्थात् जो आरम्भसन्धि से न्यून जो ग्रह होवे तो वह पूर्व भाव का फल देता है तथा जो विरामसन्धि से अधिक हो तो पर (आगे) भाव का फल देता है, तथा आरम्भ सन्धि और विराम सन्धि का प्रयोजन यह है कि जैसे जो लग्न की सन्धि से लग्न की विराम सन्धि कटती है, और दूसरे भाव की आरम्भसन्धि कटती है ॥ २८ ॥

अथ विरामस्थग्रहमाह ।

प्रसन्नान्तरं कार्यं विशान्त्या गुणितं भजेत् ।

भा०—प्रसन्नान्तरेण कार्यं विशान्त्या गुणितं भजेत् ॥२९॥

द्रोष्काण हीते हैं, तहां पहला द्रोष्काण मेवादि राशियों में मङ्गल से गण

करे, दूसरा द्रोष्काण

मूर्यमे तीसरा द्रोष्काण

शुक्रमे गणना करे

पड़ना द्रोष्काण १ मे

अथ द्रोष्काणचक्रम्											
गणितु	मे	वृ	मि	क	मि	क	तु	वृ	ध	म	कु
अयः १०	म	वृ	वृ	शु	श	र.	न	म	वृ	वृ	शु
मपना २०	र	न	म	वृ	वृ	शु	श	र.	न	म	वृ
द्वितीया ३०	शु	श	र	न	म	वृ	वृ	शु	श	र	न

१० अंश तक, दूसरा २० तक और तीसरा ३० तक जानना सो द्रोष्क चक्र में मङ्गलता से निखा है, देखलेना ॥ ३० ॥

अथ ग्रहाणामुच्चनीचराशीन्भागाश्चाह ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

सर्वादिनुं गच्छं मजोत्तनर्कं कन्याकुलीरांत्यतुलालवैः स्युः ।

दिग्भिर्गुणै रप्टयमैः शरैकैर्भूतेर्भसंख्येर्नखंसम्मिदेश्च ॥३१॥

भाषा—अथ ग्रहोंकी उच्च नीच राशियों और भागोंको कहते हैं, मूर्य आदि ग्रहोंकेमेपादि राशियोंदश आदि अंशों में परमोच्च होती है, मूर्य में राशिका उच्च कहाता है, १० अंश हो तो परम उच्च का कहाता है, दूसरा मूर्य राशिका २ अंशतक परम उच्चका कहाता है मङ्गल मकर का अंशतक परम उच्चका कहाता है, बुध कन्या राशिका १५ अंशमें परम उच्च कहाता है, शुक्रे राशिका ५ अंश पर परम उच्चका कहाता है, शुक्र मीनराशि का २७ अंश तक परम उच्च का कहाता है, और शनिश्चर राशिदश ० अंशतक परम उच्चका कहाता है, यह ग्रहोंकी उच्च और परम उच्च

अथ ग्रहाणामुच्चनीचराशीन्भागाश्चाह ।

तन्मममं नीचमनेन हीनां ग्रहोऽधिकरुचेद्रमभाद्रिशोध्यः ।

चक्रालदंशांस्ततो बलंन्यात क्रियेण तौलीन्दुभनो नवांशः ॥

अथ ग्रहाणामुच्चनीचराशीन्भागाश्चाह ।
 मूर्यमे तीसरा द्रोष्काण
 शुक्रमे गणना करे
 पड़ना द्रोष्काण १ मे

करता है, तथा ऊपरी इन्द्रा में १५ का चल और अधरें इंद्रकाण में १० का चल करने समान (जहां) में ५ का चल करता है ऐसा पूर्व भाषों ने कहा है, इस चलके चतुर्थी का विशेषता (शुक्र) चल को करना करना है।

पूर्वोक्त इन भाषों की रीतियों में जो गृह न हो वा पितृना चल गृह करना चाहिए इन बातों का न करना है—

स्वस्वाधिकारोक्तवलं सुदृष्टे पादोनमर्द्ध समभेऽरिभंगिः ॥

गवं ममान्नीय चलं तदक्षयं चंद्रोद्धृते हीनचलः शरानः ॥ १० ॥

अर्थात्— अपने अपने अधिकार में जो चल पढ़ा गया है उसको विनाग करना है, जो गृह अपने मित्रके घर में हो वह चौथाई होना चर्चा ३२३० चलको प्रत्या नगना है, समभार में हो वह आठवाँ का चल ग्रहण करना है, अन्य घरमें हो वह एक पण्य चर्चा चौथाई ७३० का चल करना है, एवं जो ग्रह अपने इन्द्रावा हो चंद्रोद्धृता मित्र इन्द्रा में हो चर्चा ३३३० का चल १११५ का समहृदामें हो तो याचन ७३०

पुष्य	३२	३५	३	४
मिथु	३०	०	३०	
वृष	२४	२४	५	२
	२४	३०	४४	
मिथु	३०	३	४	३
	३०	०	३०	
वृष	२४	३	२	२
	४४	३०	४	

का चल, इन्द्रा में वह चौथाई ३१५ का तथा जो ग्रह अपने इंद्रकाण में हो वह १० का, अपने मित्र इंद्रकाण में हो तो चौथाई ५३३० का समहृदकाण में हो तो याच ५ का चल और दृग्मन इंद्रकाण में हो तो ३३३० का गृहण करता है, एवं जो गृह अपने नवांश में हो तो ५ का, चल मित्रनवांश में हो तो ३१५ का, समनवांश में हो तो २१३ का और दृग्मन नवांश में हो तो ११५ का चल गृहण करता है, इस प्रकार इन सबके चल को एकत्र करने ४ का भाग देकर विश्राचल जानना पंच विश्वा में जो गृह कमती होगे वह हीन चली होता है ॥१०॥

अथपि इय ताजिक मन्त्र में, "दृष्टिः स्यान्नवपंचमे चलवती प्रत्यसतः स्नेहदा" इत्यादि श्लोकद्वारा आगे दृष्टि के विचार से कुम्भत्री चर्चन है तथा यहां ताजिकनीत्री विचारियों को मूहज में चौर होने को निरसते हैं

१ चर्चा का हीनोपदेश अधिक न हो चर्चा ३३३० । २ सविदावतीशेषः ३ चर्चा की चर्चा ३३३० ॥ ६ ॥
 अर्थात्— अपने मित्र में चर्चा का ग्रह हीनवती, तिसमें चर्चा १० विनायाक चर्चा १० में चर्चा ३० विनायाक पूर्ण चर्चा ग्रह जानना, यह पंचवर्गों का है ।

ये कल पाया तथा सूर्य मकर के गोमरे नक्षत्रों में है इस कारण मकर में मकर
 की से गणना करने से गोमरी राशि भीन है, भीनता स्वामी मकर है मकर
 सूर्य का मकर है, मकरनाश में २ । १२ का नक्षत्रवत् होता है, इन मकरका
 देव्य विद्या उपान्व विद्याया प्रो १२ । १३ दृष्या, इनमें पापका भाग लेने से
 मकर ८ । ३ मकर सूर्य का विश्वामर वन दृष्या, इतो मकार चन्द्र आदि ग्रहों
 का विश्वामर वन जानना, यह संवत्सरी वन कला, यो चक्रमें भी स्पष्ट है ।

अथ द्वादशराशौ विचार माह ।

त्रैत्रं होरा त्रयोद्विपन्नांगसप्तवस्वंकाराशार्कभागाः सुधीमिः ।

विज्ञानव्यालमसंस्थाः शुभानां वर्गाः श्रेष्ठाः पापवर्गाश्चनिष्ठाः ॥४१॥

भा०—अथ द्वादशराशौका विचार कहने हैं श्रेष्ठ (गृह) होरा त्रयोदश,
 चतुर्दश पंचमाश, षष्ठांश, सप्तमांश, अष्टमांश, नवमांश, दशमांश एकादशांश
 शीत द्वादशांश से श्रेष्ठ भाग जन्म समयमें विद्यमान ग्रहों के पंक्तियों के जानने
 योग्य हैं, अथ इन मर्षोंका फल कहते हैं कि—शुभग्रहों के वर्ग श्रेष्ठ हैं अर्थात्
 फलसे फलसे देने वाले होते हैं, शीत यदि शरणाहो के वर्ग हो तो अनिष्ट फलके
 देने वाले होते हैं ॥ ४१ ॥

अथ होराद्रं एककालतुर्वाग्नामर्षिशानाह ॥

शौजेरवीन्द्रोः सम इन्दुरव्योहारे गृहार्थप्रमिते विचिन्त्ये ।

द्रंक्ताणपाः स्वेषु नवर्त्त नाथास्तुर्याशकाः स्वर्त्तजकेन्द्रनायाः ॥४२॥

भा०—अथ होरा द्रं एककाल व चतुर्वाशके अविपरिवर्तों को वर्णन करते हैं,
 अथ प्रथम होराको कहते हैं शौज (विषम) राशि में, कि, तु, ध, कुं, इनमें
 प्रथम १५ अक्षतक सूर्यका होरा, फिर शेष १५ अक्षत अर्थात् १६ से ३०

अक्षतक चंद्रमाका होरा कहिये,
 और मकराशि वृ क क्रं. वृथिक
 म मी. इनमें पहले १५ अक्षतक
 चंद्रमाका होरा, शेष १५ अक्षत-
 तक सूर्यका होरा होता है अथ,

अथ होराश चक्रम्											
श	म	व	मि	क	वि	क	प	प	म	कु	मी
११	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४

द्रोष्काणपति को कहते हैं, क्रि-
पक राशिके ३० अंशों में तीन
द्रोष्काण होते हैं उनमें पहला १०
अन्यातक, दूसरा २० अन्यातक,
और तीसरा ३० अन्यातकहोता है

अथ तृतीयांशेश (द्रोष्काण) चक्रम्

अं	मे	बु	मि	के	सि	के	तु	बु	ध	म	कु	मी
१०	मे	शु	बु	च	सू	बु	शु	म	बु	श	श	बु
२०	सु	बु	शु	मे	बु	श	श	बु	मे	शु	बु	च
३०	बु	श	श	बु	म	शु	म	च	सू	बु	शु	म

जिम ग्रहका द्रोष्काण विचार करना हो तो यदि वह पहले द्रोष्काण में हो तो
यह ग्रह जिम राशि में वर्तमान हो उसीका स्वामी द्रोष्काण पति होता है.

जो दूसरे द्रोष्काणमें होतो
वर्तमान राशिमें पांचवीं
राशिका स्वामी द्रोष्काणपति
होता है, तथा जो तीसरे द्रो-
ष्काणमें होतो नवीं राशिका
स्वामी द्रोष्काण पति होता

अथ चतुर्थांशेश (केन्द्रपति) चक्रम्

अं	मे	बु	मि	के	सि	के	तु	बु	ध	म	कु	मी
७।३०	मे	शु	बु	च	सू	बु	शु	म	बु	श	श	बु
१५।००	मे	सू	बु	शु	मे	बु	श	श	बु	मे	शु	मे
२३।३०	शु	मे	बु	श	श	बु	मे	शु	बु	च	सू	बु
३०।००	श	श	बु	मे	शु	बु	च	सू	बु	शु	मे	बु

है अथ चतुर्थांश स्वामियों को कहते हैं, राशिके ३० अंशोंका चतुर्थांश ७।
३० अन्यातक वहाँ पहला चतुर्थांश ७। ३० अन्यातक, दूसरा १५ अन्यातक,
तीसरा २२। ३० अन्यातक, चौथा ३० अन्यातक, चतुर्थांश जानना, जो ग्रह
पहले चतुर्थांश में हो तो प्रथम केन्द्र अर्थात् उसी राशिका स्वामी चतुर्थांश
पति होता है. दूसरे चतुर्थांश में हो तो दूसरा केन्द्र अर्थात् वर्तमान राशि से
चौथे घरका स्वामी चतुर्थांश पति होता है तीसरे चतुर्थांश में हो तो तीसरे
केन्द्र अर्थात् वर्तमान राशिमें मात्रसे घरका स्वामी चतुर्थांश पति जानना
चौथे चतुर्थांश में हो तो चौथा केन्द्र अर्थात् वर्तमान राशि में दशमं घरका
स्वामी चतुर्थांश पति जानना होगा. द्रोष्काण व चतुर्थांश को मंगलता से जानने
से होगा. द्रोष्काण और चतुर्थांश पति चक्र भी लिख दिये हैं ॥ ४२ ॥

अथ पञ्चमांशेशद्वादशांशेशानाद ॥

श्रीज्योतिषि पंचमांशेशः कुजाकीज्यज्जभार्गवः ।
सप्तमे चतुर्थांशेशः स्वभास्सृताः ॥२३॥

॥२३॥ — इ. पञ्चमांशेश और द्वादशांश पतियों कहते हैं—राशि के
पहले द्रोष्काण में होतो अंशोंका होता है, वहाँ विषम राशि में पहले

रविवर्ग का स्वामी मंगल ग्रह का स्वामी, नीचर्ग का बुधग्रह, धीर्ग का बुध, धीर्गर्ग का बुध, धीर्ग, धीर्ग स्वामी में स्वयं विद्योत्प (उन्मत्त) जानना, जैसे मंगलराशि में रहित होने पर

शुक्र का स्वामी शुक्र, धीर्ग	शुक्र स्वामी शुक्र
शुक्र, धीर्ग का स्वामी, धीर्ग	शुक्र स्वामी शुक्र
धीर्ग का स्वामी, धीर्ग का स्वामी	शुक्र स्वामी शुक्र
शुक्र स्वामी, शुक्र स्वामी	शुक्र स्वामी शुक्र
रविवर्गर्ग का स्वामी	शुक्र स्वामी शुक्र
मङ्गल स्वामी मंगल	शुक्र स्वामी शुक्र

राशि चरणों को करने है कि-
 १ राशि के ३० अंशों का भाग ३०
 २ भाग ३० अंशों का भाग ३०
 ३ भाग ३० अंशों का भाग ३०

विद्या से १२ भागों में होते हैं, जिसका एक चौथा हिस्सा है देव लेना, जिस राशि में जो ग्रह स्थित होते हैं वहिले भागों में उनी राशि का स्वामी भागों में ही होता है दूसरे भागों में स्वयं बुध राशि का स्वामी भागों में जानना इत्यादि क्रम से सब भागों में विचारों का जानना ४३

सब पदमसाहसिकश्रीकादशशिक्षानयनमाह ।

लघीकृतो व्योमचरोगशैलवस्वकदिन्दुद्रगुणाःस्वराभिः ॥

भक्रोगतास्तर्केनगाष्टनन्ददिन्दुद्रभागाः कुयुता क्रियात्सुः ॥४४॥

भा० एक पञ्च, मन्मथ, स्वर्ग, नरमथा, दशमंश, एकदशंश, इनके अर्थपरिचयों को करने हैं, गृह की राश्यादि अंशकरे अर्थान् राशि को ३० से गुणा देवे फिर उसमें राशि के भाग स्थित हुए अंशोंको जोड़ देवे तबन्तर उसको कलात्रिकला गतिव छे स्थान में बगवत रवापन कर्के क्रम से दो भाग २ । १० । ११ इन अंशों से गुणा करे फिर ३० से भाग लेवे भाग लेने से जो लघु हो वह मत ६।७।८।९।१०।११, भाग होते हैं इन सबों में एक को जोड़कर मेष से गणनाकरे गिनतीमें जहाँ विश्राम हो उनी राशि का स्वामी स्वयं बुध का स्वामी होता है, यदि जोड़ने पर चारह से अधिक अंश हों तो चारह से भाग लेना इस प्रकार द्वादशवर्गी बनाना ॥ ४४ ॥

अत्रोदाहरणम् ।

अब द्वादश वर्गी का उदाहरण लिखते हैं, यथा स्पष्ट सूर्य राश्यादि ६।७।

अथ द्वादशवर्ग

प्र	सू	न	म	व	गु	शु	श
प्र	ग	व	गु	गु	गु	म	शु
द्वी	च	सू	सू	न	सू	सू	
द्वे	ग	गु	गु	म	गु	च	शु
पत्र	म	गु	गु	गु	उ	शु	सू
पत्र	गु	श	गु	गु	सू	म	शु
पत्र	म	श	व	शु	व	श	शु
मत्तम	म	शु	गु	श	गु	श	म
पञ्चम	गु	श	गु	म	शु	गु	शु
सप्तम	गु	च	सू	न	शु	श	गु
अष्टम	गु	श	सू	म	गु	श	गु
नवम	गु	च	म	गु	न	शु	गु
दशम	म	शु	श	म	म	सू	गु

३०।६ यह मकर राशि का स्वामी शनि है तो रवि का गृहेश शनि हुआ, अब होरा को कहते हैं कि सूर्य मकर राशि के प्रथम होरा अर्थात् १५ अंश के अन्तर्गत है, इस कारण मकरराशि सम है सम राशि में पहला होरा चन्द्रमा का होता है, इससे यहां सूर्य चन्द्रमा के होरा में है, अब द्वाकाण का उदाहरण कहते हैं कि रवि मकर राशि के प्रथम द्वाकाण में है इससे द्वाकाण का स्वामी शनि है, अब चतुर्थांश का उदाहरण कहते हैं, सूर्य मकर के दूसरे चतुर्थांश में है इस कारण मकर से चौथी राशि मेष है उसका स्वामी मङ्गल चतुर्थांश पति हुआ

अब पंचमांश का उदाहरण कहते हैं रवि मम राशिके दूसरे पंचमांशमें वर्तमान है इस कारण ममराशि का दूसरा पंचमांश पति बुध है तो यहां पंचमांश पति बुध। अब षष्ठांश उदाहरण कहते हैं स्पष्ट सूर्य ६।७।३०।६ यहां राशि को ३० में गुणा किया और ७ अंश जोड़ दिये तो २७.७।३०।६ इसको ६ से गुणा किया तो १६६५००३६ यह ध्रुवाङ्क हुआ उसमें ३० तीम का भाग दिया तो उत्तर ५५ हुए इसमें १ मिला दिया तो ५६ हुए उसमें १२ का भाग दिया शेष ८ मिले मेष में आठवां राशि मेष है मेष का स्वामी मङ्गल है तो मङ्गल षष्ठमांश पति हुआ उसी मङ्गल सप्तमांश पति का उदाहरण भी जानो ।

अथ द्वादशवर्गफलमाह ।

सूर्यं द्वादशवर्गाम्याद् प्रहाणां वलमिद्वये ।
 मेषोच्चमित्रशुभाच्छेष्टा नीचामिकृन्तितांशुभा ॥ ४५ ॥

भावार्थः—एतद् द्वादशवर्गफल को कहते हैं, एतद् प्रकार प्रदीप्त वलकी मिद्वि है एतद् द्वादशवर्ग फल है वरु क्रान्ति वर मित्र शुभों में शत्रु फलकी देने वाली

होती है और नीच श्रेण, पापगण की अशुभ फलपरी देनेवाली होती है अर्थात् जिस गृह की द्वादशवर्गी करनी हो वह अपने एकाग्रि य उपागण अथवा शुभ गृह के वर्ग में विद्यमान हो वह वह गृह शुभ फल का देने वाला जानना, और यदि वही गृह नीच वर्ग व शुभ वर्ग अथवा पाप गृहों के वर्ग में विद्यमान हो वह वह अशुभ फल का देने वाला जानना ॥ ४५ ॥

द्वादशवर्गी शुभ व पापगृहों के फलों का निरूपण ।

एवं द्वादशवर्गी शुभपापवर्गपंक्तिद्वयं वीक्ष्य शुभाधिकत्वे ।

दशाफलं भावफलश्च वाच्यंशुभं त्वनिष्टं त्वशुभाधिकत्वे ॥४६॥

भाषार्थ—द्वौक्त प्रकार से गृहों के शुभ व पापगणों की दोनों पंक्तियों को देखी शुभगृह की १५ हो तो दशावर्गी और भावों का फल शुभ कहना चाहिये और जो पापगृह अधिक हो तो दशावर्गी और भावों का फल अशुभ कहना चाहिये अर्थात् द्वौक्त प्रकार से गृहों की द्वादशवर्गी करे और शुभ गृहों की संख्या अल्प लिये भाग हो की संख्या अल्प लिये फिर दोनों पंक्तियों का अन्तर करे यदि अन्तर करने से शुभ गृह अधिक होयें तो उस गृहकी दशाका फल और भावों का फल शुभ जानना और जो पाप गृह अधिक हो तो दशा का फल, भाव का फल अशुभ फल जानना ॥ ४६ ॥

एह भेद से और सौम्य पाप गृहों के भेद से फल का तार लम्प ।

करोऽपि सौम्योऽधिक वर्गशाली शुभोऽतिसौम्यःशुभस्त्रेचरश्चेत् ।

सौम्योपि पापाधिकवर्गयोगान्नेष्टोऽतिनिघ्नःखल पापस्त्रेष्टः ॥४७॥

भाषार्थ—जिस गृह की द्वादशवर्गी करनी हो जो वह पाप गृह भी होवे परन्तु द्वादशवर्गी में अच्छे गृहोंके अधिक वर्गोंसे युक्त होवे तो अच्छे फल का देने वाला होता है और जो शुभगृह द्वादशवर्गी में शुभ गृहों के अधिक वर्गों से युक्त होवे तो वह अत्यन्त अच्छे फल का देने वाला होता है तथा यदि शुभ गृह भी द्वादशवर्गी में पापगृहों के अधिक वर्गोंसे युक्त होवे तो वह अशुभ फल का देने वाला होता है और यदि पापगृह द्वादशवर्गी में पापगृहों के अधिक वर्गों से युक्त होवे तो वह अत्यन्त दृष्ट फल का देने वाला होता है ॥ ४७ ॥

शार्प, शार्पोंका विचार, मादय कम विना विचार कम कर दानता) इन
मनों का विचारन करे ॥ ५० ॥

पतुं और पंचम भाग से विचारणीय विषय ।

पितृवित्तनिधिचेत्रं गृहं भूमिधत्तुर्गतः ।

पुत्रं मंत्रधनोपायमर्भनिवात्मजेक्षणम् ॥ ५१ ॥

भा०—पिता का द्रव्य, गृहो दृष्टे द्रव्य (मांडाआदि) ज्यों पादि,
पृथिवी स्थाप. इन मनोंका विचार जैसे भाग से करना, पंचम पर से मन्त्र
(गुप्त संभाषण) धन स्थापका उपाय, मर्भ, पिता धर्मि, पृथ स्थाप, इन मनों
का अन्वेषन करे ॥ ५१ ॥

दृष्टे और मानवें भाग से विचारणीय विषय ।

रिपो मातुलमान्धारिचतुष्पाद्वन्धभीर्त्रिणान् ।

घृने क्लत्रवाणिव्यनष्टविस्मृतिमंकथा ॥

हृताश्वकलिमार्गादि चिन्त्यं घृने ग्रहोऽशुभः ॥५२॥

भा०—द्वय मने या मानवें भाग में क्या विचारना चाहिये नों लिखने
हैं माता, भोग, दृढमन, गाय, आदि बीमारे, परधीनता, नापन्नय ने भय, घान,
इन मनोंका विचार दृष्टे भाग से करना । मानवें परमं, र्यो, व्यापार, नष्टवस्तु
विस्मरण होना, हरी दृष्टे द्रव्य के मार्ग का विचार, फलद, यात्रा आदि, इन
मनोंका विचार करना, मानवें, परमं शुभ व पाप कोई ग्रह विद्यमान होवे नों
अशुभ फलका देने जाना होता है ॥ ५२ ॥

आठवें भाग से विचारणीय विषय ।

मृत्यो चिरंतनं द्रव्यं मृतचित्तं रणे रिपुः ।

दुर्गस्थानं मृतिर्नष्टं परीवारो मनोव्यथा ॥ ५३ ॥

भा०—आठवें पर में बहुत कालका द्रव्य, मरे दृष्टे का धन, संग्राम,
दृढमन, कोटस्थान (किला आदि) मरना, वस्तुका नष्ट होना कुटुम्ब मनकी
व्यथा (पीड़ा) इन मनोंका विचार करे ॥ ५३ ॥

नवें और दसवें भाग से विचारणीय विषय ।

धमेरतिस्था पंथा धर्मोपायं विचिन्तयेत् ।

व्योम्निमुद्रां परं पुण्यं राज्यं वृद्धिं च पेतृकम् ॥ ५४ ॥

भा०—नवम भाव में, रमण करना, तथा यात्रा का विचार, धर्म साधन, इन सर्वोंका चिन्तवन, करै, दशमें भवन में मुद्रा (राज मुद्रा) परम पुण्य, राज्य, भाग्य वृद्धी, पितृ सम्बन्धी विचार इन सर्वोंका चिन्तवन करै ॥ ५४ ॥

ग्यारहवें और बारहवें भाग का विचारणीय विषय ।

आये सर्वार्थधान्यार्थ कन्यामित्रचतुष्पदः ।

राज्ञोवित्तं परीवारो लाभोपायांश्च भरिश ॥ ५५ ॥

व्यये वैरिनिरोधार्ति व्ययादि परिचिन्तयेत् ॥ ५६ ॥

भा०—ग्यारहवें घरमे सव द्रव्योंका प्रयोजन, धान्यका मौल्य, कन्या, मित्र, चौपाये, गान द्रव्य कुटुम्ब विचार बहुत प्रकार के लाभ होने के उपाय इन सर्वोंका चिन्तवन करै ॥ ५५ ॥

बारहवें घर में दुश्मनों द्वारा किया हुआ अपराध, घनी पीडा खर्च आदि इन सर्वोंका विचार करना चाहिये ॥ ५६ ॥

बलिष्ठ ग्रह के लक्षण ।

लग्नाम्बुद्यूनकर्माणि केन्द्रमुक्तं च कंटकम् ।

चतुष्टयं चात्रस्यैतो वली लग्ने विशेषताः ॥ ५७ ॥

भा०—पदना, चौपाया, मानवां दशवां इन स्थानों को केन्द्र, कंटक और चतुष्टय कहते हैं, उम केन्द्र में स्थित ग्रह बनवान जानना तथा चौथे मातर्वे दशवें स्थान की अपेक्षा लग्न में स्थित ग्रह अधिक बलवान होता है ऐसा विश्वास है ॥ ५७ ॥

ग्रह के शुभ स्थानों तथा बलिष्ठ योगका वर्णन ।

लग्नकर्मान्तनुषार्य मुतांकस्थो वली ग्रहः ।

यथोदितं विशेषेण सुत्रिवित्तेषु चन्द्रमाः ॥ ५८ ॥

भा०—लग्न, दशवां मातर्वं चौथा ग्यारहवां पांचवां और नववां इन स्थानों को विशेष रूप से बलवान् होता है —तथा भी आदिम स्थानों को उन्नयन करके दशवें स्थान की अपेक्षा लग्न में स्थित ग्रह अधिक बलवान् होता है उमकी अपेक्षा चतुष्टय ग्रह बलवान् होता है, तथा चतुष्टय ग्रह की अपेक्षा ग्यारहवें

चाहे दिन हों चाहे रात्रि धन आदि चार राशियों के शनि, मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा यह त्रिराशिप होते हैं इसको स्मृष्ट जानने के अर्थ त्रिराशिप चक्र भी लिख दिया है ।

पूर्वोक्त त्रिराशि पतियों का प्रयोजन ।

वर्षेशार्थं दिननिशा विभागोक्तास्त्रिराशिपाः ।

पञ्चवर्गी वलाद्यर्थं द्रेष्काणेशान् विचिन्तयेत् ॥ ६१ ॥

भा०—दिन व रात्रि के विभाग से वर्षेश जानने के अर्थ त्रिराशि पतियों को कहा है, और पञ्चवर्गी वलादिकों अर्थ पूर्वोक्त द्रेष्काण स्वामियों का चिन्तन करे ॥ ६१ ॥

वर्षेश निर्णय के लिये पंचाधिकारी ।

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपो मुन्थहाधिप इति स्त्रिराशिपाः ।

सूर्यराशिपतिरन्हचन्द्रमाधीश्वरोनिशि विमृश्यपञ्चकम् ६२

भा०—(१) जन्म लग्न का स्वामी (२) वर्ष लग्न का स्वामी (३) मुन्था का स्वामी (४) त्रिराशिप (५) दिन में वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य राशि का स्वामी और रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा की राशि का स्वामी ये ही पाँचों वर्ष पति होने के अधिकारी हैं, ॥ ६२ ॥

वर्षेश निर्णय ।

वर्नीय एषां तनुमीक्षमाणां मवर्षपो लग्नमनीक्षमाणः ।

नेवाद्रयोदृष्टयतिरेकतः स्याद्वलस्य साम्ये विदुरेव माद्याः ॥६३॥

भा०—इन पंचाधिकारियों का दृष्टि वन व पंचांगी वल को देखकर वर्षेश निर्णय करने है, पूर्वोक्त इन पाँच अधिकारियों के मन्थ में जो ग्रहपञ्च-पति में दृष्टि वलमान होकर लग्न को देखता हो उसको वर्ष का स्वामी मानना चाहिये, तब को नहीं देना तो वर्ष पति नहीं होता है और जो पञ्चा-धिकारी इतने का बल समान हो तो लग्न पर जिसकी दृष्टि अधिक हो उसको वर्ष का स्वामी मानना है ॥ ६३ ॥

यदि दो लग्न में तीन वर्षों होगा उसकी आशंका ।

हनादि सान्देऽप्यथ निर्वलन्ते वर्षाधिपः स्यान्मुखदेश्वरस्तु ॥

यदि चक्रं तनुमीक्षमाणां वीर्याधिकोऽब्दस्य विभुर्विचितयः ६४

भा०—पूर्वोक्त तर्कों परीक्षाओं की दृष्टि लग्न पर पमार हो
 आदि र र में पल भी पमार हो, अथवा तर्कों निर्धनी होने तो पन्धहास
 स्वामी वर्षेन ज्ञाना के पांच परीक्षाओं में कोई भी लग्न हो नहीं
 देखा हो, तो उनके को अस्मिन् पणवार, ही नहीं स्वामी विनयन करना
 चाहिये ॥ ६४ ॥

लग्न आचार्यों के मत में दृष्टि बलकी समता का वर्णन ।

बलादिनाम्ये रविराशियोंऽन्दि निशीन्दुराशीडिति केचिदाहुः ।
 येत्यशान्तोऽन्दविभुःशशी न वर्षाधिपश्चन्द्रमपोऽन्यथात्वे ॥६५॥

भा०—तर्कों परीक्षाओं का पनर्तों में पल समान है, तथा दृष्टि लग्न
 पर समान दृष्टि हो तो ऐसी अवस्था में दिन में वर्ष प्रवेश होने में पूर्व नियत
 राशिका स्वामी वर्षेन जानना राशि में वर्ष प्रवेश हो चन्द्रमा जिन राशि पर
 नियत हो उस राशिका स्वामी वर्षेन जानना चाहिये, ऐसा कोई आचार्य
 करते हैं जो वर्ष का स्वामी कितों प्रकार में चन्द्रमा हो तो चन्द्रमा जिन ग्रह
 के साथ स्थानान्तरण करना हो वह वर्षेन जानना अन्यथा (इत्यशान्त के अभाव
 होने से) सर्वत्र चन्द्रमा कितों ग्रह के साथ स्थानान्तरण न करना हो तो चन्द्रमा
 जिन राशि पर गिया हो उस राशिका स्वामी वर्षेन जानना चाहिये ॥ ६५ ॥

मुन्यता के जानने के प्रकार का वर्णन ।

स्वजन्मलगात्प्रतिवर्षमेकैकराशिभोगान्मुथहाभ्रमेण ।

स्वजन्मलग्नं रवितष्टयात्शरद्वृतं साभमुखेन्थिहास्यात् ॥६६॥

भा०—उपनी जन्म लग्न में प्रत्येक वर्ष एक एक राशि भोग करना हुआ
 मुन्यहा परिभ्रमण करता है, जैसे जन्म समय कन्धा लग्न है, तो प्रथम वर्ष में
 मुन्यहा कन्धा राशि पर जानना दूसरे वर्ष में तुला राशि पर तीसरे वर्ष वृश्चिक
 पर इत्यादि बहुत वर्ष संख्या होने से मुन्यहा के ल्यावने का प्रकार मरुलता से
 कहते हैं, कि जन्म समय जो लग्न हो उसकी संख्या में गत वर्ष संख्या को
 जोड़ देवे अनन्तर उसमें बारहका भाग देने में जो शेष शून्य रहे उमी संख्या
 वाली राशि पर मुन्यहा की स्थिति जानना, (गतात्ममाजन्मलग्ने योज यित्वा
 नतःपरम् । आदर्शेनैव विभजेच्छ्रेणं मुन्या वदेःशुनीः) अर्थात् गत वर्षों को

जन्म लग्न को जोड़कर १२ का भाग लेने से शेष राशि पर मुन्थहा की स्थिति पंडितों ने कही है ॥ ६५ ॥

मुन्थहा जानने का उदाहरण ।

जन्मलग्नराश्यादि ५१२०।५३।५० इसमें गतवर्ष संख्या ३७ को जोड़ दिया तो ४२।१०।५३।५० हुये वाग्रह का भाग लेने से शेष राश्यादि ६।१०।५३।५० अंक हुये तो यहाँ कन्यागत तुला राशि पर मुन्थहा १० अंश ५३ अंश ५० विकला में जानो ।

गह के मुख पीठ व पृष्ठ के लक्षण ।

भोग्याराहोर्लवास्तस्य मुखं पृष्ठं गता लवाः ।

ततः सप्तमभं पुच्छं विमृश्येति फलं वदेत् ॥ ६७ ॥

भाषार्थ—गह जिस राशि में स्थित होवे उसके भोग्य अंश मुख संज्ञक बने जाते हैं तथा उस गह से सातवीं राशिपुंल संज्ञक हैं, यह विचार कर मुन्थहा के फल को कहें ॥ ६७ ॥

अथ वर्षेश निर्णय का उदाहरण ।

यस वर्षेश निर्णय का उदाहरण करने है तथा उस वर्ष में उत्पन्न लग्नराश्याधी संवत्, मेषा उदाहरणार्थी गुरु, चंद्रादि सूर्य	पंचविक्रागिणः	वर्षेश निर्णय ।
१	व	एषा पंचविक्रा
२	म	गीणां मध्ये लग्ने
३	ज	क्षमाण त्वाहला
४	प	विक्रवा द्वपेशी
५	श	शनिः वर्षे विश्वे
६	र	१४९

यस वर्षेश का उदाहरण करि है उन पंच विक्रागिणां में सप्तम अधिक पंच अंश है उनि का संवत् १४९१० है और लग्न को पूर्ण दृष्टि में देयता है, इस उदाहरण से इन पंच विक्रागिणां में लग्नको देयता और अधिक बर्ती होने से वर्ष का उदाहरण करि है ।

उत् के विज्ञापनों का साधन ।

एषां पंचा विक्रागीणां अष्टाणां वलमंयुतय ।
सुतेसात् फलं वदे वलं विश्वान्मकं बुधे ॥ ७ ॥

भा०—यह वर्ष चित्तमे विद्या ही मो कहते हैं—पूर्वोक्त इन पंचाधिकारी
 कर्तों से विद्या यत्न को जोड़ देने जोड़कर पांचवा भाग देवे भाग देने से
 जो लक्ष्य लक्ष्य हो यह वर्ष विद्या यत्न पंडितो ने कहा है ॥ १ ॥ तत्र पूर्वोक्त
 पंचाधिकारियों के पंचपत्नी विद्यायत्न को जोड़ देने में वर्ष संख्या ४८१५५ में
 ५ वा भाग देने से लक्ष्य ६ । ४५ यह विद्या कृप, अर्थात् तने ६।४५ विद्या
 वर्ष आरम्भ ॥ १ ॥

श्रीगर्गान्वयभूषणो गणितविचिन्तामणिस्तत्सुतोऽनन्तोऽनन्त
 गतिव्यधास्त्रलामतिव्यस्ये जनुः पद्धितम् । तत्सनुः खलु नील-
 कंठविप्रधो विद्वच्छिवानुज्ञया सतुष्ट्यै व्यदधद् ग्रहप्रकरणं
 संज्ञाविवेकेऽमलम् ॥६८॥

अन्वयः—श्रीगर्गान्वयभूषणः (श्रीगर्गान्वयवंशे श्रेष्ठः) गणितविद्वि गणित
 वेत्तीति गणिर्भावतः श्रोतःशास्त्रविद्वः) चिन्तामणिरिति नामा कश्चिदासीत्
 सन्सुतः) अनन्तमतिः (अनन्तगणमन्त्रमतिः) अनन्तनामा खलमवध्वस्यै
 (दृष्टमनिरासाय) सनुःपद्धति (अल्पज्ञवान्साडेस्तज्जन्मकालमधिकृत्य
 शुभाशुभान्तरूपकंशास्त्रम्) व्यधात् (कृतवान्) सनुः (निश्चयेन) तत्सनुः(तस्य-
 पुत्रः) नीलकण्ठविप्रधुः विद्वच्छिवानुज्ञया सतुष्ट्यै (सतीमन्तोपार्यम्)
 मंज्ञाविवेके मंज्ञातन्त्रे) यमलं (निर्मलं) ग्रहप्रकरणं व्यदधत् रचितानित्यर्थः ॥६१

इति श्रीदिवज्ञानंतसतनीलकंठदेवज्ञविरचितायां नीलकण्ठ्यां

संज्ञा तन्त्रे ग्रहप्रकरणं प्रथमम् ॥ १ ॥

भा०—श्रीगर्गान्वय के वंशमें श्रेष्ठ, गणित शास्त्र के जानने वाला चिन्ता-
 मणि नाम कोई पंडित हुआ तन्हीं के पुत्र अनन्तगुणों से सम्पन्न मति वाले
 अनन्तनामक ने दृष्टों के मत को दूर करने के अर्थ जानक शास्त्र को रचा तिस
 अनन्त देवज्ञकेपुत्र विशेष विद्यवाले नीलकंठ नामक विद्वान ने शिवजीकी आज्ञा
 से सज्जनों के सतोष के अर्थ मंज्ञातन्त्र में सुन्दर ग्रह प्रकरण को रचा ॥६६॥

इति श्रीवंशावरण्या ज्योतिर्वित्पंडित नारायण प्रसाद कृतायां ।

नीलकंठताजिकग्रंथे नारायणीभाषाटीकायां मंज्ञातन्त्रे ग्रहप्रकरणं प्रथमम् ॥१॥

अथ द्वितीयप्रकरण प्रारभ्यते ॥ २ ॥

सूर्य के स्वरूप का वर्णन ।

सूर्यो नृपो नाचतुरस्रमध्यं दिनेद्रदिक् स्वर्णचतुष्पात्रेः ।
सत्वं स्थिरस्तिक्कपशुच्चित्तिस्तु पित्तं जरत् पाटलमूलवन्धः १

भाः—सूर्य अत्रियवर्ण पुरुपराशि, चौकोनस्वरूप, मध्याह्न समय में बनवान. पूर दिशा का स्वामी, सुवर्ण का ईश, तथा चौपाये हाथी घोड़ा आदि का मन्त्र क्रम, सतोंगुण, स्थिर स्वभाव, तीखा रस प्रिय जिसको, पशुभूमि-चारी, दिग्मन्त्रकृति, वृद्धाश्रया, पाटल (ताल सफेद मिला) वर्ण, मूल से उदग्धन धानपाटिकों का अविष्टाना, वनचारी जानना, यह सूर्य का स्वरूप कहा ।

चन्द्रमा के स्वरूप का वर्णन ।

वैश्यः शशी स्त्री जलभृस्तपस्वी गौरोपराह्णमुदधातुसत्त्वम् ॥
वाय्वादिक्स्लेष्मभुजंगरूप्यस्थूलो युवा चारशुभः सिताभः ॥२॥

भाषार्थ—वैश्यजाति, शमीमंजक, अथवा स्त्रियों का प्रिय, नीली भूमि में मन्त्र करने वाला, तपस्वी, गौवर्ण, परादकाल में बनवान्, जलचारी कांस्य र रस आदि धातुओं का स्वामी, सतोंगुणी, वायुदिशा का स्वामी, कफप्रकृति मर्तों का ईश, शशी आदि धातुओं का स्वामी, वृद्धाश्रय, युवा अयश्या, लवण रस का स्वामी शुभग्रह. गर्वदवर्ण, तब उज्वलकान्ति पैसा चन्द्रमा का स्वरूप ईश में जानना । २ ॥

मंगल का स्वरूप ।

भौममरुतःपित्तयुवोप्रवन्धो मध्याह्नधानुर्यमदिक्चतुष्पात ।

नागस्य चतुष्पातोऽसुवर्णकागे दग्धावनीव्यंगकट्टश्चरकः ॥ ३ ॥

भाषार्थ—भौम कस्मिंसे मंगल दमो गुणगाला पित्तप्रकृति, युवा अयश्या नाग, नागरी, नागकृष्ण में बनवान, वायुओं का स्वामी, दक्षिण दिशा का ईश, सुवर्ण का ईश, हाथी आदि का मन्त्र, पुरुष मंजक, अत्रिय वर्ण, चौकोन, मूल से उदग्धन धानपाटिकों का अविष्टाना, वनचारी जानना, यह मंगल का स्वरूप कहा । ३ ॥

शुभ का स्वरूप ।

ग्राम्यः शुभो नीलमुवर्णवृतः शिश्रुष्टिकोच्चः समधातुजीवः ।
 रमशानयोषोत्तरदिग्प्रभातंशुद्रः खगः सर्वरसो रजोज्ञः ॥ ४ ॥

भा०—ग्राम में रहने वाला, शुभ नीलाण, सुरण आदि द्रव्यों का स्वामी
 गोल आकार, वात अस्थि, ईश्वरी ईश्वरी भूमि में निचरने वाला वात पिच
 कफान्मर, मनुष्यादि जीवोंका प्रभु रमशान भूमिवासी शीमंजक, उत्तरदिशा
 का स्वामी, प्रातःकालमें जन्मि, शुकवर्ण, पसियोंका पशु, कद आदि मम्युण
 रनोंका स्वामी, रजोगुण, ऐसा शुभका स्वरूप जानना चाहिये ॥ ४ ॥

वृद्धशक्ति का स्वरूप ।

गुरुः प्रभाते नृशुभेशदिग्द्विजः पीनो द्विपाद् ग्राम्यसुवृत्तजीवः ।
 वाणिज्यमाधुर्यं मुरालयेशो वृद्धः सुरत्नं समधातुसत्वम् ॥ ५ ॥

भा०—वृद्धशक्ति प्रातःकाल में जनवान्, पुरुष महाका, शुभघट, रशानदिशा
 का स्वामी, व्यापणवर्ण, पीनवर्ण, द्विपद् जीवोंका स्वामी, ग्रामचारी, गोल
 आकार, मनुष्यादि जीवोंका अधिपति, रणित कर्मका कर्ता, ममुरमिय,
 देवानय स्वामी, वृद्धास्था, सुन्दर रनों का स्वामी, वात पिच कफान्मक,
 मरोगणी जानना ॥ ५ ॥

शुक्र का स्वरूप ।

शुक्रः शुभः स्त्रीजलगोपराहूः श्वेतः कफीरूत्यरजोऽम्लमूलम् ।
 विप्रोऽग्निदिह्मध्यवयोरतीशो जलावनिस्निग्धरुचिर्द्विपाच्च ॥ ६ ॥

भा०—शुभ संज्ञक, स्त्री, ब्रह्म, जनचारी, पदाङ्क कालमें चलवान्, सफेद
 वर्ण, कफ प्रकृति, रूप्य आदि द्रव्योंका स्वामी, रजोगुणी, खट्टे रसों का
 अधिपति, मूलमें उन्वन्न धान्य आदिकोंका स्वामी, व्यापण जाति, आग्नेय दिशाका
 स्वामी, वृषा अथवा, सुरत क्रीडाका ईश, जलवाली पृथिवी का स्वामी, चिकनी
 कानि वाला, द्विपद् (मनुष्यादि) का प्रभु ऐसा जानना ॥ ६ ॥

शनि का स्वरूप ।

शनिर्विहङ्गोऽनिलवन्य सन्ध्याशुद्रांगनाधातुसमः स्थिरश्च ।
 क्रूरः प्रतीचीतुवरोऽतिवृद्धोत्करक्षितोद् दीर्घसुनीललोहम् ॥ ७ ॥

कासे जाती है, यह दृष्टि नीचे से ऊपर जाता कम अर्थात् चालीस कलावाली दृष्टि जानना, यही दृष्टि आसानी से करने का नाम चालीस कला है ॥ ६ ॥

दृष्टिः पादमिता चतुर्दशमे गुमारिभाषास्मृताऽन्योन्यं ।

समगमे तयैकभवने प्रत्यक्षवैराऽम्बिला ॥

दृष्टं दृष्टत्रिनयं क्षुताह्वयमिदं कार्यस्य विध्वंसदं ।

संग्रामादिकलिमदं दृष्टा दृमाः स्युर्हादशांशांतरे ॥ १० ॥

भा०—दिए स्थान में यह स्थिति है उस स्थान में चौथे तीस दशमें स्थान में निम्न ग्रह को देखना है, जो दृष्टि देने के लिए भारतीय करने वाली पन्द्रह कला वाली जाती है, जो भारतीय नाम पञ्चमी परमें स्थिति यह निम्नको देखना है यह दृष्टि प्रत्यासरी जानने वाली साठकलाओं वाली होती है, यह दृष्टियों का चौबीस दू, सम्पूर्ण शुभ कामों का नकार शीघ्रता काया का विध्वंसद, संग्राम आदि यह काम करनेवाली को देने वाली है, यदि दृष्टा और दृश्यका अन्तर पांच भागों में ज्यादा न हो तो ये दृष्टियों जैसा फल कहा है उमकी देने वाली होती है, अन्यथा दृष्टा और दृश्यका अन्तर यदि पांच भागों में अधिक होगा तो ये दृष्टियों यथोक्त फलसे देने वाली नहीं होगी ॥ १० ॥

गणितकथ दृष्टि साधन ।

अपास्य पश्यन्निजदृश्यखेटादेकादिशेषे भ्रुवलिप्तिकाः स्यु ।

पूर्णस्ववेदाऽ०स्त्रिययोऽ०५०स्त्रवेदाऽ०२०स्त्रं०पष्टि६०स्त्रं०शरवेद४५सं०

निश्चयः१५स्त्रचन्द्रा१०वियद०अनर्काः६०शेषांकयातेष्यविशेषघातात्

लब्धंस्वरामे ३० रधिकोनकेष्येस्वर्णभ्रुवेताऽस्फुटदृष्टिलिप्ताः ॥ १२ ॥

भा०—जो ग्रह देखता है यह दृष्टा और जिसको देखता है वह दृश्य, कहाता है, यह देखकर दृष्टा ग्रहको दृश्य ग्रहमें घटा देना, घटाने में जो राश्यादि शेष रहता है, उस एक आदि शेष में पूर्ण इत्यादिक भ्रुव अर्थात् स्थिर दृष्टि कला होता है, अर्थात् दृष्टा से रहित दृश्य ग्रहको राशि स्थान में एक शेष रहे ता शून्य दृष्टि कला होती है, और दो शेष रहे तो चालीस, तीन शेष रहे तो पंद्रह, और चार शेष रहे तो पैंतालीस, पांच शेष रहे तो शून्य, छे शेष रहे तो साठ, सात शेष रहे तो शून्य, आठ शेष रहे तो पचासीस ॥ ११ ॥ नव

चक्रे वामदृगुच्यते चलवती गध्याद्यथा देशमनीर्येकत्वेपिदृगुच्य-
तेऽर्धजननीत्येके विद्वः मूरयः ॥ १३ ॥

भाषायाः—जो ग्रह जिस ग्रह को मिस्र दृष्टि में नहीं पांचती गीमगी रगारद्वी
दृष्टि में देखता है वह ग्रह उसका मिस्र जानना चाहिये और जो ग्रह शत्रु, दृष्टि
में जिस ग्रह को देखता है वह उसका दूरमन जानना चाहिये अन्वया अर्थात्
मिस्र और दूरमन दृष्टि के अभाव में परिमोच में दूररे, दंडे, आठवें, बारहवें इन
स्थानों में समता होती है यहाँ संभव नाम आचार्य ने विज्ञान के मत से शमी
वन को प्रमाण माना है जो श्लोक पूर्व लिख चुके हैं, 'मिस्रं कृतीष्व' समनरमे
पारदश' इत्यादि । यद्यपि मंदूग स्थानों में गणितामन दृष्टि आती है तो भी यहाँ
नहीं प्रयोग करना, कारण कि दृष्टि के अभाव में समता कही है, गणितामन
दृष्टि के होते हुए समता का अभाव ही होनायगा यह हेतु कितने ही आचार्य
कहते हैं, साम्नाय में यहाँ एक पांच मान और रगारद इन्हीं के अन्न तुल्य अंश
तत्वादि जन्म में वाले ग्रहों की गणितामन दृष्टिका अभाव है तो समता ही नहीं
समती, जैसे दृष्टा १३३२०५० यह चन्द्रमा है और ८३३२०५० यह रज्य
पुत्र है इन दोनों का अन्तर किया तो केवल ७ गति ही शेष रहा मानके नीचे
धुनाद् ० है । यह सम्भव नहीं कि अंश कला विकलाओं करके तुल्य दस्य और
दृष्टा मिर्दें इस कारण से सम दृष्टि अभाव स्वतः मिल्द है और दूररे ग्रन्थ में
समता कही भी नहीं है, अब सूर्यादि ग्रहों के दीर्घांश वर्णन करते हैं मूर्य के दी-
र्घांश १५ चन्द्रमा के १२ महल के ८ गुण के ७ गुरु के ६ शुकके ७ शनिधर
के ६ दीर्घांश हैं । अब दृष्टि में कुछ विशेषता को वर्णन करते हैं, लग्नादि १२
राशियोंके चक्र में दक्षिण दृष्टिही अपेक्षा से वाम दृष्टि चलवती होती है, अर्थात्
वाम स्थान में स्थित ग्रह की दृष्टि वामदृष्टि कही जाती है यहाँ मायम पदलोपी
समान जानना चाहिये, बाग भागस्य ग्रह की दक्षिण भागस्य ग्रह की ऊपर जो
दृष्टि वह चलवती कही है, लग्न को आदि के दंडे स्थान पर्यंत दक्षिण भाग कहा
है और मातों घर से बारहवें घर पर्यन्त वाम भाग कहा है यही रहज्जातक
में कहा गया है । अब (चक्र वामदृगुच्यते०) यहाँ कुछ उदाहरण कहते हैं,
जैसे दसवें स्थानमें चौथे स्थान में जो दृष्टि है वह चलवती कही है अर्थात् दसवें
घर में स्थित ग्रह की चौथे घर में स्थित ग्रह के ऊपर जो दृष्टि है वह चलवती

होती है और चौथे घर में स्थित ग्रह के ऊपर जो दृष्टि है वह निर्बल होती है यह ग्रह ही से सूचित होता है, तात्पर्य यह कि सातवें आदि बारहवें स्थान पर्यन्त आदि घरों में स्थित ग्रहों की लक्ष आदि छठे पर्यन्त घरों में स्थित ग्रहों के ऊपर जो दृष्टि है वह बलवाली है, यह निर्दिष्ट अर्थ समझना चाहिये और ऐसा ही अर्थ समग्रसिंह ने भी किया है कि (वामदृष्टि) इस पदमें सप्तम नक्षत्र समाम है, वाम में दृष्टि वामदृष्टि, दक्षिण में दृष्टि दक्षिण दृष्टि कहा है अर्थात् दक्षिण भाग में स्थित ग्रहों की जो वाम भाग में स्थित ग्रहों के ऊपर दृष्टि है उसकी अपेक्षा के वाम भाग में स्थित ग्रहों के ऊपर जो दृष्टि है वह बलवाली होती है, उदाहरण- जैसे (भूवेन्द्रोपरि दृष्टिमभ्यात्सबलेति सर्वतोप्युत्तमं दशम पर मे चौथे घर पर जो दृष्टि है उसको बलवती कहते हैं, एवं सप्तम आदि द्वादश घर पर्यन्त घरों में स्थित ग्रहों की लक्ष आदि षष्ठ पर्यन्त स्थित ग्रहों पर जो दृष्टि है वह बलवाली कही है, यह विद्वजनों कर्के विचारणीय है, ऐसा ही केशवदेव ने भी कहा है कि (परार्द्धखगटक प्राग्जार्द्धदत्कोर्त्तिका) लक्ष आदि षष्ठ पर्यन्त पूर्वार्ध, सप्तम आदि द्वादश पर्यन्त परार्द्ध पूर्वार्ध दृष्टि से परार्द्ध दृष्टि बलवाली कही है यह सिद्धांत जानना, अब एक राशि में स्थित दृष्टा । दृश्य उन दोनों की जो परस्पर दृष्टि वह आचार्यों की जानने वाली अर्थात् अन्वयना लाभ पूर्वक शुभ फल को देने वाली जानना, ऐसा सिद्धने ही ताजिक शास्त्र के जानने वाले पण्डितों ने कहा है ॥ १३ ॥

पूर्व कहे हुए दीर्घांशों का प्रयोजन ।

पुरुः पृष्टे स्वदीर्घांशेष्विष्टदृक्फलं ग्रहः ।

दद्यादतिक्रमे तेषां मध्यमं दृक्फलं विदुः ॥ १४ ॥

भाषा में:—जब आदि स्थानों में दृष्टि के होते हुए देखने वाला ग्रह अपने स्थानों के साथ आदि व भी रहे सिद्ध होने को वह उन्मुख नवम आदि स्थानों से सिद्ध दृष्टि फल को देना है और यदि दीर्घांशों का अन्वयन करजाये तो दृष्टि फल को देना है यह ताजिक शास्त्र के जानने वालों कर्के अन्वयना आदि ॥ १४ ॥

सप्तम स्थानों से आचार्य और उनके नाम ।

सप्तमस्थानेन दन्दुवाग्मन्थेथशालो पर उमराकः ।

सप्तमं तत्रः स्वायम्भवाभापुत्रकम्बूलनामोऽपि कम्बूलमुद्रम ॥ १५ ॥

नन्वासरं रश्मयो दुफालिकुत्वं च दुत्योत्थदिवीरनामा ।

तम्बीरकुत्थो दुरफल्ध योगाः स्युः षोडशोपां कवयामि लक्ष्मा ॥ १६ ॥

भा०-- षोडश योग १ इन्द्रजाल, फिर २ इन्द्रवार, ३ इन्द्रजाल, ४
 योगक, ५ मन्त्र, ६ यमशा, ७ मन्त्रज, ८ कम्बून, ९ गौर कम्बून ॥ १५ ॥
 १० नन्वासर, ११, १२, १३, १४ दुफालिकुत्वं, दुत्योत्थदिवीर, १५ तम्बीर, १६
 कवयामि लक्ष्मा ॥ १६ ॥

इन्द्रजाल और इन्द्रवार योगमें लक्षण ।

चेत्कटकै पणफरे च खगाः समस्ताः ।

स्यादियत्वाल इति राज्यसुखासिद्धेतुः ॥

आपोक्लिमे यदि खगाःसकलेन्दुवारो ।

न स्याच्छुभः कचनताजिकशास्त्रगीतः ॥ १७ ॥

भा०-- जो कटक (मध्य चतुर्थ मन्त्रम व दशम) स्थान में और
 पणफर (द्वितीय पंचम अष्टम एतादृश) स्थान में सम्पूर्ण ग्रह स्थित हों
 तो इन्द्रजाल योग होता है, यह इन्द्रजाल योग राज्य और सुख प्राप्त का हेतु है,
 अर्थात् अत्यन्त शुभ फलका देने वाला होता है, तथा जो आपोक्लिमे अर्थात्
 तृतीय पट्ट, नवम और द्वादश स्थान में सम्पूर्ण ग्रह हों तो इन्द्रवार योग
 कहिये जिनको गहन भाषा में इन्द्रवार कहते हैं यह ताजिक शास्त्र में गाया
 हुआ इन्द्रार निश्चय करके कहीं भी (वर्ष प्रवेश व माम प्रवेशादिकों में)
 शुभ दायी नहीं होता है ॥ १७ ॥

इन्द्रजाल योगका लक्षण ।

शीघ्रोत्पभार्गेर्धनभागमदेग्रस्थे निजं तेज उपाददीत ।

स्यादित्यशालोयमथो विलितालिषार्धहीनो यदि पूर्णमेतत् ॥ १८ ॥

भा०--जिन दो ग्रहोंका मुखशिल योग विचार करना हो, उन ग्रहों
 के मध्य में जिन ग्रहकी गति शक्ति हो वह शीघ्र गतिवाला ग्रह होता है,
 और जिनकी गति न्यून हो अर्थात् चाल कमती हो वह मन्द गतिवाला
 ग्रह कहा जाता है शीघ्र गति वाले ग्रहके अल्प भाग हों और मंदगति वाले

ग्रह के बहुत भागहों और शीघ्रगतिवाले ग्रहसे मंदगतिवाला ग्रह अगाडी स्थित होवे तां शीघ्र गतिवाला ग्रह मंदगतिवाले ग्रहको अपना तेज देता है, यह इत्यशाल योग होता है, इमीका दूसरा नाम मुखशिल है शीघ्र गतिवाले ग्रहसे या शीघ्र गतिवाले ग्रहके दीप्तांशों करके मन्द गतिवाले ग्रहको अधिक रहते हुबे मुखशिल योग होता है. यह सिद्धान्त अर्थ जानना चाहिये. अब पूर्ण मुखजिन योगका वर्णन करते हैं, यदि शीघ्र गतिवाला ग्रह मन्द गतिवाले ग्रहमे एक विकलामात्र न्यून हो अथवा आधी विकला से हीन हो तब यह पूर्ण नाम विश्वाश्रों वाला मुखशिल योग होता है और जब दोनों ग्रहों की विकला पर्यन्त अबयवों से समानता हो तब पूर्ण मुखशिल होता है, यह अर्थ से ही सिद्ध होता है ॥ १८ ॥

शदृष्टि में मुखशिल का लक्षण ।

शीघ्रो यदा भांत्यलवःस्थितःनन् मन्देऽन्यभस्थे निदधाति तेजः ।
 स्यादित्यशालोऽदमथैप शीघ्रो दीप्तांशकांशैरिह मन्दपृष्ठे ॥१६॥
 तदा भविष्यद्गणनीयमित्यशालं त्रिधैवं मुखशीलमाहुः ।
 लग्नेशकार्याधिपयोर्यथैप योगस्तथा कार्यमुशन्ति सन्तः ॥ २० ॥

भाषार्थ—जब शीघ्र गतिवाला ग्रह राशिके अन्तिम अंश अर्थात् तीसवें अंशमें स्थित होकर अग्रिम राशिमें स्थित मन्द गतिवाले ग्रहके लिये अपने तेज को देता है, भाषार्थ यह कि-शीघ्री ग्रह राशि के अन्त में स्थित हो करके मन्द ग्रह शीघ्री ग्रहके दीप्तांशकांश अंशों में होकर आगे की राशि में स्थित होवे, तब शीघ्र गतिवाला ग्रह मन्दगति वाले ग्रहमें अपने तेजको देता है, तभी यह इत्यशालनामक योग होता है, अब भविष्य मुखशिल योगको कहते हैं—यदि शीघ्र गतिवाला ग्रह अपने दीप्तांशों से अधिक अंशों तक मन्द गतिवाले ग्रहसे दीपते स्थित होकर जब मन्द गतिवाले ग्रह के दीप्तांशों तक अपने तेज देने की सामना करता है तब आगे होने वाला अन्य-योग तब ही योग होता है यह गणनीय है अर्थात् जानना चाहिये, ऐसा हीन योगका नाम मुखशिल (मुखशिल) योग पूर्वाचार्योंने दर्शाया है, अब हम इसका अर्थ बतलाने करते हैं—लग्नेश स्वामी और कार्य का स्वामी के बीच स्थित अथवा अलग स्थित यदि उनका स्वामी इन दोनों का जैवा

सुवर्जित योग है क्या कार्य मन्त्री ने कहा है, जैसे कोई मदनकर्ता याकर पूरे कि सुमन्त्री था, पय, धन, राज्य, सुखादि प्राप्त होगे कि नहीं ? ऐसा मदन सुनकर यह समय लम्बन का स्वामी और मित्र जिन भाग का मदन करे उस उस भाग का स्वामी इन दोनों के इच्छालाल को विचार करने शुभ व अशुभ फल को कहना चाहिये वर्ष प्रवेश से जो लम्बन कार्य उन्हीं से सम्पूर्ण कार्यों का विचार करे, जो भी के विषय में पृथक् हो जो सातवें भाग से विचार करे, पय लाभ मदन हो तो सातवें भाग में विचारें राज्य प्राप्ति की चिन्ता हो तो दूसरे घर में विचार करना चाहिये, धन की चिन्ता हो तो दूसरे भाग से विचारें लाभ मदन हो तो आठवें भाग से विचारना ऐसे ही सर्वत्र जानना उहाँ लम्बन का स्वामी और राज्यादि अर्थात् कार्यों का स्वामी इन दोनों का योग सुवर्जित योग होवे हीमें उस भाग को प्राप्ति कहनी चाहिये, यदि लम्बनेश और कार्येश इन दोनों का वर्तमान सुवर्जित योग हो तो हीमें ही उस भाग की प्राप्ति कहनी चाहिये, यदि लम्बनेश और कार्येश इन दोनों का वर्तमान सुवर्जित योग हो तो उस भाग सम्बन्धी सुख ही समय वर्तमान है, यह कहना चाहिये और यदि लम्बनेश व कार्येश इन्हीं का पूर्ण सुवर्जित योग हो तो उस भाग सम्बन्धी पूर्ण सुख कहना चाहिये और जो भयिष्यन् सुवर्जित योग होवे तो अर्थात् उस भाग सम्बन्धी सुख होवेगा ऐसा कहना ॥ १९ ॥ २९ ॥

दृष्टि पत्र से सुवर्जित का विचार ।

लग्नेशकार्याधिपतत्सहाया यत्र स्युरस्मिन्पतिसौम्यदृष्टे ।।

तदा बलाढ्यं कथयन्ति योगं विशेषतःस्नेहदृशाऽपि सन्तः २१

भावार्थः—लम्बन का स्वामी और कार्य का स्वामी इन दोनों के महायक अर्थात् मित्र के चारों अर्थात् ? लम्बन स्वामी, २ कार्य स्वामी, ३ लम्बनस्वामी का मित्र, और ४ कार्य स्वामी का मित्र ये जिन राशि में होंगे और वह राशि अपने स्वामी और शुभ ग्रह दोनों से देखा जाता हो तो पूरा उत्पन्न इच्छालाल (सुवर्जित) योग को महात्मानन उत्कृष्ट फलदा देने वाला कहते हैं, जहाँ भी लम्बनेश, कार्येश, मित्र, के चारों जित राशि में होंगे और वह राशि अपने स्वामी और शुभग्रह इन दोनों से स्नेह दृष्टि (मित्र दृष्टि) करके देखा जाता हो तो यह सुवर्जित विशेष करके बल महित अत्यन्त उत्कृष्ट फल का देनेवाला होता है, ऐसा ताजिक शास्त्र के जानने वाले महात्माननों ने बखान किया है ॥ २१ ॥

अन्य भी फल विचार का वर्णन ।

स्वर्चादिसत्स्थानगतः शुभैश्चेद्युतेक्षितोऽभूद्भविताऽथवाऽऽस्ते ।
तदा शुभं प्रागभवत्सुपूर्णमग्रे भविष्यत्यथ वर्तते च ॥ २२ ॥

भाषार्थ—तब स्वामी और कार्य स्वामी ये दोनों अपनी राशि, अपने उच्च, अपने हस्त, अपने त्रैराशि व अपने नवांश में हो चुके हों अथवा शुभ ग्रहों के स्थान में प्राप्त व शुभ ग्रहों से युक्त व शुभ ग्रहों से देखे गये हों तो पड़ने पूर्ण शुभ फल होता गया ऐसा कहना चाहिये और जब लगन का स्वामी और कार्य का स्वामी ये दोनों अपने घर, अपने उच्च, अपने हस्त, अपने त्रैराशि, व अपने नवांश में जाने वाले हों, अथवा शुभ ग्रहों के स्थानों में चलने वाले हों, व शुभ ग्रहों से युक्त हों अथवा शुभ ग्रहों करके देखे जायेंगे ऐसा होने पर शुभ फल आगे होवेगा यह कहना चाहिये और जब लगन का स्वामी और कार्य का स्वामी ये दोनों अपनी राशि में हों व अपने उच्च व अपने हस्त में हों, अथवा अपने त्रैराशि व अपने नवांश में हों, व शुभ ग्रहों के स्थानों में प्राप्त हो यदा शुभ ग्रहों से युक्त व देखे जाते हों शुभ फल हम समय होगा है, यह कहना चाहिये ॥ २२ ॥

अशुभ फल का वर्णन ।

अन्यन्तमग्माद्विपरीतभावेऽथेष्टर्क्षितोऽनिष्टगृहं प्रपन्नः ।

अभून्नशुभं प्रागशुभं त्विदानीं संयातुकामेन च भावि वाच्यम् २३

भाषार्थ—जो शुभ फल पूर्व कह आये हैं उससे विपरीत भाव होने से अशुभ फल कथन करना चाहिये और लगन का स्वामी और कार्य का स्वामी व दोनों अपने घर के घर में हो चुके हों, व अपने नीच के घर में, अथवा अपने उच्च व हस्तों में व अपने उच्च के नवांश में, व पाप ग्रहों के स्थान में प्राप्त होय व पाप ग्रहों से युक्त व पाप ग्रहों से देखे गये हों तो प्रथम अशुभ फल होगा अथवा दूसरे उच्च का स्वामी व कार्य का स्वामी ये दोनों दृष्ट स्थानों में उच्च व पाप ग्रहों से युक्त व देखे गये हों तो उच्च समय अशुभ फल होगा है यह कहना चाहिये, जब हीमने मृगशिरा याग में विद्याप न के उच्च कहने हैं—जब लगन के उच्च व कार्य के उच्च ये दोनों मित्र की राशि में हों व उच्च व पाप ग्रहों में हो जायें तो शुभ फल होगा है और उच्च समय

अशुभ फल वर्तमान है, ऐसा करना, कर्मेश और कार्येश दोनों मित्र के घर में बन मान है और कुछ दिन उपमान हुए, के मर्मों आयेगे तो अशुभ फल भावि करना उचित्ता कामों अतिवृत्त होवेगा ऐसा करना ॥ २२ ॥

उपराग योग का लक्षण ।

शीघ्रो यदा मन्दगतैरर्थैकमप्यंशमभ्येति तदेमराकः ॥

कार्यक्षयो मूर्धरिक्त्वलोत्ते सौम्येनद्विजाजमतेन चिन्त्यम् ॥२२॥

भा०—उप शीघ्र गतिवाला यह मन्दगति वाले ग्रहके एक भी मन्त्र को अतिवृत्तय कहिये उचित्ता परसे अगादी कार्य उप उपराग योग होता है शीघ्र का दूसरा नाम मूर्धरिक्त् है, यही शीघ्र ग्रह और मन्द ग्रह ये दोनों ग्रह पर पर ही जो कार्य का विनाश होवे तथा यदि शुभ ग्रह होवे तो गतिवृत्त (मन्त्रों विचार हुये) कार्य ही गतिवृत्त होवे, यह विन्नाश आचार्य के मत में विनयन करना ॥ २३ ॥

नक्त योग का लक्षण ।

लग्नेशकार्याधिपयोर्नदृष्टिर्मियोऽथ तन्मध्यगतोऽपि शीघ्रः ।

आदाय तेजो यदि पृथसंस्थान्न्यमंदधान्यत्र हि नक्तमेतत् ॥२५॥

भा०—लग्नेश और कार्येश इन दोनों की परस्पर दृष्टि न होवे और यदि इन्हीं दोनों (लग्नेश व कार्येश) के मध्ये कोई अन्य शीघ्रगति वाला ग्रह स्थित होवे और यह मध्य में स्थित ग्रह विद्यार्थी मंडे हुये शीघ्र गति वाले ग्रहमें तेज का लोहर अगादी स्थित मन्द गतिवाले यहको मर्मण करता है तब यह नक्तनाम योग होता है इसका उदाहरण आगे दिखाने हैं ॥ २५ ॥

नक्त योग उदाहरण ।

स्त्रीलाभपृच्छातनुरस्तिकन्यास्वामीबुधःसिंहगतोदशांशः ।

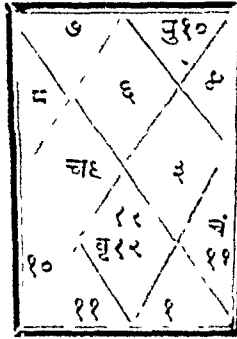
सूर्यांशकेदेवगुरुःकलत्रे दृष्टिस्तयोर्नास्ति मिथोऽथ चन्द्रः॥ २६ ॥

चापे वृषे चोभयदृश्यमूर्तिःशीघ्रोऽष्टभागेरथवा भवांशैः ।

आदाय तेजो बुधतो ददोयजीवाय लाभःपरतःस्त्रियःस्यात्॥२७॥

भा०—जैसे किसी ने आकर स्त्री लाभ होने का प्रश्न किया तो उस

ममय कन्या लग्न है उसका स्वामी बुधदश अंशों करके सिंह राशि में वारहवें घर बैठा है. कार्यका स्वामी बृहस्पति वारह अंशों से उपलक्षित होकर सातवें घर में विराजमान है यहां लग्न स्वामी बुद्ध और कार्य स्वामी बृहस्पति इन दोनों की आपस में छठे आठवें घर में बृहस्पति और बुद्धपति में छठे स्थान में बुध ये दोनों आपस में नहीं देखते हैं, और शीघ्र गति वाला चन्द्रमा, दोनों (बृद्ध या बृहस्पति)



के बीच में प्राप्त होकर धन राशि में अथवा वृष राशि में स्थित है, और यह चन्द्रमा लग्न स्वामी बुद्ध कार्यस्वामी बृहस्पति इन्हीं से देखा जाता है, पुनः आठ अंशों से ग्यारह अंशों से उपलक्षित ऐसा चन्द्रमा पीठ पर बैठे हुए बुध से तेज लेकर बृहस्पति के अर्थ देता है उस लग्न स्वामी बुध के तेज हरने से शपनी यज्ञ से स्त्री की प्राप्ति नहीं होगी, यह कहना चाहिये क्योंकि बीच में बैठने वाला तीसरा शीघ्र गति वाला ग्रह चन्द्रमा ने लग्न के स्वामी का तेज हरकर मन्द गति वाले ग्रह (गुरु) के अर्थ दे दिया इस कारण किन्ती पत्न्य (बीच वाले) मनुष्य के द्वारा स्त्री का लाभ होवेगा, ऐसा कहना ॥ २६ ॥ २७ ॥

यमया योग का लक्षण ।

धन्तः स्थितो मन्दगतिस्तु पश्येद्दीप्तांशकेद्वावथ शीघ्रतस्तु ।

नीत्या गृहो यच्छति मन्दगाय कार्यस्य सिद्ध्यै यमया प्रदिष्टः २८

भाषार्थः—लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी इन दोनों की दृष्टि परस्पर नहीं होनी चाहिये. लग्नेश की दृष्टि कार्येश पर नहीं और कार्येश की दृष्टि लग्नेश पर न हो. और लग्नेश के बीच बैठा हुआ मन्द गति वाला ग्रह अपने शीघ्र गति वाले लग्नेश और कार्येश को स्थान दृष्टि (दृष्टिः स्यान्नवपथमे-वर्षदि) । मन्द गति वाले और शीघ्र गति वाले ग्रह (लग्नेश व कार्येश) के बीच में शीघ्र गति वाला ग्रह होने परमे तेज की लेकर मन्द गति वाले ग्रह के कार्य देना है. अतः लग्न का स्वामी और कार्य का स्वामी इन्हीं से जो उपलक्षण मिलेगी. जो के लिये तेज की देता है उसे से पृथकार्यों ने मन शान्त कार्य की स्थिति के लिये उसे यमयानामक योग कहा है यह यमया

कोऽपि विवर्तते इत्युक्तं तत्रैव । तत्रैव चोक्तं । इत्युक्तं । इत्युक्तं । इत्युक्तं । इत्युक्तं ।

गण्ड्यानिशुभ्या तुल्यलम्बनायां मेघमित्तस्तृष्टनवेवृपस्यः
चन्द्रो र्माशैर्यदि गण्ड्यनाथो दृष्टिग्नयोर्नास्तिगुरुस्तु मन्दः ॥२६॥
दिगंशःकर्कगनम् पश्यन्नुभो गहो दीपनत्वैः सचान्द्रम ।
दृष्टो विगतयेति पदस्य लाभोऽप्यात्येन भावीतिविमृश्य वाच्यम३०

पदस्य योग का उदाहरण ।

श्री ३०- गण्ड्य नाम चन्द्र के अर्धे स्थित होने का इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं ।
गण्ड्य नाम चन्द्र के अर्धे स्थित होने का इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं ।
गण्ड्य नाम चन्द्र के अर्धे स्थित होने का इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं ।

इह चन्द्रो नाम चन्द्रो मे उक्तं । इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं ।
गण्ड्य नाम चन्द्र के अर्धे स्थित होने का इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं ।
गण्ड्य नाम चन्द्र के अर्धे स्थित होने का इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं इत्युक्तं ।

[गण्ड्यायोगोऽप्य]



मण्डल योग का लक्षण ।

चक्रःशनिर्वा यदि शीघ्रमेटात्पश्चात्पुरस्तिष्ठति तुर्यदृष्ट्या ।
एकचक्रमत्तर्जभुवा दशा वापश्यन्नथांशैरधिको न केशचेत् ॥३१॥
तंजो हरेत्कार्यपदेत्यशाली स्थिताऽपि वाऽसौ मण्डलशुभो न ।
अथास्योदाहरणमाह । स्त्रीलाभपृच्छातनुरस्ति कन्याऽत्र ज्ञो
दिगंशैस्तिथिभिःमुरेज्यः ॥ ३२ ॥ कलत्रगःस्वैऽवनिजो भवांशैः
पूर्वं बुधो भौमहतस्वतेजाः । जीवेन पश्चान्मिलतीति लाभो
नार्यास्तु नो पृष्ठगतेऽथवास्मिन् ॥ ३३ ॥

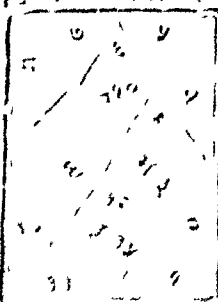
भाषार्थ—इस मण्डलयोग में लग्नेश वा कार्येश की परस्पर स्थान दृष्टि की आवश्यकता है, अर्थात् लगन स्वामी और कार्य स्वामी इन दोनों की परस्पर स्थानदृष्टि को पूर्वाचार्यों ने माना है, यदि शीघ्र गति वाले गृह से मंगल व शनैश्चर ये दोनों पीछे या आगे स्थित हों अर्थात् लगन स्वामी और कार्य स्वामी इनमें जो शीघ्र गति वाला गृह हो उसके जो अंशादि उनमें पूर्व वा पश्चिम अंशों से ही मंगल व शनैश्चर स्थित हों और मंगल व शनैश्चर चौथे स्थान दृष्टि से अथवा एक स्थान दृष्टि से तथा सातवें स्थान दृष्टि से अंशों करके या कम अंशों करके शीघ्र गति वाले गृह को देखता हुआ शीघ्र गति वाले ग्रह के तेज को हरे अर्थात् मंगल व शनैश्चर इनमें से कोई ग्रह पहली चौथी और सातवीं दृष्टि से शीघ्र गति वाले ग्रह को देखे और शीघ्र गति वाले ग्रह के जितने अंश हों उनसे मंगल व शनैश्चर के अधिक वा न्यून हों (शीघ्री गृह के जितने दीप्तांश हों उनके मध्य में मंगल व शनैश्चर के अंश हों यह किमी आचार्य का मत है और मंगल शनैश्चर इनमें से कोई गृह शीघ्र गति वाले गृह के बल को हरण कर लेगा यदि बल रहित शीघ्र गति वाला गृह चाँचिद्वयकार्याधीश के साथ इत्यथान (मुथशिल) योग को भी करता हुआ विद्यमान होवे तो मण्डल योग होता है, यह मण्डलयोग शुभ नहीं मानता अर्थात् शुभकार्यो का करने वाला नहीं होता है ॥ ३१ ॥ अब इस मण्डलयोग का वर्णन करने हैं—किमी प्रश्नकर्ता ने आकर पृष्ठा कि स्त्री का लग्न होगा कि नहीं ? तो यहां प्रश्न समय में कन्या लग्न है, उमका स्वामी बुध दस अंशों में उपलब्ध होकर यहीं लग्न में विराजमान है और बुध स्वामी पन्द्रह अंशों करके ॥ ३२ ॥ समय पर में मीनगणि का विराजमान है,

की दसवें अंश में मंगल गगनद
अंश करके विराजमान और चौथे
स्थान दृष्टि से शीघ्र गति वाले को
देखेगा है उमका स्वामी बुध
दसवें अंश में उपलब्ध स्थित
होकर दसवें अंश में मंगल का दसवें

अथमण्डलयोगोपम ।



पुनर्मण्डलयोगोपम ।



यदि मंगल और बुध का दसवें अंश में निर्दल स्थित गया पीछे

कार्यातीन कृत्स्नानि के नाम शीघ्र बनने में शानकर मिला, इस प्रकार जो या नाम नहीं जोरगा ऐसा कहना चाहिये, यह एक योग हुआ शय पर योग करने हैं कि जन्म पर योग कहा गया उमे उगी न्य में स्थित वेने हुए रूप के जन्मों की अपेक्षा यम शंभों में मूक होकर मंगल पीले हो ज्य प्रकार थोड़े शंभों में मंगल प्रशुभ होने हुये यह मण्ड नाम योग शीघ्र कार्यों का नाश करने वाला होता है ॥ ३३ ॥

मण्ड योग का भेद ।

यदेत्यशालोऽस्तुभयोः स्वदीप्तहीनाधिकंशैःशनिभृमुतोचेत ।
पक्वर्त्तमौलमनवकार्येषांऽनस्ते जोहरा कार्यहरा निरुक्ता ॥ ३४ ॥

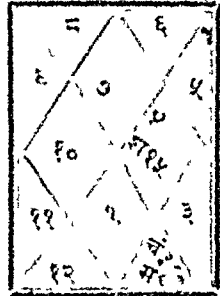
भाषार्थ—यदि लग्नाधीन और कार्याधीन इन दोनों का इन्धशाल (मृगशिरा) योग होवे और इन दोनों के बीच में या इनमें से किसी एक के साथ जनेश्वर व मंगल ये दोनों एक राशि में स्थित होवे और लग्नेश व कार्याेश इनके जो दीप्तांश अनर्था अपेक्षा जनेश्वर व मंगल के अंश कमती ना अधिक होवे और जनेश्वर व मंगल के अंश दीप्तांशों के बीच ही में होवे उन्हीं करके जनेश्वर मंगल ये दोनों लग्नेश व कार्याेश इन्तों के तेजसो होने हुए शीघ्र कार्य के नाश करने वाले मुनियों ने कहे हैं ॥ ३४ ॥

मण्ड योग का उदाहरण ।

राज्याप्तिपृच्छानुललग्ननाथः कर्के सितोशैस्तिथिमिदिगंशैः ॥
चूने शर्शा भूपलवैः कुजरचहरन् द्वयोर्भा हरते च राज्यम् ॥ ३५ ॥

भाषार्थ—राज्य लाभ होने के प्रश्न को किसी ने पूछा तो प्रश्न समय तुला लग्न है, उसका स्वामी शुक्र १५ अंशों में उपलसित होकर कर्क राशि का राज्य (दशम) स्थान में स्थित है और दश अंशों में शुभराशि पर अष्टम घर में चन्द्रमा स्थित है, तथा वही मूलह अंशों करके मंगल विद्यमान है, यहाँ मंगल लग्नेश (शुक्र) और कार्याेश (चन्द्रमा) इन दोनों के तेज को हरण करके राज्य को हरना है इस उदाहरण में लग्नाधिप व कार्याधिप, इन दोनों का इन्धशाल योग है, और

पुनर्मंगलयोगोऽयम्



कार्येश के साथ नंगल अधिक अंशों से वृष राशि में स्थित है, इस कारण लग्नेश और कार्येश के पराक्रम को ग्रहण करके राज्य को हर लिया ॥३५॥

कंबूल योग के लक्षण ।

लग्नकार्येशयोरित्थशालेऽत्रेन्द्रित्थशालतः ।

कम्बूलं श्रेष्ठमध्यादिभेदैर्नानाविधं स्मृतम् ॥ ३६ ॥

भा०—लग्नेश और कार्येश इन दोनों का परस्पर इत्थशाल योग होवे तो इनमें से किसी एक के साथ चन्द्रमा भी इत्थशाल योग करे तो उत्तम मध्यम आदि भेदों से अनेक प्रकार का कंबूल योग कहा है, लग्ना-

धीन वा कार्या-
धीन तथा चं-
द्रमा इनके चार
प्रकार के आकार
भेद से सोनद
प्रकार का कंबूल
योग होता है
१ उत्तमोत्तम
२ उत्तम मध्यम

अथ पौडशप्रकारकम्बूलयोगचक्रम् ।

चन्द्र	लग्नेशकार्येशो	लग्नेशकार्येशो	लग्नेशकार्येशो	लग्नेशकार्येशो	लग्नेशकार्येशो
उत्तमाधिकार कार्यचन्द्र	उत्तमाधिका रस्थो १	मध्यमाधिका रस्थो २	समाधिकार स्थो ३	अधमाधिका रस्थो ४	
मध्यमाधि कार्यचन्द्र	उत्तमाधिका रस्थो ५	मध्यमाधिका रस्थो ६	समाधिकार स्थो ७	अधमाधिका रस्थो ८	
समाधिकार चन्द्र	उत्तमाधिका रस्थो ९	मध्यमाधिक रस्थो १०	समाधिकार स्थो ११	अधमाधिका रस्थो १२	
अधमाधि कार्यचन्द्र	उत्तमाधिकार स्थो १३	मध्यमाधिका रस्थो १४	समाधिकार स्थो १५	अधमाधिका रस्थो १६	

३ उत्तम ४ उत्तमाधिम, { उत्तमोत्तमद्विदलयेवशाले चन्द्रोपि नानकथितं विधत्ते ।
 ५ मध्यमोत्तम ६ म.म. { विद्वान्मोक्षोक्तयोः प्रयत्नं मध्यं त्रिकाने स्वधर्मं परत्नम् १ }
 ७ म.म. ८ म.म. ९ मध्यमाधिम, १० मध्यम ११ मध्यम मध्यम
 १२ अधिम, १३ अधिमोत्तम, १४ अधिमोत्तम, १५ अधिम और १६ अधमाधिम,
 १७ मध्यम भेद है इनमें सप्त गण्ड को ३।७।१।१०।११।१२।१५ ।
 १७।२०।२१।२२।२३।२४।२५।२६।२७।२८।२९।३०।३१।३२।३३।३४।३५।३६।३७।३८।३९।४०।
 ४१।४२।४३।४४।४५।४६।४७।४८।४९।५०।५१।५२।५३।५४।५५।५६।५७।५८।५९।६०।
 ६१।६२।६३।६४।६५।६६।६७।६८।६९।७०।७१।७२।७३।७४।७५।७६।७७।७८।७९।८०।
 ८१।८२।८३।८४।८५।८६।८७।८८।८९।९०।९१।९२।९३।९४।९५।९६।९७।९८।९९।१००।

उत्तमोत्तम कम्बूल योग का लक्षण ।

यदाह्नुःस्वगृहोच्चस्थस्तादृशो लग्नकार्यषो ।

नदायशालो कम्बूलमुत्तमोत्तममुच्यते ॥ ३७ ॥

भाषार्थः—यदि चन्द्रमा अपने राशि व अपने उभ में स्थित हो और लग्न कार्याशेषों से भी दोनों अपने घर व अपने उभ में स्थित होकर परस्पर इत्यज्ञान को करे और यदि चन्द्रमा इन्हीं में से किसी एक के साथ इत्यज्ञान को करे तो वह कम्बूल नामक उत्तमोत्तम कहा जाता है, क्योंकि नीलों का उत्तम अधिकार प्राप्त है इसमें पण्डितों ने उत्तमोत्तम कहा है, यह प्रथम भेद है इसका उदाहरण आगे कहा है ॥ ३७ ॥

उत्तम मध्यम चेतन कम्बूल योग का लक्षण ।

स्वीयहृद्वाहकाणांकभागस्येनेरथशालतः ।

मध्यमोत्तमकम्बूल हीनाधिकृतिनोत्तमम् ॥ ३८ ॥

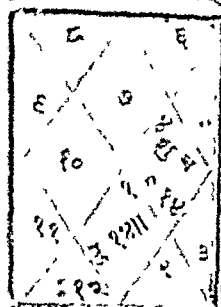
भाषार्थः—अपने हृत्, द्रेक्षमाण व चरान में लग्नेश और कार्येश होंगे और परस्पर इत्यज्ञान को करने होंगे तथा यदि चन्द्रमा अपने घर व अपने उच्च में विराजमान होकर लग्ना गेह कार्याशेषों में से किसी एक के साथ इत्यज्ञान योग को करे तो उत्तम मध्यम नामक कम्बूल योग होता है, क्योंकि चन्द्रमा का उत्तम अधिकार प्राप्त है और लग्नेश व कार्येश का मध्यम अधिकार है इसमें (उत्तम मध्यम) कहा है, यहाँ अन्यकर्ता ने चन्द्रोत्तम न होने के कारण मध्यमोत्तम कहा है ॥ ३८ ॥

उत्तम मध्यम कम्बूल योग का उदाहरण ।

भाषार्थः—जैसे प्रदत्तकर्ता ने पूछा कि हमारे भाग्य की वृद्धि होगी ?

और कब होगी ? जहाँ प्रश्न समय तुला लग्न है उत्तम भागी शुक्र १० अंशों से दशम स्थान में अपने हृत् में स्थित है और भाग्य (नवम) भाव का भागी पुष्य १४॥ अंशों से उपलक्षित होकर सातवें घर में अपने हृत् में विराजमान है, इन दोनों का परस्पर इत्यज्ञान योग भी है, यहाँ चन्द्रमा १४ अंशों करके अपने घर कर्क राशि में विराजमान हो-

उत्तममध्यमकम्बूलम्



कर कार्याधीश के साथ इत्थशाल योग करता है, इस कारण उत्तम मध्यम नामक कम्बूल योग हुआ, इसी से प्रथम भाग्य की वृद्धि अधिक फिर मध्यम कहनी चाहिये, यह दूसरा भेद कहा (हीनाधिकृतिनोत्तमम्) हीन हैं उत्तम मध्यम व अथम अधिकार जिसके ऐसे लग्नाधीश और कार्याधीश करके परस्पर सुयशिल योग के होते हुए यदि चन्द्रमा अपने घर व उच्च में बैठकर इत्थशाल योग को करे तो उत्तम कम्बूल योग होता है, क्योंकि चन्द्रमा का उत्तम अधिकार प्राप्त है और इतर लग्नाधीश व कार्याधीश का सम अधिकार है इस कारण यह उत्तम नामक कम्बूल योग कहा जाता है ।

उत्तम कम्बूल योग का उदाहरण ।

जैसे किसी पृच्छक ने प्रश्न किया कि हमको राज्य प्राप्त होगा कि

उत्तमकम्बूलचक्रम्

५१०	३	१
५०५	३	१
५००	३	१
५०५	३	१
५१०	३	१

नहीं ? उस समय लग्न मिथुन है, उसका स्वामी बुध सम घर में स्थित है और राज्य भवन का स्वामी गुरु सम घर कन्या राशि में स्थित है और चन्द्रमा अपने उच्च वृष राशि में विद्यमान है इस प्रकार तीनों ग्रहों के सुयशिल योग के होते हुए उत्तम नामक कम्बूल योग हुआ, राज्य की प्राप्ति उत्तम कहनी चाहिये यह तीमरा भेद है ।

उत्तमाधम, मध्यमोत्तम मध्यम मयम कम्बूल योग के लक्षण ।

उत्तमाधमता नीचारिपुगेहस्थितेन चेत् ।

महदादिगतश्चन्द्रः स्वभोच्चस्थेत्थशालकृत् ॥ ३६ ॥

मध्यमोत्तममे तन्न पूर्वम्मान्न विशिष्यते ।

महदादियदस्थेन कम्बूलं मध्यममध्यमम् ॥ ४० ॥

व्याख्या: उत्तमोत्तम या कार्येण ये दोनों अपने नीच राशि में व शत्रु के घर में चन्द्रमा परस्पर इत्थशाल करें और चन्द्रमा अपने घर व अपने उच्च राशि में कार्येण और कार्याधीश इनमें से किसी एक के साथ इत्थशाल करे तो उत्तमोत्तम नामक कम्बूल योग होता है, मध्यमोत्तम या कार्येण व कार्येण का

उसका स्वामीशुक्र २४ अंशों करके अपने घर धनलग्नमें तुला का है, स्त्री भाव (सप्तम) का स्वामी मङ्गल २८ अंशों से युक्त होकर अपने घर भेषराशि में विद्यमान है और चन्द्रमा २२ अंशों से मकरराशि का अपने नवांश में स्थित चतुर्थभावमें विराजमान है इन सबोंका आपसमें इत्यशाल योग होता हुआ मध्यमोत्तम नामक कम्बूल योग होता है यहां इस योग के होने से स्त्री की प्राप्ति उत्तमता में होगी ऐसा कहना यह पांचवां भेद है ।

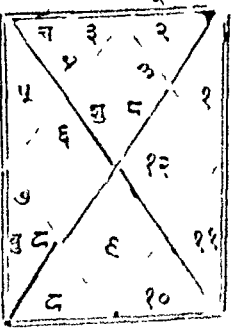
मध्यमोत्तमकम्बूलयोग



मध्यम २ कम्बूलयोग का उदाहरण ।

जैसे किसी मरणकर्ता ने सन्तान प्राप्त होने के अर्थ प्रश्न किया तो उस समय मिथुन लग्न है उसका स्वामी बुध पांचवे तुला लग्न में आठ अंशोंमें स्थित है और सन्तान (पंचम) भाव का स्वामी शुक्र आठ अंशोंमें उपयुक्त होकर मिथुन राशिका अपने हृदयमें विद्यमान है और चन्द्रमा तीन अंशोंकरके अपनी राशि (कर्क) का अपने द्रष्टाण व नवांश में स्थित है यहां लग्नाधिप बुधकार्याधिप शुक्र और चन्द्रमा इन तीनोंका परस्पर इत्यशाल योग होने से मध्यम २ नामक कम्बूल योग होता है इससे सन्तान बहुत यत्न करने में प्राप्त होवे ऐसा कहना, यह छठा भेद है ।

मध्यम २ कम्बूल योग



मध्यम मध्यमायम कम्बूल योग का लक्षण ।

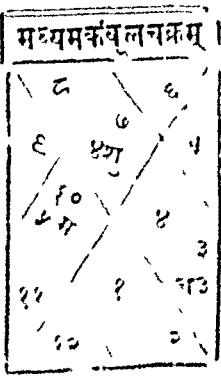
म्यानमायममकम्बूल दीनाधिकृतिग्वेटजम् ।
 मय्यमायमकम्बूलं नीनारिभग्वेटजम् ॥ ४१ ॥

जैसे किसी मरणकर्ता ने प्रश्न में उत्पन्न मध्यम नामक कम्बूल योग होता है इससे अपने लग्न व मध्यम अशिकाओं में स्थित मम अशिकाओं का परस्पर इत्यशाल योग होने से मध्यम नामक कम्बूल योग होता है इससे सन्तान बहुत यत्न करने में प्राप्त होवे ऐसा कहना, यह छठा भेद है ।

भा०—जो चंद्रमा अपने अधिकार से रहित हो अर्थात् अपने उच्च, अपनी राशि, द्रष्टाण नवांश, तथा अपने नीच व अपने शत्रु राशि में न होवे किन्तु समग्रह आदि को प्राप्त होकर अपने राशि व अपने उच्च राशि में प्राप्त परस्पर इत्यशाल योग करते हुये जो लग्नेश व कार्येश के साथ इत्यशाल योगको करे तो उत्तम नामक कम्बूलयोग होता है, क्योंकि चंद्रमा अपने अधिकारों से शून्य है और लग्नाधीश व कार्याधीश ये दोनों उत्तमाधिकारको प्राप्त हैं इससे यह उत्तमनाम कम्बूलयोग कहा है, और दूसरे मध्यम कम्बूलयोग के लक्षण यह है कि—अपने २ दहा द्रष्टाण, व नवांशमें स्थित परस्पर इत्यशालयोग को करते हुये जो लग्नाधीश व कार्याधीश हैं तिन दोनों के साथ चंद्रमा मम अधिकार में स्थित होकर इत्यशालयोग करे तो मध्यमनाम कम्बूलयोग होता है, क्योंकि यहाँ चंद्रमा अधिकारों से शून्य है, और लग्नाधीश और कार्याधीश ये दोनों मध्यम अधिकार में प्राप्त हैं. पूर्वोक्त मध्यम कम्बूल के समान यह भी मध्यम नामक कालयोग जानना ॥ ४२ ॥

उत्तम कंबूल योगका उदाहरण ।

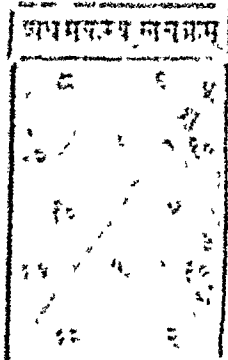
जैसे किसी प्रश्न कर्ताने धन लाभ के अर्थ प्रश्न किया तो उस समय तुला लग्न है उसका स्वामी शुक ४ अंशोंसे युक्त होके लग्न ही में स्थित है और धन भवन का स्वामी मंगल अपने उच्च राशि (मकर) में ५ अंशों पर स्थित है और चंद्रमा मम द्रष्टाण राशि मिथुनराशि में ३ अंशोंमें उपस्थित होकर स्थितमान है और लग्नेश कार्येश व चंद्रमा इन दोनों का परस्पर इत्यशाल योग है इससे उत्तम नामक कंबूल योग होता है इसी से पूर्वोक्त जैसा मध्यम) कंबूल योग भी कहा है इसमें धनका लाभ अधिक उत्तमनाम से होता, परन्तु मम द्रष्टा ।



मध्यम कम्बूल योग का उदाहरण ।

जैसे किसी ने इस प्रकार प्रश्न किया तो उस समय तुला लग्न है

उपरोक्त ग्रहों युक्त १० राशियों करते हैं। राशि में अर्धने हरा में विद्यमान है और धनधारा का भागी महान् २२ राशियों में धन राशि का करने हरा में विद्यमान है और चन्द्रमा इन राशियों में युक्त होकर मित्तम राशि का अपने मध्यम इच्छाणा में स्थित है यहाँ लघाधीश (युक्त) कार्याधीश (योग्य) और चन्द्रमा इन राशियों का परस्पर इच्छाणा योग है, इससे मध्यम नामक कम्बूल योग होता है, धन लाभ मध्यम होनेगा, पैसा कठना यह शर्तों भेद है ।



इसके प्रकार में मध्यम कम्बूल योग का लक्षण ।

पदोन्नेनापि मध्यं स्थादिति युक्तं प्रतीयते ।

नीचारिभ्येनेत्यशाले धनकम्बूलमुच्यते ॥ ४३ ॥

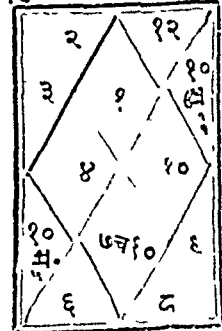
भाषार्थः—पद में तीन अर्थात् उनाम व मध्यम अधिकार में रहित परस्पर इच्छाणा को करने हुए लघाधीश व कार्याधीश के साथ सम अधिकार में स्थित चन्द्रमा यदि इच्छाणा को करने ना मध्यम नामक कम्बूल योग होता है, प्रमाण नहित इन योग को हमने वर्णन किया है, क्योंकि लगनेश और कार्याधीश चन्द्रमा इन राशियों का सम अधिकार प्राप्त है इस कारण यह मध्यम (मध्यम) नाम कम्बूल योग संसिद्ध हुआ, अब अधम कम्बूलयोग का लक्षण यह है कि अपने नीच व अपने शत्रु राशि में प्राप्त परस्पर इच्छाणा योग करते हुए लघाधीश और कार्याधीश के साथ सम अधिकार में विद्यमान चन्द्रमा यदि इच्छाणा (मिलाप) करता हो तो अधम नामक कम्बूल योग होता है, कारण कि चन्द्रमा सम अधिकार प्राप्त है और लघाधीश व कार्याधीश उन दोनों का अधिकार अथम है, इससे अधम नाम कम्बूल योग निरपरा हुआ ॥ ४३ ॥

मध्यम कम्बूल का लक्षण ।

जैसे किसी पृच्छक ने धन प्राप्ति निमित्त प्रश्न किया तो प्रश्न समय में

है उभका स्वामी मंगल १० अंशों करके कुम्भ राशि में बैठा है और धन भाव का स्वामी शुक्र १० अंशों से युक्त होकर कुम्भराशि में विद्यमान हैं और चन्द्रमा १० अंशों से तुला राशिमें विराजमान हैं, इन सबों का परस्पर इत्थशाल (मिलाप) है, इससे यह मध्यमनाम कम्बूल योग हुआ धन की प्राप्ति मध्यम होगी ऐसा कहना, यह ग्यारहवां भेद है ।

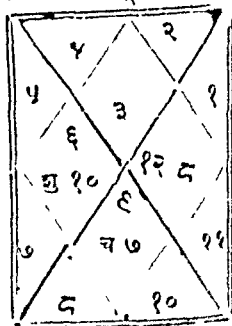
पुनःमध्यमकंबूलयोग



अथम कम्बूल का उदाहरण ।

जैसे किमी प्रश्नकर्ता ने पुत्र प्राप्ति विषे प्रश्न किया तो प्रश्न लग्न मिथुन जिनका स्वामी बुध अपनी नीचराशि (मीन) का ८ अंशों करके स्थित है, और पुत्र भाव का स्वामी शुक्र अपने नीचराशि (कन्या) में १० अंशोंसे युक्त होकर विराजमान है और चन्द्रमा अपने सम धन राशि अथवा मीन राशि में वर्तमान है और लग्नेश व कार्येश व चन्द्रमा में परस्पर इत्थशाल योग है इस कारण यह नाम कम्बूल योग हुआ यहां पुत्र की प्राप्ति अथम करिये यह माध्य कहना, यह बारहवां भेद है ।

अथमकंबूलयोगोयम्



अथमोत्तम कम्बूल योग का लक्षण ।

नीचरात्रुभगश्चन्द्रः स्वभोच्चस्थैरथशालकृत् ।

अथमोत्तमकम्बूलंपूर्वतुल्य फलप्रदम् ॥ ४४ ॥

भावार्थ—जो चन्द्रमा अपने नीच घर व शत्रु के घर में प्राप्त होकर अपने घर व अपने घर व में स्थित परस्पर इत्थशाल योग को करता हुआ लग्नेश व कार्येश के साथ इत्थशाल योग को करे तो अथमोत्तम नाम कम्बूल योग होता है, मंगल चन्द्रमा ना अतिकार अथम है और लग्नेश व कार्येश में शत्रु व शत्रु करिगार में प्राप्त है, इस कारण पूर्वार्थायों ने इसको अथम अथम नाम से कहा है, यह पूर्व के तुल्य फल को देता है ॥ ४४ ॥

अथमोक्षम कंचूल योग का उदाहरण ।

जैसे प्रश्न करने में मुख्य भाग के निमित्त प्रश्न किया है तो प्रश्नकर्ता स्वामी स्वयं अपने उत्पन्न राशि (मेष) में स्वामी करके स्थित है, और पुत्र (पंचम भाग का स्वामी मंगल अपने उत्पन्नराशि (मकर) में स्वामी में न होकर स्थित है और चन्द्रमा तीन अंशों में उत्पन्न होकर अपने तीन राशि में वृश्चिक में विराजमान इन तीनों का परस्पर मध्यम नामक अथमोक्षम कंचूल योग हुआ. यहां मुख्य वी भाग परस्पर से मिलेगी, यह नोटहवा धर है ।



अथमोक्षम कंचूल योग का उदाहरण ।

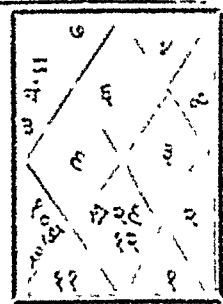
चन्द्रो नीचरिगेहस्यः स्वहृदादिगते न चेत ।

तदेत्य शालीकम्बूलमुच्यतेऽथममध्यमम् । ४५ ।

भाषाण -- यदि चन्द्रमा अपने नीच रा में प्राप्त होकर अपने शत्रु के घर में अपने हृदा व अपने उच्छ्वाण व अपने नरांश में स्थित होकर परस्पर इन्धशाल योग करता हुआ मन्त्रेण व कार्येश के साथ इन्धशाल करे तो अथम मध्यम नाम कंचूल योग होता है, यहां चन्द्रमा का अधिकार अथम है और लक्ष्मीजी व कार्येश का मध्यम अधिकार है, इससे यह अथममध्यम कंचूलयोग है

अथममध्यम कंचूल योग का उदाहरण !

जैसे निर्माण पुत्र प्राप्ति निमित्त प्रश्न किया तो उस समय अथममध्यमकंचूलयोग कंचूलग्न उसका स्वामीपुत्र तीन अंशों करके अपने हृदा में प्राप्त मकर राशिमें स्थित है, और पुत्र (पंचम भाग का स्वामी शनिश्चर २६ अंशोंसे युक्त होकर मीन राशि का अपने हृदामें विराजमान है तथा चन्द्रमा तीन अंशों से उपयुक्त होकर अपने नीच राशि (वृश्चिक) में विराजमान है और इन तीनों का परस्पर इन्धशाल योग है इससे अथममध्यम नामक कंचूलयोग हुआ पुत्र



नाम अन्यन्त प्रयास से होवेगा ऐसा कहना, यह चौदहवां भेद है।

अन्य अधम कम्बूल योग का लक्षण ।

इन्दुर्नीचरिगेहस्थः पदोनेनेरथशालकृत ।

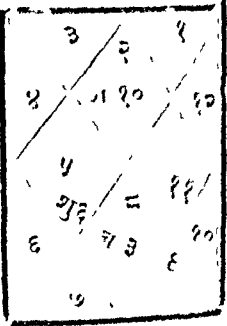
कम्बूलमध्यमं ज्ञेयं पूर्वतुल्यफलप्रदम् ॥ ४६ ॥

भाषार्थः—यदि चन्द्रमा अपने नीच राशि व अपने शत्रु के घर में स्थित होकर उत्तम मध्यम व अधम अधिकारों से रहित परस्पर सुथजिल योग को करने हुए लग्नाधीश व कार्याधीश के साथ इत्यशाल योग करे तो अधम नाम कम्बूल योग होता है, यहां चन्द्रमा का अधम अधिकार है और लग्नाधीश कार्याधीश का मम अधिकार है, इस कारण अधम नामक कम्बूल योग कहा है, यह पूर्वोक्त कम्बूल योग के समान फल को देता है ॥ ४६ ॥

अधम कम्बूल योग का उदाहरण ।

जैसे किमी ने राज्य लाभ निमित्त प्रश्न किया तो उस समय वृष लग्न उत्तम गाम्भी शुक्र लः अश्विों करके मिह राशि का चन्द्रमा भवन में स्थित है और राज्य (दाम) भाग का गाम्भी अनेक दम अश्विों में युक्त होकर वृष राशि पर मूर्ति में विद्यमान है और चन्द्रमा तीन अश्विों में अपने नीच राशि (दुग्धिर) पर ममम भाग में विद्यमान है और लग्नाधीश (शुक) कार्याधीश (शनि) और चन्द्रमा इन तीनों का परस्पर अन्यशाल योग होनेसे अधम नाम कम्बूल योग हुआ, यहाँ राज्यकी प्राप्ति अति यत्न से ही प्राप्त होवे ऐसा कहना यह पन्द्रहवां भेद हुआ ।

अधमकम्बूलयोगीयम्



अधम कम्बूल के लक्षण ।

नीचरिभन्धस्वेने नीचरिभगतः शशी ।

तदोथगती कम्बूलमवमावममुच्यते ॥ ४७ ॥

भाषार्थः—यदि चन्द्रमा अपने नीच राशि में, शत्रु की राशि में स्थित होकर अपने शत्रु के घर व अपने नीच राशि में प्राप्त परस्पर अन्यशालयोग

के ही मुख्यतः आदि योग विचारने चाहिये, यह जो कितने ही आचार्यों का मत है वह अयुक्त है कोई विशेष प्रमाण नहीं पाया जाता है, क्यों कि लग्नाशीश व कार्याशीश इन्होंने अपने नीच घरमें स्थित किसी एक ग्रहके दूसरे ग्रहका यदि इत्यशाल योग हों तो वह कार्यो (वांछित मनोरथों) का नाश करने वाला होता है ऐसा कहा गया, एवं लग्नेश कार्याश परस्पर एक राशि में स्थित होके इत्यशालयोग करें तो वह इत्यशाल कार्यो का नाश करने वाला होता है, यह कहा गया कि निग्रमे वहां समरमिह के बनाये हुये 'ताजिक संज्ञातंत्र' में प्रकृत कथे कहा है और उन्हीं का वाक्य यह है कि जैसे नीच नीच के साथ मुख्यतः (इत्यशाल) को करें तथा शत्रु शत्रु के साथ मिलाप करें तो वह कम्बल मनो- कामनाओं मिट करने वाला नहीं होता है, और इस योग में चन्द्रमा भी विनाशकारी होता है, यहां एक राशिमें स्थित ग्रहों के दूसरे योगका अर्थात् "रिपुणारि-पोंः" इस योग का संभार हो सकता है परन्तु 'नीचगम्य नीचेन' इस योगका संभार किसी प्रकार से नहीं दीया पड़ता है, और जो ग्रन्थकर्ता नीलकण्ठने विचार है सो तो प्रतिष्ठित आचार्यों के बनाये हुए ग्रन्थोंके लेखको अवलोकन कर निरा दिया है, यह विद्वज्जनों करके विचारणीय है ॥५२॥

फलोत्पत्ति ज्ञानार्थ कम्बलयोग के दूसरे भेद ।

लग्नकार्यपयोरित्यशाले चैकोऽस्ति नीचगः ।

स्वर्चादिपदहीनोऽन्योऽत्रेन्दुः कम्बलयोगकृत् ॥५३॥

भाव—यस्य अस्मिन् अधिकार में स्थित अर्थात् एक अधिकार में स्थित लग्नेश व कार्याश के चन्द्रमा करके इत्यशाल योग के रहते कम्बल योग कहा गया और इस समय उन्हीं लग्नेश और कार्याश के अधिकार भेदको कहते हैं, उन्हीं लग्नेश व कार्याश का इत्यशाल विचारना होंगे यहां उन्हीं लग्नेश व कार्याश में से एक घरने नीच राशि में बैठा हो, और दूसरा कार्यो (वांछित मनोरथों) वाली राशि, और अपने २ उन्हीं के अधिकार में न हो, किन्तु सम अधिकार में

स्त्रिया हीं शरीर इती मन अधिकार में स्थित होकर चन्द्रमा यदि इन्पदान्ना योग को करे तो कम्बूल योग होता है ॥ ५३ ॥

इष्टान् महिन कम्बूल योग का फल ।

तत्र कार्याऽल्पनाज्ञेया यथाजान्यन्यमर्धयन् ।

अन्यजातिः पुमानर्थतथैतत्कत्रयोविदुः ॥ ५४ ॥

भाषाणः—उक्त कम्बूल योग में बौद्धित कार्यों की अल्पता जाननी चाहिये, अर्थात् यह कम्बूल योग थोड़े फलों का देने वाला होता है, जैसे अन्य जाति वाला पुण्य विजातीय से जब वाचना करता है तब थोड़े अर्थ (धन) को पाता है. जैसे ही यह कम्बूल योग थोड़े फलों का देने वाला होता है, ऐसा पण्डित लोग मानते हैं ॥ ५४ ॥

गैर कम्बूल योग के लक्षण ।

यस्याधिकारः स्वर्क्षादिः शुभो नाप्यशुभोऽपि च ।

केनाप्यदृश्यमृत्तिश्च सशून्याध्वग ह्य्यते ॥ ५५ ॥

भा०—जिम ग्रह का स्वर्क्षादि अधिकार नहीं होवे अर्थात् जिम ग्रह का अपना घर अपना उच, हवा द्वेष्याण व नीचांश वाला शुभ फलों का देने वाला अधिकार नहीं होवे परे और अशुभ भी अधिकार नहीं होवे अर्थात् अपना नीचे घर व अपना शत्रु, वाला अशुभ फलों का देने वाला भी अधिकार नहीं होवे और किसी शुभ ग्रह में या पाप ग्रह से देखा न जावे तो वह शून्याध्वग (शून्य मार्गमार्गी) कहा जाता है, इस अर्थ में प्रमाण वाक्य कोई नहीं दीख पड़ता है, क्योंकि ममरमिह आदि आचार्यों ने नहीं कहा है इस कारण से हमें प्रमाण रहित ममभना चाहिये ॥ ५५ ॥

गैर कम्बूल योग का लक्षण ।

लग्नकार्येशयोरित्थशाले शून्याध्वगः शशी ।

उच्चादिपदशून्यत्वान्ने त्थशालोऽस्य केनचित् ॥ ५६ ॥

यद्यन्यर्क्ष प्रविश्येप स्वर्क्षाच्चस्थेत्थशालवान् ।

गैरिकम्बूलमेतत्तु पदोनेनाशुभं स्मृतम् ॥ ५७ ॥

भा०-लग्नेश व कार्येश का परस्पर इत्थशाल योग होवे और वहां जो चन्द्रमा शुन्य मार्गगामी हो और चन्द्रमा के साथ हो, लग्नेश व कार्येश इन्हीं में से किसी एक करके मुख्यशिल योग नहीं होवे ॥ ५६ ॥ और ऐसा चन्द्रमा यदि राशि के अन्त में वर्तमान होकर अगाड़ी राशि में प्रवेश करे और जिस राशि में प्रवेश किया हो वह राशि जिस ग्रह का अपना घर व अपना उच्च हो वह ग्रह इसी राशि में यदि स्थित होवे और उसी ग्रह के साथ चन्द्रमा यदि मुख्यशिल योग करे तो वह गैर कम्बूल योग होता है, यह गैर कम्बूल पूर्व कहे चन्द्रमा भेदों के समान फलों का देने वाला होता है यह विशेष जानना चाहिये और जो अन्य राशि में स्थित चन्द्रमा उसी राशि में स्थित स्वग्रह आदि मार्गकारों में स्थित ग्रह के साथ इत्थशाल योग करे तो यह गैरकम्बूल अशुभ फल देने वाला कहा है ॥ ५७ ॥

गैर कम्बूल का उदाहरण ।

लभ्ये सुखमिति प्रश्ने सिंहलग्ने रवि किये ।

अष्टाशौः मुखपः कुम्भे भौमोऽशोरविभिस्तयोः ॥ ५८ ॥

इत्थशालोऽस्ति तत्रेन्दुः कन्यायां चरमेंऽशके ।

स्वर्वादिपदहीनस्य नेत्थशालोऽस्ति केनचित् ॥ ५९ ॥

सम्बोच्चगोन शनिनाऽन्यर्त्तस्थे नेत्थशालकृत् ।

गैरिकम्बूलमन्येनमाहाय्यात्ताभदायकम् ॥ ६० ॥

भाव-जैसे किसी ने पूछा कि हमसे सुख प्राप्त होवेगा ? इस प्रश्न में अष्टाशौः मुखपः कुम्भे भौमोऽशोरविभिस्तयोः में युक्त होकर मेष राशि में स्थित है, गैर कम्बूल का (चौथे घर) का स्वामी मङ्गल चारह अंशों में है, चन्द्रमा के साथ है और उन दोनों लग्नेश (मेष) और कार्येश (मङ्गल) का परस्पर इत्थशाल योग है, तथा इस याप के स्थित चन्द्रमा नेत्थशालोऽस्ति तत्रेन्दुः कन्यायां चरमेंऽशके (नेत्रके अंश) के स्थित वर्तमान और स्वर्वादिपदहीनस्य नेत्थशालोऽस्ति केनचित् में से किसी के साथ सम्बोच्चगोन शनिनाऽन्यर्त्तस्थे नेत्थशालकृत् में वर्तमान चन्द्रमा के साथ है, यह गैरकम्बूल अशुभ फल देने वाला है,

शुभयोग का समय विशेष से फल पाक ।

केन्द्रस्य आपोक्लिमगं युनक्ति भूत्वादितो नश्यति कार्यमन्ते ।
अपोक्लिमस्थो यदि केन्द्रयातं विनश्य पूर्व भवतीत पश्चात्॥६३॥

भा०—यदि कार्येश निर्वल होवे और केन्द्र ११।४।७।१० स्थान में स्थित होकर आपोक्लिम ३।५।६।१२ स्थान में स्थित हुए लग्नाधीश के साथ इन्धशाल योग करे तो आदि में विशेष कार्य होकर अन्त में नाश हो जाता है और जो बलरहित कार्येश आपोक्लिम में स्थित होकर केन्द्र में वर्तमान लग्नाधीश के साथ इन्धशाल को करे तो पहिले विशेष कार्य नाश को प्राप्त होकर पश्चात् कार्य मिट्टि करे ऐसा कहना ॥ ३३ ॥

दृफालिकुन्थ योग ।

गन्दःस्वभोच्चादिपदे स्थित श्रेत्पदोनशीघ्रेण कृतेत्थशालः ।
तत्रापि कार्य भवतीति वाच्यं वक्रादिनिर्वीर्यपदे न चेत्स्यात्॥६४॥

भा०—गन्द गनियाना ग्रह अपने २ घर, उच्च द्रुष्काण; हहा, और न्याग में स्थित होकर शुभ अधिकार से रहित शीघ्री ग्रह के साथ यदि इन्धशाल योग करे तो भी अभीष्ट कार्य मिट्ट होता है, ऐसा कहना और यदि नीचगामी ग्रह अन्त हो, अपने नीच घर शत्रु राशिमें स्थित हो वा बर्ष हो तो अभीष्ट (मनोहित) कार्य की मिट्टि नहीं होती है, ऐसा कहना चाहिये ॥ ६४ ॥

दुन्धोन्ध दिवीर योग ।

दोषोन्नितो कार्यविलग्ननाथो स्वर्जादिगे नान्यतरोयुनक्ति ।
अन्यो यदा द्वो वलिनो तदान्यमाहास्यतः कार्यमुशन्ति सन्तः६५

भा०—यदि कार्येश के दोनों वीर्य (बल) हीन होंय अर्थात् कार्येश उच्च घर में हो वा बर्षा होकर नेजोर्हित होंवे उन दोनों वीर्य र कार्येश के से कोई एक ग्रह अपने घर, अपने उच्च, अपने द्रुष्काण, अपने हहा, र अपने न्याग में रहे हुए तीनों के साथ इन्धशाल योग करे तो इसका फल ही मदायक से वीर्यकार्य का लाभ होवेगा, बलरहित होने से कहा है. अन्त ग्रह दो अन्यग्रह अपने घर, व अपने

वृत्त, व कर्मों का दृष्टा में यदि वर्षिकनीचरटी में प्रथम होकर प्रत्यक्ष होय और अन्तर्गत या वर्षिकनीचरटी में से किसी एक के साथ इतना योग करे तो भी किसी अन्य की मदापना से वर्षिकनीचरटी होना ऐसा मदापना नहीं ले पायेगा किवा है ॥ ६५ ॥

वर्षिक योग का लक्षण ।

वर्षिकयोगस्ततो अन्यर्क्षगार्मादीनांशकर्मदः ।

दत्तेन्यम्मे कार्य करस्तर्षीरो लग्नकार्ययोः ॥ ६६ ॥

भा०—यदि वर्षिकनीचरटी या वर्षिकनीचरटी इन दोनों का परस्पर इत्यन्तान योग नहीं होय, वरन् लग्नेन व कार्येषु इन्में से कोई एक प्रथम गृह भागि के अन्तर्गत शंश में वर्तमान होकर कार्य भागि में जाना जाना होय तो वह प्रथम कार्य की भागि में गिना यह के नियम में देना है इतने पर तर्षीर योग होता है, जिसे भाषनी भाषा में तर्षीर कहते हैं और यदि कार्य की भागि में गमन करने वाला गृह अपने २, ५, ८, ११, व १२ के भागि आदि वर्तनी से युक्त होय तो वह योग अभीष्ट कार्यों की विधि करने वाला होता है ॥ ६६ ॥

कुम्भयोग का लक्षण ।

लग्नेऽथकेन्द्रे निकटेऽपिवास्य विलग्नदर्शी स्वगृहोचच्छक्रे ।

मुसलद्वे स्वे विजहदगो वा वली ग्रहो मध्यगतिस्त्वशीघ्रः ॥ ६७ ॥

भा०—कुम्भ शब्द का यावनी भाषा में वली गृह कहा जाता है, वही वन अनेक प्रकार का है, उनमें कितनेक भेदों को कहते हैं—सबों की अपेक्षा नम में गिना रश्मिदि गृह वली होता है, उसके अभाव में केन्द्र १ । ४ । ७ । १० । १३ में गिना गृह वली जानना, परंतु लग्नेन गृह की अपेक्षा से केन्द्र ५ गृह न्यून वली जानना उसके अभाव में केन्द्र के निकट परापर २ । ५ । ८ । ११ स्थान में गिना गृह वली होता है, परंतु केन्द्र स्थ गृह की अपेक्षा इसको न्यून वली जानना, उसके अभाव में जो गृह लग्न को देखता है वह वली कहा जाता है, तथा जो गृह अपने परा, अपने उच्च, अपने दृष्टकाण अपने नवाशा व हृदया में वर्तमान है वह भी वली होता है, तथा मध्य गति

बंला अर्थात् ५६ कला ५ विकला वाला ग्रह और अल्प गति वाला ग्रह बनाने होता है ॥ ६७ ॥

कुन्य के अन्य भेदों का वर्णन ।

कृतोयदयो मार्गगतिः शुभेन युतेक्षितः क्रूरस्वगस्य दृष्ट्या ।

चुनाव्ययानाधिगतो न युक्तः क्रूरेण सायं च सितेन्द्रभौमाः ॥ ६८ ॥

यदोदयं ते पररात्रिभागेर्जीवाऽर्कजा वह्निहराः सवीर्याः ।

अन्ये निशीनस्य नवैकभागे स्थिताः स्थिरक्षेत्रे च वलेन युक्ताः ॥ ६९ ॥

भाषार्थः—जिम ग्रह का उदय हुआ हो वह भी चलवान होता है और जो ग्रह मार्ग होकर शुभ ग्रहों में युक्त व देखा जाने उसको बली कहते हैं, तथा जो पाप ग्रहों की (क्षुत्कार्या) चौकी, दसवीं, सातवीं वा पहली गति में नहीं देखा जाय वह ग्रह बली होता है और जो क्रूर ग्रहों से युक्त नहीं होवे वह भी बली कहा जाता है, इस प्रकार सामान्यता से ग्रहों का यह प्रकार इस समय समय बल कहते हैं, शुक्र चन्द्रमा व मङ्गल ये ३ ग्रह सादृश्यात् से उदय होवे तो चलवान होते हैं ॥ ६८ ॥ बृहस्पति व शनिश्चर से दायें ग्रह और रावि के ऊपर भाग में बली कहे जाते हैं, तथा पुरुष संज्ञक ग्रह मङ्गल, बृहस्पति व शनि से दिन में बली जानना, इनमें अन्य ग्रह चन्द्र, बुध वीर्य शुक्र व शनि से चाणों रात्रि में बली होते हैं और मूर्य जिम रात्रि में है व हो उसी रात्रि में यदि ग्रह स्थित हों तो चलवान होते हैं, इससे " अन्ये निशीनस्य नवैकभागे स्थिताः " ऐसा पाठ है और " अन्ये निशीनस्य नवैकभागे " ऐसा भी पाठ कितनेक पाण्डित्य कहते हैं, जैसे कि काल रात्रि में मूर्य है और बीच अंशों पर विद्यमान होकर मिथुन के नवांग में बुध यदि इस मिथुन में ग्रह विद्यमान होवे तो चलवान जानने चाहिये, तथा यह दिन वृहस्पति और बृहस्पति इन स्थिर रात्रियों में पड़े हुए ग्रह चलवान कहे जाते हैं ॥ ६९ ॥

इस प्रकार का अर्थन ।

विषयभङ्गुर्धनस्य विषद्वाद्भङ्गुर्धनस्य औजसगाः पुमानः ।

इमे एव नवुर्धनस्य विषद्वाद्भङ्गुर्धनस्य औजसगाः पुमानः ॥ ७० ॥

भाषा—यों मंडल ग्रह यों मंडल नक्षत्र पर्यन्त चलवाने होते हैं और यद्यपि मंडल ग्रह यों मंडल यों पर्यन्त चलाने पर्यन्त चली करते जाते हैं, तथा विषय यों में चले हुए पुनः मंडल ग्रह अविगत चलाने होते हैं, और यद्यपि मंडल ग्रह यों मंडल यों विद्यमान होयें यों चली होते हैं इन पूर्वोक्त अनेक स्थितियों में विशेष रूप से विचार को विचार कर शुभ फल कठना चाहिये ॥ ७० ॥

दृक् योग का लक्षण ।

लग्नात्पश्चात्मेत्येऽनृजुरिगृहमां नीचगो वक्रगामो कूरे-
शुक्लेऽस्तगो वा यदि न मुखशिनी कूरनीचारिभस्थैः । लुहृ-
ष्ट्या कूरदृष्टो व्ययरिपुसृतिगैरिस्थशालं विधिन्सुः कुर्वन्वा
निर्बलो यः स्वगृहनगभगो राहुपुच्छास्पवती ॥ ७१ ॥

भा०—यहां दृक् शब्द को गारुडी भाषा में कमजोर कहते हैं, यह निर्बलत्व अनेक प्रकार है जो कहते हैं,—वर्षलक्ष, मामलक्ष, दिनलक्ष य प्रत्येक लक्ष में जो ग्रह ६०/१२ स्थानों में से किसी भी स्थान में विद्यमान हो तो वह चलहीन होता है, जैसे ही यही ग्रह, शत्रु राशि में स्थित ग्रह, नीचराशि स्थित ग्रह निर्बल जानना, तथा वक्राभिजापी ग्रह य पापग्रहों से युक्त ग्रह निर्बली होता है, और यदि पापग्रह शत्रु राशि में स्थितग्रह य नीचराशि में स्थित ग्रहों के साथ जो ग्रह इत्यशाल करे, वह निर्बल जानना, और जो ग्रह पापग्रहों से क्षुद्रदृष्टि अर्थात् पहले नीचे मातर्वं दशमे स्थानगत दृष्टि से देखा जायें तो वह हीन होता है, तथा जो गृह चारहवें, छठे, मातर्वे स्थान में चले हुए गृहों के साथ इत्यशाल योग करे अथवा इच्छा करता हो, तो भी उसे निर्बल कहते हैं, और जो ग्रह अपने घर से सातवें स्थान में चला होय तो वह निर्बल होता है, जैसे मंगल का सप्तस्थान है उससे मातर्वी तुलाराशि हुई यदि इमें कोई गृह स्थित होयें तो उसे निर्बल कहते हैं अर्थात् जिन राशि में चला हुआ गृह स्थित होयें वह राशि गृह के अपने घर से यदि मातर्वी दीर्घ पड़े तो निर्बल समझना चाहिये, और राहु के युक्त अंश पृथ्वी और मोग्य अंश मुख्य जानना, यहां जो गृह स्थित होयें तो उसे चलहीन जानना चाहिये ॥ ७१ ॥

अन्य अशुभ प्रकारों का वर्णन ।

अनीक्षमाणस्तनुमस्तभाग स्थितः स्वभोच्चादिपदैश्चशून्यः ।
कुरे मराकी न स वीर्ययुक्तः कार्यं विधातुं नविभुर्यतोऽसौ ॥७२॥

भावार्थ—जो यह लग्न को नहीं देखता है वह बलहीन जानना और जो अन्न भाग में स्थित हो तो वह भी निर्बली होता है अथवा सूर्य जिस राशि नवांश में हो उसमें मारवा जो नवांश उममें बैठा हुआ ग्रह निर्बली जानना तथा जो ग्रह अपने घर व उच्च व अपने द्रोष्काण वा नवांशादि अधिकांश में अन्न हो तो वह निर्बली होता है और जो ग्रह पापग्रहों के साथ ईश्वरक योग करे तो वह बलवान् नहीं होता है, जिमसे कि यह ग्रह अशुभ कार्य को करने के अर्थ समर्थ नहीं होता है इस कारण आचार्य ने उम ग्रह को बलहीन वर्णन किया है ॥ ७२ ॥

चन्द्रमा के अन्यन्त निर्बलत्व का वर्णन ।

चन्द्रमर्षाद्द्वादशे वरिचकाद्ये खड्गेनेष्टोन्त्ये तुलायां विशेषात् ।
मर्शाशेनाष्टमृतिर्न सर्वेष्टो ज्ञेयः शून्यमार्गा पदोनः ॥ ७६ ॥

भावार्थ - सूर्य जिस राशि में स्थित हो उम राशि में बारहवें जो चन्द्रमा विद्यमान हो तो वरिचक राशि के पार्श्व (पश्चिम गण्ड) में चन्द्रमा स्थित हो तो निर्बल होता है और तुला राशि के उत्तरगण्ड (पश्चिम भाग) में चन्द्रमा विद्यमान करके उम फलों का देने वाला नहीं होता है, तब ही उम राशि में चन्द्रमा विद्यमान हो उम राशि के स्वामी करके यदि देखा जाये तो अशुभ मरपूर्ण ग्रहों में देखा न जाये तो भी निर्बल जानना, तथा जो चन्द्रमा अशुभ राशि में स्थित हो तो और अधिकांश में रहित हो तो अशुभ फल का देने वाला जानना चाहिये ॥ ७६ ॥

चन्द्रमा के अन्य दशकयोगों का वर्णन ।

लीलात्तु मन्वेनाशुभो जन्मकाले पृच्छायां वा चन्द्र पर्व विचिन्यः
शुभो नैव नृणां कालेऽस्मिन्तुदृष्टव्यं वीचनेनाऽशुभोऽसौ ७७

भा०—शोक पन्डमा, जो कृष्ण पक्षकी अष्टमी में शुक्ल पक्षकी अष्टमी तक रहता है तथा राशिके अन्तिम अर्धमें अन्तमें नरांगमें पन्डमा स्थित हो तो निर्णय होता है, तथा जन्म लग्न प प्रश्न लग्न में पन्डमा विन्तप कर चिन्तयन करना चाहिये, और शुक्ल पक्षमें मंगल कृष्ण पक्षमें शनीश्वर नेत्रों पक्ष नहीं होते हैं, यदि वे दोनों स्थान दृष्टि में (बुद्धदृष्टि) देखने हों तो यह चंद्रमा मंगल पक्षों को नहीं देगा है ऐसा विद्वान् जानना ॥ ७४ ॥

पन्डमा के दोषात्परकत्व का चयन ।

शुक्ले दिवा नृगृहगोऽर्कसुतः शशांकं कृष्णोक्नुजे निशि ममर्च
गतः प्रपश्येत् । दोषात्पतां वितनुतेऽपरथा बहुत्वं प्रश्नेऽधवा
जनुपि बुद्धिमतोहनीयम् ॥ ७५ ॥

भा०—शुक्ल पक्षमें दिनके विषय पुरुष राशि (मे० मि० मि० तु० ध० कु०) में स्थित शनीश्वर यदि चंद्रमाको देखता होवे तो दूरफयोग की शक्तता को देता है, अन्यथा अर्थान् यदि शनीश्वर नहीं देखता होवे तो दूरफयोग को पहचान को देवता है, तथा कृष्ण पक्षमें रात्रि समय यदि मंगल ममराशि (बु० क० क० इ० म० मी०) में स्थित होकर यदि चंद्रमाको देखे तो दूरफयोग को न्यून करता है, यदि मंगल नहीं देखता होवे तो बहुत दोषों को प्रकट करता है, यह सम्पूर्ण विचार प्रश्न लग्न अथवा जन्म लग्न में बुद्धिमान पंडितों करके विचार करना योग्य है और यह लग्न आदिमें भी चिन्तयन करना, यह पौटश योगोंका विषय ममाप्त हुआ ॥ ७५ ॥

सम्पूर्ण ग्रहों के चार हर्ष स्थानों का वर्णन ।

नन्दत्रिपङ्कलग्नभवरर्चपुत्रव्यया इनाद्वर्षपदं स्वभोजम् ।

त्रिभं त्रिभं लग्नमतः क्रमेण स्त्रीणां नृणां रात्रिदिने च तेषु ॥ ७६ ॥

भा०—तहां पहले हर्ष स्थान को दिखाने हैं, कि सूर्य को आदि से, सम्पूर्ण ग्रहों के नामादि स्थानों में स्थित प्रथम होने से हर्ष पल कहे हैं जैसे जन्म लग्नमें सूर्य, तीसरे स्थान में चन्द्रमा, छठे घरमें मंगल, लग्नमें बुध, पञ्चाश स्थानमें गुरु, पंचम स्थान में शुक्र, चारहवें भागमें शनीश्वर स्थित हो तो हर्षद जानना, अब दूसरे हर्ष स्थान को दर्शावते हैं, जब ग्रह अपनी

उद्गाहसुनिसन्तापाः श्रद्धार्पातिर्वलंतनु ।

जाद्यन्यापारसहमे पानीययतनरिपः ॥ ३ ॥

शौचोपायदरिद्रत्वंगुरुताम्बुपवाभिधम् ।

बन्धनं दुहिताऽश्वश्रपनाशत्सहमानिह ॥ ४ ॥

भाषा—इहा वनम एव च आदि पञ्चान महामों के नाम निम्नरत महामों के नामों का प्रकार निम्न है— १ पण्य, २ गुरु, ३ ज्ञान (विद्या), ४ वज्र, ५ मित्र, ६ महाभय, ७ आशा, ८ सामर्थ्य, ९ भ्राता, १० गौरव, ११ शान्ति, १२ शान्ति, १३ माना, १४ सुख, १५ जीव, १६ अम्बु, १७ कर्म ॥ १ ॥ १८ गौरी, १९ महान्, २० शक्ति, २१ सगा, २२ ज्ञान, २३ पद्म, २४ बन्धन, २५ मन्त्र, २६ परदेश, २७ धन, २८ अन्वयाग, २९ अन्य कर्म, ३० धर्मिक, ३१ कार्यसिद्धि ॥ २ ॥ ३२ विवाद, ३३ पत्नी, ३४ सन्ताप, ३५ श्रद्धा, ३६ शक्ति, ३७ वन, ३८ देह, ३९ जादय, ४० व्यापार, ४१ पानीययतन, ४२ शत्रु ॥ ३ ॥ ४३ शौच, ४४ उपाय, ४५ दरिद्रत्व, ४६ गुरुता, ४७ अम्बुपव, ४८ बन्धन, ४९ दुहिता, ५० अश्व, ये पञ्चान महामों हैं ॥ ४ ॥

पुण्य सहम का साधन ।

सूर्यो नचन्द्रान्वितमन्हिलसंवीन्द्वर्कयुक्तनिशिपुण्यसंज्ञम् ।

शोध्यर्क्षशुद्धाश्रयभान्तराले लसंनचेत्सैकभमेतदुक्तम् ॥ ५ ॥

भा०—जो दिन में चर्ष प्रवेश होवे तो चन्द्रमा में सूर्य को घटा देवे, यदि राशि में चर्ष प्रवेश होवे तो सूर्य के विषे चन्द्रमा का शोधन करना अनन्तर शेष में लग्न को जोड़ देना और आगे कहे अनुसार एक और जोड़ना तो पुण्य सहम होता है, अब सम्पूर्ण महामों के मायनों में विशेष संस्कार कहते हैं कि शोध्य राशि और शुद्धाश्रय राशि इन दोनों के बीच में यदि लग्न नहीं होवे तो महम में एक राशि को जोड़ देना चाहिये अर्थात् जो ग्रह कम किया जाय (घटाया जावे उसे) शोध्य कहते हैं, और जिससे ग्रह शोधा जाय वह शुद्धाश्रय (शोधक) कहा जाता है, इन दोनों ग्रहों के राशियों के बीच में यदि लग्न नहीं होवे तो कहे हुए राश्यादि पुण्य सहम में प-

गुरु विद्या सहस्र का उदाहरण ।

पुण्य सप्तम विपरीत जमानुसार गुरुविद्या सहस्र माथने है, शोधक
 मूष १ १० । ३० । ३१ इमें शोधक पुण्यमा ५१२५१७ को घटाया तो ३१५
 २ । १२ यह शोधक इमें लग्न । १८ । २० । २१ और २ को जोड़ दिया
 तो ५१ । ३१ । ३२ । ३३ यह गुरु सहस्र और विद्यासहस्र सिद्ध हुआ यहाँ शोधक
 और शोधक के बीच में लग्न नहीं मिलता है इस कारण यहाँ एक राशि और
 लग्न नहीं है । अब यहाँ सहस्र का उदाहरण यह है, कि शोधक गुरुसहित
 ८ । १२ । ३४ । ३३ इमें शोधक पुन्य सहस्र ६ । ३ । ४६ । ५७ को घटाया
 तो १० । २६ । ३२ । ३६ यह शोधक इमें लग्न ५ । १८ । २० । २१ जोड़
 दिया तो १५ । ४ । ५३ । ३२ यह शोधक हुआ शोधक शोधक शोधक शोधक शोधक
 एक राशि नहीं एक करने में । ४ । ५० । ३५ यह यशः सहस्र सिद्ध हुआ ।

मित्र सहस्र का माथन ।

पुण्यसहस्रगुरुसहस्रतन्मयजंघन्ययोनिशिसितान्वितंचतत् ।

नैकतातनुवदुकरीतितो मित्रनामसहस्रं विदुर्द्धाः ॥७॥

भाषा—इतने में वर्ष मंत्रों होयें तो गुरु सहस्र में पुण्य सहस्र को घटाये
 और राशि में वर्ष मंत्रों होयें तो इतने विपरीत अर्थात् पुण्य सहस्र में गुरु
 सहस्र को घटाये और गुरु को संयुक्त कर देंगे, (यहाँ लग्न के युक्त करने की
 जगह गुरु को संयुक्त किया है) अतन्तर शोधक राशि और शोधक राशि के
 मध्य में यदि गुरु न होयें तो एक कल्प राशि को जोड़ देंगे, तो उसे
 मित्र सहस्र कहेंगे ॥ ७ ॥

मित्र सहस्र का उदाहरण ।

जैसे शोधक गुरुसहस्र ५ । ३ । ३० । ३५ इमें शोधक पुन्य सहस्र ९ । ३
 ४६ । ५७ का घटाया तो ८ । ४० । ३८ इमें गुरु ८ । १५ । ३१ । ४८
 संयुक्त किया तो १५ । १६ । १६ । १६ यह मित्र सहस्र हुआ यहाँ शोधक शोधक
 के अन्तर्गत लग्न उपस्थित है इसकारण एक राशि जोड़नेकी आवश्यकता नहीं ।

सहात्म्य सहस्र और आशा सहस्र का साधन ।

पुण्याद्भौमं शोधवेदुक्त्वत्स्यान्माहात्म्यं तन्नक्रमस्माद्विलोमम् ।

सामर्थ्य और भाव महम का उदाहरण ।

यहाँ महमर्ष्य महम साधन में लग्न चार्मा महम है इसके गृहस्थति ५१
 २५२५१३ में महम ८१२५१३५ को घटाया तो ६१ । २६ । ५८ । १० शेष
 इसमें लग्न ५१२५१३ । ५६ को जोड़ दिया तो ० । १५ । ८ । २८ यह सामर्थ्य
 महम हुआ, यहाँ शेष शेषक के बीच लग्न है इसमें शेषता नहीं किया,
 अब साधु महम का उदाहरण इस प्रकार है कि गृहस्थति ५१६ । २४ । १३ में
 शेषमर्ष्य ६१२५१३५२६ को घटाया तो ५१२५१३५३७ में लग्न शेषकता
 नस्कार से एक राशि और जोड़ दिया तो ३१५१३५५३ यह राश्यादि साधु
 महम नसिद्ध हुआ ॥

गौरव, राज और तात महमों का साधन ॥

दिने गुरोधन्द्रमपास्य नक्तं रवि क्रमादर्कविधु च देयो ।

रीत्योक्त्या गौरवमर्कमाकेरपास्य वामं निशि राजतातो ॥१०॥

भाषायाः—दिन में वर्ष प्रवेश होय तो गृहस्थति में चन्द्रमा को घटाये और
 शेष में रवि को जोड़े राशि में वर्ष प्रवेश होय तो गृहस्थति में रवि को घटाकर
 चन्द्रमा जोड़ देवे तो गौरव महम होता है; और सेकता करने में शेष
 शेषक के बीच में दिन को सूर्य राशि को चन्द्रमा न होवे तो सेकता करना
 कर्षति एक राशि जोड़ना; अब राज महम और तात महम का साधन महम
 यह है कि दिन में वर्ष प्रवेश होय तो शेषमर्ष्य में सूर्य को घटावे, राशि में
 विपरीत वर्षान् रवि में शेषमर्ष्य को घटाये लग्न जोड़ उक्तवत् सेकता करने से
 राजा महम र तात महम ये दोनों नसिद्ध होते हैं ॥ १० ॥

गौरव, राज और तात महमों का उदाहरण ।

यहाँ दिन में वर्ष प्रवेश है तो गृहस्थति ८ । १९ । ३४ । १३ में चन्द्रमा
 ५१२५१३७ को घटाया शेष ३१२७१३५२६ इसमें सूर्य ९ । ७ । ३० । ६
 जोड़ दिया तो ० । ४ । ५४ । ३२ इसमें नस्कार रीति से एक राशि जोड़नेसे
 राश्यादि ३१५१३५३२ यह गौरव महम हुआ, अब राज तात महम साधन
 का प्रकार ये है कि शेषमर्ष्य ६ । २२ । २४ । ३६ में सूर्य ६।७।३०.६ को
 घटाया शेष ६।३।५४।३७ में लग्न जोड़ दिया तो राश्यादि ३०।३।४।४६ यह
 राज महम और तात महम नसिद्ध हुआ ॥

माता पुत्र जीवित और अश्वि सहमों का साधन ॥

मतिन्दुतोपास्यसितं विलोमं नक्तं सुतोऽहर्निशमिन्दुमीज्यात् ।
स्याजीविताख्यं गुरुमार्कितोऽन्हि वामं निशीदं सममश्वयाम्बु ११

भाषार्थ—यदि दिन में वर्ष प्रवेश होवे तो चन्द्रमा में शुक्र को घटावे और रात्रि में विषगीत अर्थात् शुक्र में चन्द्रमा को घटावे; अनन्तर लग्न को मिलाय उक्तवत् सैकता करे तो मातृ सहम होता है, और दिन व रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति में चन्द्रमा को घटाय लग्न जोड़ सैकता करने से पुत्र सहम होता है, और दिन में वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति को शनैश्चर में घटावे रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो बृहस्पति में शनैश्चर को घटावे अनन्तर लग्न जोड़ सैकता करने से जीवित नाम सहम होता है, और अश्वि सहम साधन में माता सहम के समान किया जाती है ॥ ११ ॥

माता पुत्र जीवित अश्वि सहमों का उदाहरण ॥

यदि दिन में वर्ष प्रवेश है तो चन्द्रमा ५ । २२ । ६ । ४७ में शुक्र ७ । १५ । ३१ । ४८ को घटाया तो शेष १०।६।३७।५९ लग्न जोड़ा तो १०। २४।४८।१५ यह मातृमादि माता सहम मिष्ट दृश्या अब पुत्र सहम की रीति यह है कि बृहस्पति ८ । १६ । ३४ । १३ में चन्द्रमा ५ । २२ । ५ । ४७ को घटाया तो शेष २ । २७ । २४ । २६ इसमें लग्न जोड़ा और पूर्वाक्त मरकार का और एक रात्रि जोड़ने में ५ । १५ । ३४ । ५२ ये मातृमादि पुत्र सहम मिष्ट दृश्या जीवित सहम की रीति यह है कि शनैश्चर ६ । २२ । २४ । ३६ में बृहस्पति ८ । १५ । ३४ । १३ को घटाया तो शेष में १० । २ । ५०। २३ से लग्न जोड़ दिया तो मातृमादि १० । २४ । ०० । ३६ यह जीवित सहम दृश्या इन्द्र सहम की रीति माता सहम के समान जाननी, इस कारण १ । २४ । ४८ । १५ यह अब सहम दृश्या ॥

वर्ष में शनैश्चर सहमों का साधन ॥

तमेतमात्रात्रिंशत् नामदुर्कं रोगाख्यमिन्दुं तनुत्, मदेव ।
श्यान्मन्त्रयोः लग्नार्कमिन्दुनोन्दि वामं निर्गान्दुं तनुत्पमदाकान् १२
भाषार्थ—यदि वर्ष प्रवेश हो तो शनैश्चर में बृहस्पति को घटा दे और रात्रि



गुरु को घटावे लग्न जोड़ने की जगह में यहां शेष में बुध को जोड़ देवै ।
पूर्ववत् शोध्य शोधक के मध्य में बुध न होवे तो एक और जोड़ देवै तो
महम सिद्ध होता है ॥ १३ ॥

कलि, क्षमा, शास्त्र सहर्षों का उदाहरण ।

यहां दिन में वर्षप्रवेश है तो गुरु ८।११।३४।१३ में मंगल ८।२२।३६।
को घटाया तो शेष ११।२६।५८।१२ में लग्न जोड़ दिया तो ०।५।८।२०
यह राश्यादि कलिमहम क्षमा सहम सिद्ध हुआ, शास्त्र सहर्ष का उदाहरण
यह है कि बृहस्पति ०।५।३४।१३ में शनि ६।२।२४।३६ को घटाया तो शेष
१।०।६।३७ इसमें लग्न जोड़ने की जगह में बुध ८।१२।१६।६ जोड़ देने से
राश्यादि १।०।६।२५।४६ यह शास्त्र सहम सिद्ध हुआ, यहां शोध्य शोधक के
शन्नर्गत बुध है इस कारण सँकता नहीं की गई ॥

चन्धु, चन्द्रक और मृत्यु सहर्षों का साधन ॥

दिवानिशं ज्ञान्छशिनं विशोध्य बन्ध्वाख्यमेतन्निशिवन्दकंस्यात् ।
चामं दिवैतन्मृतिरष्टमर्चादिन्दुं विशोध्योक्तवदार्कियोगात् ॥१४

भाषार्थ— दिन में व रात्रि में वर्षप्रवेश हो बुध में चन्द्रमा को घटाया लग्न
मित्राय उक्तवत् सँकता करने से चन्धु महम होता है, और रात्रि में वर्ष-
प्रवेश हो तो बुध में चन्द्रमा को घटावे, दिन में वर्षप्रवेश हो तो निपर्यय
अर्थात् चन्द्रमा में बुध को घटाया लग्न जोड़ पूर्ववत् सँकता करे तो चन्द्रक
महम सिद्ध होता है, तथा दिन व रात्रि में वर्षप्रवेश होने से अष्टम भाव में
चन्द्रमा को घटाया लग्न जोड़ने की जगह में शनैश्चर को जोड़ उक्तवत्
सँकता करने से मृत्यु महम का मान होता है ॥ १४ ॥

चन्धु, चन्द्रक और मृत्यु सहर्षों का उदाहरण ॥

यह ८।१२।१६।६ में चन्द्रमा ५।०।३।४७ को घटाया तो
शेष ३।०।३।३० में लग्न और उक्तवत् सँकता करने से एक और
दिन व रात्रि में वर्षप्रवेश हो बुध में चन्द्रमा को घटाया लग्न जोड़ पूर्ववत् सँकता करे तो चन्द्रक
महम सिद्ध होता है, तथा दिन व रात्रि में वर्षप्रवेश होने से अष्टम भाव में
चन्द्रमा को घटाया लग्न जोड़ने की जगह में शनैश्चर को जोड़ उक्तवत् सँकता करने से मृत्यु महम का मान होता है ॥ १४ ॥

१२२२१४७ को घटाने से शेष १२११३६१४३ इसमें लगनके स्थान में शनैश्चर १२२२२४२६ को जोड़ने से १२३३५४१९ यह मन्वु सहम हुआ यहाँ शीघ्र तोषक राशि के मन्वयम शनि परमान है, इस कारण एक राशि अन्य जोड़ने की आवश्यकता नहीं है ॥

देशान्तर और वर्ष सहमों का साधन ।

देशान्तराख्यं नवमाद्विशोध्य धर्मेश्वरं सन्ततमुक्त्वत्स्यात् ।

अहर्निशं वित्तपमर्थभावाद्विशोध्य पूर्वोक्तवदर्थसदा ॥ १५ ॥

भा०-दिनमें व रात्रिमें वर्ष प्रवेश होने से नवम भागमें नवम भाग स्वामी हो यद्यपि अन्तर लगन और पूर्वान्तर सेना पर तो देशान्तर सहम होता है, और दिन व रात्रिमें वर्ष प्रवेश होने हुए दूसरे भागमें दूसरे भागके स्वामी को घटाए देयें उसमें लगन जोड़ उक्त रीति से संकता करने से देशान्तर सहम होता है ॥ १५ ॥

देशान्तर और वर्ष सहम का उद्धारण ।

नवम भाग १२१२१४७ में नवम भागका स्वामी (वृहस्पति) ८ । १२३३४२३ को घटाया घटाने से शेष १२१२१५४३१ इसमें लगन मिलाने से राश्यादि ०।१४४४७ यह देशान्तर सहम हुआ अर्थ सहम साधनार्थ धन भाग १२३३४७० में धन भाग स्वामी (शुक्र) ७।२५३१४१ को घटाने से शेष १२१२१७४६ इसमें लगन मिलाने से राश्यादि ६।१६२१५ यह वर्ष सहम हुआ ।

परदारा, अन्य कर्म, और वणिक सहमों का साधन ।

सितादपास्याकर्मथान्यदाराद्वयं सदा प्राग्बदथान्यकर्म ।

चन्द्राच्छनिं वाममथो निशायांशथद्वण्णियं दिनचंदकोक्त्या ॥१६॥

भा०-दिन में वा रात्रि में वर्ष प्रवेश हो शुक्र में सूर्य को घटाए लगन जोड़ पूर्वान्तर संकता करने से परदारा (अन्यस्त्री) सहम होता है, और दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमा में शनैश्चर को घटावे, रात्रि में शनैश्चर से चन्द्रमा का साधन करके लगन मिलाए उक्तवत् संकता करें तो अन्य कर्म (परकार्यकारी) सहम होता है और दिनमें व रात्रि में वर्ष प्रवेश हो वणिक सहम के साधन

में वन्दक महम के समान क्रिया करै अर्थात् मदा चन्द्रमा में बुधको शोधन करके लग्न जोड सकता करै तां वणिकसहम होता है ॥ १३ ॥

एरदारा, अन्य कर्म, वणिक सहमों को उदाहरण ।

शुक्र ७।१५।३।१४८ में सूर्य ९।७।३०।६ को घटाया तो शेष १०।८।१।४२ इमें लग्न जोडा तो राश्यादि १०।२६।११।५८ यह अन्य द्वारा महम हुआ अन्य कर्म महम साधनार्थ चन्द्रमा ५।२२।६।४७ में शनेश्चर ६।२२।२४।३६ का घटाया तो शेष १०।२९।४५।११ इसमें लग्न जोडने से राश्यादि ११।१७।५५।२७ यह अन्य कर्म सहम हुआ वणिक सहम साधनार्थ चन्द्रमा ५।२२।६।४७ में बुध ८।१२।१६।६ को घटाया तो शेष ६।१५।३।३८ इमें लग्न जोडने से राश्यादि ९।२८।३।५४ राश्यादि वणिकसहम हुआ ॥

कार्य मिद्धि और विवाह सहमों का साधन ॥

शनेदिवाकनिशचन्द्रमाकेविशोध्यसूर्येन्दुमनाथयोगात् ।

स्यात्कार्यमिद्धिःमतन्विशोध्यमन्दंसितास्यात्तुविवाहसज्ञ ॥ १७ ॥

भा०—जो दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो शनेश्चर में सूर्य को घटाकर जिन राशि में मिला हो उस राशि स्यामी को जोड देई, और राशि में वर्ष प्रवेश हो तो शनेश्चर में चन्द्रमा को घटाये चन्द्रमा जिन राशि पर हो उस राशि स्यामी को जोड देई अमन्तर एक संस्कारवत् मकरता करै तो कार्य मिद्धि सहम सिद्धि होती है और विवाह राशि में प्रथम मदा वर्ष प्रवेश होने में शिवाय महम साधनार्थ शुकमें शनेश्चर को घटाई और लग्न मिलाय पूर्वात्न, मकरता करै तो विवाह सहम होता है ॥ १७ ॥

कार्य मिद्धि और विवाह सहमका उदाहरण ॥

शुक्र ६।१५।३।१४८ में सूर्य ९।७।३०।६ को घटाया तो शेष १०।८।१।४२ इमें लग्न जोडा तो राश्यादि १०।२६।११।५८ यह अन्य द्वारा महम हुआ अन्य कर्म महम साधनार्थ चन्द्रमा ५।२२।६।४७ में शनेश्चर ६।२२।२४।३६ का घटाया तो शेष १०।२९।४५।११ इसमें लग्न जोडने से राश्यादि ११।१७।५५।२७ यह अन्य कर्म सहम हुआ वणिक सहम साधनार्थ चन्द्रमा ५।२२।६।४७ में बुध ८।१२।१६।६ को घटाया तो शेष ६।१५।३।३८ इमें लग्न जोडने से राश्यादि ९।२८।३।५४ राश्यादि वणिकसहम हुआ ॥

नो शेष ० । २३ । ७ । १२ इयमे लग्न मित्ताप सैकता करने से राश्यादि २ । ११ । १७ । २८ यह विषाह मत्तम मिद्ध हुआ ॥

मम शौर मन्ताप मत्तो का माधन ।

गुरोर्बुधं प्रोणभवेत्प्रसृतिर्वामं निशीन्दुं शनितो विशोच्य ।

षष्ठं क्षिपेदुक्तदिशा मदेव सन्तापसञ्चारमपास्यशुक्रात् ॥१८॥

भावार्थ - दिन में उप प्रवेश हो नो बृहस्पति में बुध को घटाये रात्रि में विरगेन श्याम् बुध में बृहस्पति को घटाये और लग्न जोड़ सैकता करे नो मम महम होता है, मन्ताप महम माधनार्थ मदा (दिन रात्रि) वर्ष प्रवेश होने से राशिरात्र में चंद्रमा घटाए लडे भाव को जोड़ देवे, पूर पव् सैकता करे नो मन्ताप महम होता है, इस श्लोक के पतुर्ग पद में (आरम्भ पास्य शुक्रात्) इसका सम्बन्ध ज्ञान के श्लोक से है, अर्थात् शुक्र से मंगल को घटाये, यह सिद्धान्त है ।

मम शौर मन्ताप महमों को उदाहरण ।

बृहस्पति ८ । १६ । ३५ । १२ में बुध ८ । १२ । १६ । ६ को घटाने से शेष ० । ७ । १८ । ४ इयमे लग्न जोड़ उक्त संस्कारवत् सैकता करने से राश्यादि १ । २५ । २८ । २० यह मम महम हुआ, और मन्ताप महम माधनार्थ शनैश्चन ६ । २२ । २७ । ३६ में चंद्रमा ५ । २२ । १ । ४७ को घटाया नो शेष १ । ० । १५ । ४६ इनमें षष्ठ भाग ५ । १३ । ४२ । ३५ जोड़ दिया नो ६ । १५ । ४ । २१ यहाँ जोष्य शोभक के बीच में लडा भाव नहीं आया इससे एक राशि अन्य मिलाने से राश्यादि ७ । १४ । ४१ । २ यह मन्ताप महम हुआ ।

श्रद्धा, प्रीति बल और देह सहमों का माधन ।

श्रद्धा सदा प्रोक्तादिशाथ पुण्यं विद्याख्यातः प्रोह्य सदा पुरोक्त्या ।
प्रीत्याख्यमुक्तं बलदेहसंज्ञे यशःसमे जाव्यमपास्य भौमात् ॥१९॥

भावार्थ - दिनमें प्रवेश हो अथवा रात्रि में वर्ष प्रवेश हो शुक्र में मंगलको घटा लःनजोड़पूर्णावत् सैकताकरने से श्रद्धा (आस्तिक्यवृद्धि) सहम होता है, और सदैव दिन व रात्रिमें प्रवेश होतो विद्यामहम को घटा लग्न जोड़ उक्तवत् सैकता करने से प्रीति सहम होता है, और बल देह इन दोनों सहमों को छत्रे श्लोक

में कहे हुये यशः सहम की रीति अनुसार साधन करे और 'जाड्यमपास्य भौमात्' यह पाठ आगे श्लोक से सम्बन्ध रखता है इस कारण इसका अर्थ आगे के श्लोक में कहे गे ॥ १६ ॥

श्रद्धा प्रीति वल सहमों का उदाहरण ।

प्रथम श्रद्धा सहम साधनार्थ शुक्र ७ । १५ । ३० । ४८ मंगल ८।२२ । २६ । १ को घटाय शेष १० । २२ । ३५ । ४७इसमें लग्न जोड़ने से राश्यादि- ११ । ११ । ६।३ यह श्रद्धा सहम हुआ,प्रीति सहम साधनार्थ विद्यासहम ५ । ३ । ३० । ३५ में पुण्य सहम६।२ । ४६ । ५७को घटाने सेशेष८।०।४०।३८ इसमें लग्न मिलाय देने से राश्यादि ८।२८।५०। ५४ यह प्रीति सहम हुआ नीर वल देह इन सहमों का साधन यशः सहम के अनुसार करना, सो इसी मन्त्र प्रकरण के दृष्टे श्लोक में साधन कर चुके हैं इस कारण राश्यादि ० । ४ । ५४ । ३२ यह यशः सहम है यही वल देह सहम भी जानना ॥

जाड्य व्यापार पानीय पतन सहमों का साधन ॥

शनिर्विलोमं निशि चन्द्रयोगाद्ब्यापार आराज्ज्ञामपास्य शश्वत् पानीयापानःशशिनं विशोध्य सौरेर्विलोमं निशि पूर्ववत्स्यात् २०

भाष्य—पूर्व श्लोक में कहे आये है "जाड्यमपास्य भौमात्" दिन में वर्ष प्रवेश हो तो मंगल में गर्नश्चर को घटाने, रात्रिमें विलोम शशिनं गर्नश्चर में मंगल को घटा लग्न जोड़ने के ध्यान में बुध को मिला उक्तवत् मैकता करे तो जाड्यमन्त्र होता है, और अश्वत् (निर्गन्त) दिन व रात्रि में वर्ष प्रवेश हो तो सहम में बुध को घटाये अर्नश्चर लग्न पूर्णवत् मैकता करे तो शश्वत् मन्त्र होता है, और यदि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो शर्नश्चर में चंद्रमा को घटाये रात्रि में प्रवेश हो तो चंद्रमा में गर्नश्चर को घटा लग्न मंगुल को घटाये मैकता करने से पानीयापन (जल में बढ़ जाना) मन्त्र सिद्ध होता है । २० ।

जाड्य व्यापार पानीयापन सहमों का उदाहरण ।

जाड्य व्यापार पानीयापन सहमों का उदाहरण । मंगल ८।२२।३६।२ में गर्नश्चर ६।२० । २४ । ३२ को घटाने से शेष ३० । ३५ । ४७इसमें लग्न जोड़ने से राश्यादि- ३१ । ३१ । ६।३ यह श्रद्धा सहम हुआ,प्रीति सहम साधनार्थ विद्यासहम ५ । ३ । ३० । ३५ में पुण्य सहम६।२ । ४६ । ५७को घटाने सेशेष८।०।४०।३८ इसमें लग्न मिलाय देने से राश्यादि ८।२८।५०। ५४ यह प्रीति सहम हुआ नीर वल देह इन सहमों का साधन यशः सहम के अनुसार करना, सो इसी मन्त्र प्रकरण के दृष्टे श्लोक में साधन कर चुके हैं इस कारण राश्यादि ० । ४ । ५४ । ३२ यह यशः सहम है यही वल देह सहम भी जानना ॥

शोभ के शीघ्र रूप विराटान हैं इसमें सँकता करने की आवश्यकता नहीं
 जीः वृत्तान महम साधनार्थ मंगल ८ । २२। ३६। १ में रूप ८। १२। १६।
 ६ को घटाने में शेष ०। १०। १६। ५२ इसमें लग्न जोड़ पूर्ववत् सँकता
 करने से राश्यादि १। २८। ३०। ८ यह ध्यापार महम हुआ पानीपतन
 महम साधनार्थ शनिश्चर ६। २२। २२। ३६ में चन्द्रमा ५। २२। ६। २७
 को घटाने में शेष १। ५। १०। ४६ इसमें लग्न जोड़ सँकता करने से राश्यादि
 २। १०। २४। ५ यह पानीपतन महम हुआ ।

शुक्र शीघ्र महमों का माधन ।

मन्दं कुजान्तप्रोत्तरिपुर्विलोमं रात्रौ भवेद्भौमविहीनपुण्यात् ।
 शौर्यं विलोमं निशि पूर्ववत्स्यादुत्ताय ईज्यं शनितोविशोध्य । २१।

भावार्थ—दिन में वर्ष प्रवेश करते मंगल में शनिश्चर को घटाय रात्रि में
 विहीन श्यांत शनिश्चर में मंगल को घटा लग्न जोड़ उक्तवत् सँकता करे
 तो शुक्र (यं गी) महम होता है और दिन में वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य महम में
 मंगल को घटाये रात्रि में विलोम श्यांत मंगल में पुण्य महम को घटाये और
 लग्न जोड़ उक्तवत् सँकता करे तो शौर्य (वीरत्व) महम होता है “उपाय
 इष्यं शनि तो विशोध्य” इस मूल पाठ का सम्बन्ध आगे के श्लोक में है,
 इनका अर्थ लागे कहेंगे ॥ २१ ॥

अथ शुक्र शौर्य महमों का उदाहरण ॥

शुक्र महम साधनार्थ मंगल ८ । २२। ३६। १ में शनिश्चर ६। २२। २४।
 ३६ को घटाने से शेष २। ०। ११। २५ इसमें लग्न जोड़ सँकता करने से
 राश्यादि ३। १८। ११। ४१ यह शुक्र महम हुआ और शौर्य महम साध-
 नार्थ पुण्य महम ६। २। ४६। ५७ में मंगल ८। २२। ३६। १ को घटाया
 तो शेष ०। ५। १३। ५६ इसमें लग्न मिलाय सँकता करने से राश्यादि
 १। २८। २४। १२ यह शौर्य (वीरत्व) महम हुआ ॥

चन्द्र और गुरुता महमों का माधन ।

वामं निशितं तु विशोध्य पुण्याञ्जयुर्विलोमं निशि तद्दरिद्रम् ।
 सूर्योच्चतः सूर्यमपास्य नक्तं चन्द्रस्तदुच्चाद्गुरुताः पुरोत्तया ॥ २२ ॥

भा०—पूर्व श्लोक में लिख आये हैं (उपाय ईज्यं शनि तो विशोध्) कि दिन में वर्ष प्रवेश हो तो शनैश्चर में बृहस्पति को घटावे रात्रि में प्रवेश हो तो बृहस्पति में शनैश्चर को घटाय लग्न मिला उक्तवत् सैकता करे। तो उपाय महम होता है और दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो पुण्य सहम में बुधको शोध रात्रिके विषे बुध में पुण्य सहमको घटा बध और एक और राशिको जोड़ देने से तथा दिनमें वर्ष प्रवेश होतो सूर्य के परमोच्च ० । १० में बुधको घटावे रात्रि के विषे चन्द्रमा के परमोच्च १ । ३ में चन्द्रमा घटा राशमें लग्न मिलाय उक्तवत् सैकता करने से गुरुता नामक सहम पूर्वाचार करके कहा गया है ॥ २२ ॥

अथ उपाय दरिद्र गुरुता सहम का उदाहरण ।

उपाय महम साधनार्थ शनैश्चर ६।२।२।१।३६ में बृहस्पति ८।१।३।१।३ को घटाने में शेष ८।२।१०।२३ इसमें लग्न जोड़ दिया तो ८।२।१०।२३ यह राशियादि उपाय महम हुआ दरिद्र सहम साधनार्थ पुण्यमहम ६।२।१।५७ में बुध ८।१।२।३।६ को घटाने से शेष ००।२०।३३।४६ इसमें बुध ८।१।२।६।६ को मिला सैकता करने में यह १०।२।१।५८ राश्यादि दरिद्र सहम हुआ गुरुता सहम साधनार्थ सूर्य का परमोच्च ०० । १० में बुध ९।३।३।०।३ को घटाने में शेष ३।२।२।५।४ इसमें लग्न जोड़ सैकता करने में राश्यादि ४।२०।३।१० यह गुरुता सहम हुआ ॥

जनपथ वन्धन महमों का साधन ।

कर्माद्वैतः प्रोद्य शनिं स्याज्जलाध्वान्यथानिशि ।

पुण्यान्धनिं विशोभ्याद्धि वामं निशि तु वन्धनम् ॥२३॥

भा०—दिन में वर्ष प्रवेश हो तो कर्क के आनेक अर्थात् माहे तीन रात्रि ३ । ५ में शनैश्चर को घटा देवे रात्रि में विपरीति अर्थात् माहे तीन राशिको को शनैश्चर में घटा देवे अन्तरा लग्न जोड़ सैकता करे तो जल वन्धनम होता है, रात्रि दिवसे वर्ष प्रवेश होतो पुण्य महम में शनैश्चर को घटावे, रात्रि दिवसे शनैश्चर में बुध महम को घटावे लग्न मिलाय सैकता करके जो वन्धन महम होता है ॥ २३ ॥

अथ कन्या मन्त्रम गृह्यो का उदाहरण ।

कन्या मन्त्रम साधनाथ साटे तीन रात्रि ३१५ में जनैरपर ६ । २२ ।
 २४ । ३६ को घटाने से टार ३१५-२४ इममे लग्न मिलाय देने से राश्यादि
 ६।२।४५।२- यह कन्या मन्त्रम हुआ, मन्त्रम मन्त्रम साधनाथ पुण्य मन्त्रम
 ६ । २ । ४६ । ५७ में रात्रि ६ । २५ । २५ । ३६ को घटाया तो शेष
 ३१ । २५ । २५ इममे लग्न मिलाय मिलाय करने से राश्यादि ३ । २८
 ३५ । ३७ यह कन्या मन्त्रम हुआ ।

कन्या और अश्व मन्त्रों का साधन ।

चन्द्रं मितादपास्योक्तं सदा कन्याख्यमुक्त्वत् ।

पुण्यादकर्मपास्याययोगादश्वोऽन्यथा निशि ॥ २४ ॥

भाषार्थ—दिन व रात्रि अर्थात् मन्त्रों का प्रवेश होने शुरू में चन्द्रमा
 को घटा लग्न जोड़ उक्तवत् सँकना करने से कन्या मन्त्रम होता है, और
 दिन में यदि प्रवेश हो तो पुण्य मन्त्रम को सूर्य को घटा देव, रात्रि के विषे
 सूर्य में पुण्य मन्त्रम को घटा सन्तार शेष में ग्यारहवें भाग को जोड़ सँकना
 करने से अश्व मन्त्रम होता है सँकना करना यचनाचार्य के मत में नहीं है,
 सँकना अर्थात् एक राशि को जोड़ना इमका समरमिह, यवन ताजिक, मनुष्य
 ताजिक इन ग्रन्थों में मखिम्नार लिखा है इम कारण वहाँ देखना, यहाँ विस्तार
 भय से नहीं लिखा यह मन्त्रों का साधन चण न किया ॥ २४ ॥

अथ कन्या अश्व मन्त्रों का उदाहरण ।

भा० कन्या मन्त्रम साधनाथ शुक्र ७ । १५ । ३५ । ४८ में चन्द्रमा ५ ।
 २० । ३६ । १ को घटाया तो शेष ६ । २२ । ५५ । ४७ इममें लग्न जोड़
 सँकना करने से राश्यादि ३ । ४१ । ६ । ३ यह कन्या नामक मन्त्रम हुआ
 और अश्व मन्त्रम साधनाथ पुण्य मन्त्रम ६ । २ । ४६ । ५७ में सूर्य ६ । ७
 । ३० । ६ को घटाने से शेष ११ । २५ । १६ । ५१ इममें ग्यारहवाँ भाग
 १० । ६ । २८ । ४६ संयुक्त कर देने से यह १० । ४ । ४८ । ३७ यह अश्व
 मन्त्रम हुआ ॥

यथ महसमूहश्लोचम् ।

१	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४

अथ महमानां फलाणि निरूपयन्ते ।

महमानां महानां महानाः म्वायोदयस्था विहता त्रिशत्या ।
 तदमभवो द्विमहानाः म्वात्तदशायां तदमभवे वा ॥ २७ ॥

यथा - महानां महानां महानां के फल का महान कहते हैं, जिन महान

का शुभाशुभ फल जानने पर दिन मंग्या जानने की इच्छा हो तो उस महम गानि स्वामी को महम में हीन करना, शेष को अंग करते महम राशि के उदय से मूला करना महमनार गानियों से भाग लेना, लक्ष्य दिवस मंग्या जानना, यमसे महम का फल होता है, किमी आचार्य का मत है कि महम स्वामी के दशा समय में महम फल होता है, उदाहरण— जैसे पृथ्वी महम नदयादि ६ । २ । ५६ । ५७ में महम गानि स्वामी शनि ६ । २२ । २५। ३६ को मशारा हो शेष २ । १० । २५ । २१ इसके अंग ७५ । २५ । २१ इनको महम गानि (मकर) का उदय २६८ में गुणन करने में २० । ६ । ८५ । ५२ । १८ हुए इसमें ३०० से भाग देने से लक्ष्य दिवसादि ६६ । ५७ अर्थात् २ मास, ६ दिन ५७ घटी जानना, वर्ष प्रवेश दिन से इनके समय नक्ष पृथ्वी महम का फल होगा ऐसे ही अन्य महमों का फल समय गणित गानि से निजानना ॥ २५ ॥

महमों के बल का वर्णन ।

स्वोच्चादिसत्पदगतो यदि लग्न दर्शी विर्यान्वितः सहम पो यदि नेचनेऽगम् । नासौ बलीर विशशिथितभेशदर्शपूर्णान्तलग्नपवलस्य विचारणेत्यम् ॥ २६ ॥

भाषा— यदि महम गानि का स्वामी अपने उच्च अष्टि उच्च अतिकार में प्राप्त होकर लग्न को देखता हो तो बली जानना, यदि लग्न को नहीं देखे तो बलहीन जानना, तथा नक्ष समय सूर्य और चन्द्रमा जिन २ राशि पर स्थित हों उन राशियों के स्वामी और जन्म के निकट अभावस्था व पूर्णमासी जितनी घड़ी हो उस समय का लग्न मानन करने पर जो जो लग्न आवें उन लग्नों के स्वामी इन चारों के बल का विचार पूर्वोक्त प्रकार जानना तथा इन चारों का बल पूर्वोक्त हिज्ञान और मनुष्य जातक के आयुर्द्वयाध्याय में अच्छे प्रकार वर्णन किया है यद्यपि यहां इन बलों का विचार उपयोगी नहीं तथापि प्रसङ्ग वश से यहां कहा है ॥ २६ ॥

महम का निर्वलत्व और बलत्व का वर्णन ।

पंचवर्गी बलेनोनो न हर्षस्थानमाश्रितः ।

अवलोक्य लग्नदर्शी बली स्वल्पेऽति चेत्पदे ॥ २७ ॥

भा० - जो पंचवर्गों बल से हीन और पूर्वोक्त चारों हर्षद स्थानों से गृहिन तथा जो ग्रह लग्न को न देखे तो उसे निर्बल जानना चाहिये एवं जो यह स्वल्प (छोटे) पद (अधिकार) में विराजमान होकर लग्न को देखे तो उनको बलवान जानना, यहां जो ग्रह अपने उच्च अपने घर में हो वह महाअधिकार वाला कहाता है और जो अपने हृदा में वह मध्यम अधिकार वाला, तथा जो अपने नैराशिक व अपने नवांश में हो वह स्वल्प अधिकार वाला कहाता है ॥ २७ ॥

सहम की वृद्धि और हास्ता का वर्णन ।

स्वस्वामिना शुभखगैः सहितं च दृष्टं स्वामी बली च
यदि तत्सहमस्य वृद्धिः । चेत्स्वामिना शुभखगैश्च न युक्तं दृष्टं
तत्सम्भवो नहि भवेदिति चिन्त्यमादौ ॥ २८ ॥

भावार्थ - जो सहम अपने स्वामी करके व शुभग्रहों करके युक्त वा दृष्ट हो तो सहम स्वामी बलवान और सहम की वृद्धि जानना, अर्थात् फल देने में सामर्थ्य होगा और जो सहम अपने स्वामी से अथवा शुभग्रहों से युक्त न हो योग न देगा जाना हो तो उस सहम का सम्भव नहीं होगा अर्थात् जैसा नाम बता है वैसा फल नहीं देगा इत्यादि पहिले ही से चिन्तन कर विचार करना चाहिये ॥ २८ ॥

सहम के सम्भव लक्षण ।

अष्टमादिपतिनायुतेन्नितं पापदृश्युतमथेत्यशालितैः ।

सहमेवैषि विरायं प्रयानि तत्तेन जन्मनि पुरंदमीच्यताम् ॥ २९ ॥

भाव - जो सहम वं लग्न से अष्टम राशि स्वामी से युक्त हो वा देगा जाता हो अथवा पाप घरों से युक्त वा दृष्ट हो अथवा उन अष्टम राशि स्वामी और वं राशि से अष्टम अथवा पाप घरों तो वह अपने स्वामी वा शुभ ग्रहों करके अष्टम अथवा पाप घरों की प्राप्ति के सम्भव का साक्ष्य कर देता है अर्थात् जैसा नाम बता है उसको नहीं कर सकता है, उगी से जन्म समय में सहम के अष्टम - वं घर में अष्टम विरायं करे ॥ २९ ॥

जन्म समय में सहम के अष्टम घर में अष्टम विरायं करे ।

अष्टम जन्मनि सर्वेषां सहमानां बलावयवम् ।

विमृश्य मग्भवां येषां तानि वर्षे विचिन्तयेत् ॥ ३० ॥

भा०—पुण्य मग्भवां मग्भवां में मग्भवां मग्भवां का पत्र और अथवा विचार करके विचिन्तयेत् मग्भवां का पत्र का मग्भवां शीघ्र पत्रे उन्नीं को वर्ष में विचिन्तयेत्, और विचिन्तयेत् मग्भवां का पत्र का पत्र हीन हो उनको वर्ष में वर्षी न विचार ॥ ३० ॥

पुण्य मग्भवां का पत्र ।

सुवर्णे पुण्यमहमे धर्मसिद्धिर्धनागमः ।

शुभस्वार्माहितयुते व्यत्यये व्यत्ययं विदुः ॥ ३१ ॥

भा०—पुण्य मग्भवां पत्रपत्र हो और शुभमग्भवां अपने स्वामी में पत्र हो का देखा जाता हो तो वर्षको विचिन्तयेत् और पत्रको प्राप्ति होवे, इसने विचिन्तयेत् हो वर्षको जो पुण्य मग्भवां निर्वन्त होकर पापग्रहों में पत्र या दृष्ट हो तो धर्म और पत्रका भाग जानना ॥ ३१ ॥

पुण्य मग्भवां का अनुभव पत्र ।

लगात् पद्मप्रतिष्ठास्थं धर्मभाग्ययशोहरम् ।

शुभस्वामिदृशा प्रान्ते सुखधर्मादिसम्भवः ॥ ३२ ॥

भा०—जो पुण्य मग्भवां वर्ष लगन में दृष्टे यादवे वाग्द्वय स्थानमें स्थित होवे तो मग्भवां वर्ष भव धर्मभाग्य व यश इनको हरण करता है, और उसको शुभ ग्रह व उमका स्वामी देवता होवे तो वर्ष के अन्त में सुख और धर्म प्राप्ति प्राप्ति होवेगी, अर्थात् वर्ष के पूर्वार्ध में अशुभ फल, और उत्तरार्ध में शुभ फल होवेगा ॥ ३२ ॥

पाप ग्रहों और शुभ ग्रहों के संवन्ध से युक्ति व दृष्टि फल ।

पापयुक् शुभदृष्टं चेदशुभं प्राक्ततः शभम् ।

शुभयुक्तं पापदृष्टमादौ शुभमसत्परि ॥ ३३ ॥

भा०—यदि पुण्य मग्भवां पापग्रहों से युक्त और शुभ ग्रहों से देखा जाता हो तो वर्ष के पूर्वार्धमें अशुभ, और उत्तरार्धमें शुभ होता है, और जब पुण्य मग्भवां शुभग्रहों से युक्त और पापग्रहों से देखा जाता हो तो वर्ष के पूर्व-

र्ष में शुभ और उत्तरार्ध में अशुभ फल होता है, और जो पापग्रहों से युक्त दृष्ट हों तो सम्पूर्ण वर्ष पूर्ण अशुभ फल होवेगा, और शुभग्रहों से युक्त दृष्ट हों तो वर्ष भर शुभफल होगा पापग्रह और शुभग्रह मिले हों तो मिश्रित फल होवेगा यह अर्थ से ही सिद्ध होता है ॥ ३३ ॥

पुण्य सहम की प्रशंसा ।

यत्रान्दे पुण्यसहमं शुभं सोऽत्रशुभावहः ।

अनिष्टेऽस्मिन् शुभो नेति पुण्यमादौ विचारयेत् ॥ ३४ ॥

भा०—जिम वर्ष में पुण्य सहम शुभ हो तो वह वर्ष अच्छे फल को देने वाला होता है और जिम वर्ष में पुण्य सहम अनिष्ट होवे तो वह वर्ष अशुभ जानना हम कारण आदि में पुण्य सहम को विचारे ॥ ३४ ॥

जन्म काल में पुण्य सहमका अशुभलक्षण ।

मृतौ पष्ठाष्टरिष्कस्थे मध्ये पापहतं पुनः ।

पुण्यं धर्मार्थसौख्यन्नं पत्यौ दग्धे फलं तथा ॥ ३५ ॥

भा०—जन्म समय में लग्न से ६ । ८ । १२ इन स्थानों में यदि पुण्य सहम मिया होवे और पापग्रहों से युक्त दृष्ट वर्ष समय में हो तो वह धर्म अर्थ और सौख्यका नाश करने वाला होता है, तब ही पुण्य सहम स्वामी के अन्त होने से फल होता है, अर्थात् धर्मार्थका नाशक होता है ॥ ३५ ॥

महमान्यमित्तानार्त्थं मृतौ वर्षे विचिन्तयेत् ।

मान्वाग्भिकलिसृन्वृणां व्यत्ययादादिशेतफलम् ॥ ३६ ॥

भा०—इस प्रकार जन्म काल और वर्ष में सम्पूर्ण मृत्यों को चिन्तन करने, मृत्यु के कारण, मृत्यु का समय और दण्ड इन मृत्यों के फलका पुण्य सहमका अर्थ में वर्णन करें, सर्वत्र पुण्यसहम नीलकण्ठ आगे कहेंगे, यथा—
‘दण्डितान्मृत्युं कर्तुं कर्तुं विद्यमानः’ दण्डितय मृत्यु, गण, मृत्यु, इत्यादि इन मृत्यों में विचिन्तये कदा मया प्रिये ‘मन्वाग्भिकलिसृन्वृणां व्यत्ययादादिशेतफलम्’ यथा दण्ड विचार करके मृत्यु के कारण, मृत्यु का समय और दण्ड अशुभ होने से दण्ड भी इन

मरमो वा फल शुभ फल प्राप्ता ही तो शुभ फल फलना और यदि मरमो वा फल शुभ फल प्राप्ता ही तो शुभ फलना चाहिये ॥ ३६ ॥

वारं विष्ट मरम वा शुभाशुभ फल ।

कार्य सिद्धिसद्वं युतं शुभैर्दृष्टमृथशिलगं जयप्रदम् ।

मंगरेऽथ शुभपापदृष्टियुक्तं शतो जय उदीरितो बुधः ३७

भा० - जो कार्य विष्ट मरम शुभ ग्रहों में युक्त अथवा दृष्ट हो तथा शुभ ग्रहों का इत्यथान योग हो तो मंगल में जय का देव माना जाता है, और यदि कार्य विष्ट मरम शुभ ग्रहों से र पाप ग्रहों में युक्त दृष्ट हो तो दृष्ट में जय प्राप्त होता है, ऐसा विद्वानों ने कहा है ॥ ३७ ॥

वर्जित मरम वा शुभाशुभ फल ।

कलिसद्वममिश्रस्वगदृष्टिसंयुतं यदिपापमृथशिलगं कलेमृत्तिम् ।
अथतत्र सौम्यमहितावलोकिते जयमेति मिश्रदृशितःकलिव्यथे ३८

भा०—जिसके वर्ष काल में कलिसद्वम शुभ ग्रहों वा पापों ग्रह में दृष्ट हो अथवा संयुक्त हो तब ही यदि पाप ग्रहों के साथ इत्यथान योग करना हो तो वह मनुष्य लक्षात् के प्रवृत्त में मृत्यु को प्राप्त होता है, तथा जो कलिसद्वम शुभ ग्रहों में युक्त दृष्ट हो तो जय प्राप्त होते हैं, अथवा शुभ ग्रह और पाप ग्रह दोनों देखते हैं तो कलिस और दुःख में दोनों प्राप्त होते हैं ॥ ३८ ॥

विवाह मरम वा शुभाशुभ फल ।

विवाहसद्वमाधिपमौम्यदृष्टं युतं शुभैर्दृष्टमृथशिलं शुभाप्तिम् ।

कुर्याच्चदा मिश्रसमेतदृष्टं कष्टादथक्रूरप्रतीश्वरेण ॥ ३९ ॥

भा०—जिस मनुष्य के वर्ष काल में विवाह सहम अपने ग्यामी में युक्त वा दृष्ट हो वा शुभ ग्रहों से मृथशिलयोग करता हो तो उस प्राणी के विवाह की प्राप्ति को करता है और यदि शुभ ग्रहों और पाप ग्रहों में युक्त दृष्ट हो, तो बड़े कष्ट से विवाह होता है, अथवा यदि विवाह सहम पाप ग्रहों से युक्त दृष्ट हो वा मृथशिल योग करता हो तथा वर्ष लग्न व विवाह सहम से अष्टम स्थान

रोग महम का अशुभ फल ।

मांशाधिपः पापयुतेक्षितश्च पापः स्वयं रोगकरो विचिंत्यः ।

चेदित्यशालोमृतिपेन मृत्युस्तदा भवेद्दीनबलेतिकष्टात् ॥४३॥

भा०—जो रोग महमका स्वामी पाप ग्रहों में युक्त दृष्ट हो, और वह स्वयं पापग्रह हो तो रोग करने वाला जानना, तथा यदि रोग महमाधीश स्वयं से पहले भाग के स्वामी के साथ अशुभकाल करता होवे तो उस प्राणी की मृत्यु होवे और यदि रोग महम स्वामी चलदीन होवे तो शक्तिपक्ष से मरण होवे, ऐसा कहना ॥ ४३ ॥

रोग महमका शुभाशुभ और फल ।

स्वस्वामिसौम्येक्षणभाजि मान्द्यं नाथे सवीर्येऽष्टपडंत्यवर्जे ।

रोगस्तदा नैव भवेद्विमिश्रं युतेक्षिते रुग्णयमस्ति किञ्चित् ॥४४॥

भा०—जिम मनुष्य के वर्षकाल में रोग महम अपने स्वामी वा शुभ ग्रहों में युक्त दृष्ट हो तथा रोग महमाधीश ८ । ९ । १२ इन स्थानों को छोड़कर किसी अन्य स्थानों में स्थित होकर चलवान होवे, तो उस मनुष्य को किसी प्रकार का रोग नहीं होता है, और जो रोग महमका स्वामी शुभ ग्रहों वा पापग्रहों में युक्त हो व देखा जाता हो, तो कुछ थोड़ा रोग भय होता है ॥ ४४ ॥

अर्थ महमका शुभाशुभ फल ।

अर्थान्वयं शुभनाथदृष्टसहितं द्रव्यागमात्सौख्यदं पापैर्दृष्टयुते
ग्नहैश्च विलयं कुर्यादथो पापयुक् सदृष्टं च शुभेत्यशालि यदि
तत्पूर्वं धनं नाशयेत्परयादर्थसमुद्भवं च ससुखं व्यत्यासतो व्य-
त्ययः ॥ ४५ ॥

भा०—जिम मनुष्य के वर्ष कालमें अर्थ महम शुभग्रह व अपने स्वामी से दृष्ट व युक्त हो तो वह उस मनुष्य को द्रव्य की प्राप्ति से सुख को देता है, और यदि पापग्रहों से दृष्ट व युक्त हो तो धनका नाश करता है, अथवा जो अर्थ महम पापग्रहों से युक्त होकर शुभ ग्रहों से देखा जाता

हो, तथा शुभ ग्रहोंके साथ इत्यशाल योग करता होवे, तो पूर्व संचित क्रिये हुए धनका नारा करता है, फिर पीछे कुछ कालान्तर में सुख समेत धनको देता और यदि अर्य महम शुभग्रह वा पाप ग्रहों से देखा जाता हो तथा शुभग्रह पापग्रहों के साथ सुयशिल (इत्यशाल) योग करै तो शुभ ही फल देता है ॥ ४५ ॥

शत्रु मित्र दृष्टि फल ।

रिपुदृष्टया रिपोर्भीतिस्तस्करादेर्धनक्षयः ।

मित्रदृष्टया मित्रयोगाद्धनं मानं यशःसुखम् ॥४६॥ १

भा०—जो महम शुभग्रह व पापग्रह की शत्रु दृष्टि से देखा जाता हो तो शत्रु से भय हो और चोरों से धनका क्षय होवे, और जिस महम को शुभग्रह पापग्रह मित्र दृष्टि से देखा जाता हो तो मित्रके योग (सम्बन्ध) से धन व मान, यश व सुखको प्राप्त होता है ॥ ४६ ॥

पुत्र महमका शुभाशुभ फल ।

मत्स्यामिदृष्टं पुत्रमात्मजस्य लाभं सुखं यच्छ्रति पुत्रसदा ।

पापान्वितं मौम्यमगंत्थशालिप्राग्दुःखदं पुत्रमुखाय पश्चात् ४७

भा०—जो पुत्र महम शुभ ग्रहों व अग्ने म्पामी से देखा जाता हो अथवा पुत्रसे देखा हो तो पुत्रका लाभ और पुत्र सम्बन्धी सुख प्राप्त होता है तथा जो पुत्र महम पापग्रह व क्त शशपद से इत्यशाल योग करता होवे तो पुत्र महम शुभ ग्रहों के साथ पुत्र सुख होता है ऐसा करना ॥ ४७ ॥

पुत्र पापका शशाशुभ और फल ।

पापान्वितं पापदृतेमगाकं नाशाय पुत्रस्य गर्तोर्जमाशं ।

सूतो मोगःसुदुःखदोऽप्ये पुत्रस्य तत्रैव शुभमित्रदृष्टः॥४८॥

भा०—जो पुत्र पापग्रह पापग्रह से क्त और पापग्रह से देखा जावे तो पुत्रको क्षय और दुःख प्राप्त होवे तथा जन्म कालसे ही पुत्रको दुःख प्राप्त होवे और पुत्र महम शुभ ग्रहों के साथ योग करता होवे तो पुत्र महम शुभ ग्रहों के साथ पुत्र सुख होता है ऐसा करना ॥ ४८ ॥

पितृ महम का शुभाशुभ फल ।

पित्र्यं मदीक्षितयुतं पतियुक्तदृष्टं तातस्य यन्ल्यति धनाम्बर-
मानमौन्यम् । पत्न्यो गताजसि मृतौ खलमूसराफे नाशः
पितुश्चरगृहे परदेशयानात् ॥ ४६ ॥

भा०—जो पितृमहम शुभ ग्रहोंमें युक्त वा दृष्ट हो अथवा अपने स्वामी
में युक्त दृष्ट हो तो उस मनुष्य के पिता के लिये धन, परा. मान और
सुखको देना है, और यदि पितृ महम का स्वामी निर्बल अथवा धरतंगत
हो वा वर्ष लग्न में आर्य स्थान में स्थित अंतर पापग्रहों के साथ मूलीक
(१२५५) गणना करे और चरगणि (रोष, कर्क, तुला, मकर) में
स्थित हो तो उसका पिता परदेश में यात्रा करना हुआ मृत्यु को प्राप्त होगा
ऐसा कहना ॥ ४६ ॥

पितृ महम का शुभाशुभ फल ।

शुभेत्थशाले खलवेष्टयोगे गदप्रकोपः प्रथममहान्स्यात् ।
परन्तात्सुखं विंदति पूर्णवीर्ये नाथे नृपान्मानयशोऽभिवृद्धिः ५०

भा०—जो पितृमहम पापग्रहों के साथ उत्थशालयोग को करे, पुनः यदि
पापग्रहों में युक्त हो तो वर्ष के प्रारंभ में बड़े रोगका कोप होवेगा, फिर वर्षके
उत्तरार्धमें पिता सुखको प्राप्त होवेगा तथा यदि पितृमहमका स्वामी पूर्णबली
होवे तो उसका पिता राजाके आश्रयमें मान, यश, वड़ाई व द्रव्यको प्राप्त होवेगा

वन्धन महमका शुभाशुभ फल ।

वन्धनाख्यसहमं युतेक्षितं स्वामिना न हि तदाऽस्ति वन्धनम्
पापवीक्षितयुतेऽस्ति वन्धनं पापजे मुखशिले विशेषतः ॥५१॥

भा०—यदि वन्धन महम अपने स्वामी में युक्त वा दृष्ट हो तो वन्धन
नहीं होगा अर्थात् जेन्स्वाने नहीं जायगा, और जो पाप दृष्ट वा युक्त
हो तो वन्धन होवेगा, तथा जो वन्धन महम और उसका स्वामी ये

दोनों पाप ग्रहों से इत्थशाल योग करे तो विशेष करके बन्धन होगा ऐसा जानना ॥ ५१ ॥

गौरव सहम का शुभाशुभ फल ॥

गौरवाह्यसहमं युतेक्षितं स्वामिना शुभखगैः सुखाप्तये ।

राजगौरवयशोभ्वराप्तये पापवीक्षितयुते पदक्षतिः ॥ ५२ ॥

भाषार्थः—जो गौरव सहम अपने स्वामी व शुभ ग्रहों से युक्त हो या देगा जाता हो तो सुख, राजगौरव, यश व वस्त्र, इनकी प्राप्ति होवे, और यदि पाप ग्रहों से युक्त व दृष्ट हों तो अधिकार का क्षय होजावे अर्थात् यह मनुष्य वैशेष्य हो जावे ॥ ५२ ॥

पुनः गौरव सहम का शुभाशुभ फल ।

शुभाशुभेदृष्टयुतं स्वलेरचेत्कृतेत्यशालं धनमाननाशम् ।

पर्व विपत्ते चरमे शुभेत्यशाले सुखं वाहनशस्त्रलाभम् ॥ ५३ ॥

भाषार्थः—यदि गौरव सहम शुभ वा पापयुक्त वा दृष्ट हो और इत्थ-शाल योग करे तो पर्व के पुराण (प्रथम ६ मास) में धन और मान का नाश करे, तथा यदि चरम शुभ ग्रह से इत्थशाल योग करे तो पर्व के उत्तर-पक्ष में सुख, वाहन और शस्त्र इनका लाभ करे ॥ ५३ ॥

कर्म सहम का शुभाशुभ फल ॥

कर्मभारमहमाधिपाशशुभैः स्वामिना मुथशिला वलान्विताः ।

देवताजिमज्जभिमिलाभदाः पापदृष्टियुतितोऽशुभप्रदाः ॥ ५४ ॥

भाषार्थः—यदि कर्मभार और कर्म सहम का स्वामी और दोनों के स्वामी से पाप ग्रहों से युक्त होवे व अपने स्वामी के साथ इत्थशाल योग करे तो मुक्ति, भोग, शक्ति, पुत्री इनके लाभ को देने हैं, और यदि पाप ग्रहों से युक्त होवे तो अशुभ फल को देने हैं अर्थात् पापयुक्त दृष्ट-युक्त पापग्रहों से युक्त होवे ॥ ५४ ॥

कर्मभार सहम का शुभाशुभ फल ।

कर्मभारमहमाधिपाशशुभैः स्वामिना मुथशिला वलान्विताः ।

राजधर्मः कर्मनाशश्च राजकर्मेशो चेन्मृमरीफो खलेन ॥५५॥

भावार्थ—कर्म भाग मर्यादी और महम मर्यादी ये दोनों अन्तर्गत ही का बर्णो होवे तो कर्म का नाश करने है, तथा दोनों मर्यादपर फरके देखे जाने ही वा नाश युक्त ही तो विमोघ कर्मके फल का प्रम करके हैं, तथा यदि मल महम वा वायु महम ये दोनों के मर्यादों पाप युक्त वा हुए हों अथवा पाप इहो में मृमरीफ योग कर्मों का अर्थ और कर्म का नाश होवे ॥ ५५॥

मन्दैर युक्त पाले महमों का अर्थ ।

उपदेष्टागुरुज्ञानं विद्याशास्त्रं श्रुतिस्मृती ।

मोहोजाड्यं वलं सैन्यमंगं देहो जलंघृतिः ५६

भावार्थ—गुरु महम को उपदेष्टा, और विद्या महम को ज्ञान महम, और विद्या महम को शास्त्र, श्रुति, स्मृति सम्बन्धी महम जाड्य को मोह वल को सैन्य, देह को मर्याद, जन को घृति (कर्ति) भी कहते हैं ५६

गुरुतामंडलेशस्त्वं गौरवं मानशालिता ।

निग्रहानुग्रहविभू राजाक्षत्रादिलिंगभाक् ॥ ५७ ॥

माहात्म्यं मंत्रगांभीर्यं धृतिबुद्ध्यादिशालिता ।

सामर्थ्यं देहजाशक्तिः शौर्यं यत्नोऽरिनिग्रहः ॥ ५८ ॥

भावार्थ—गुरुता शब्द से मण्डलेशन्व, गौरव को मानशाली, राजशब्द से क्षत्रिय निग्रह अनुग्रह का विभू जानना राजशब्द का लक्षण यह है कि जो बोधने और अनुग्रह करने में समर्था होकर हय, चमर आदि चिन्हों का नेकने धारण होता है ॥ ५७ ॥ महत् के भाव को माहात्म्य और महन्व कहते हैं, मंत्र वह है कि जो एकान्त में विचारा जावे, उसका गाम्भीर्य (अमकटता) किमी से नहीं कहना यहां यह शंका है कि अमकाश कैसे होता है, तहां समाधान यह है कि धैर्य और परिणाम जो बुद्धि आदि से युक्त हो, इसी से प्रकाश रहित होता है, अर्थात् ऐसे रूप से जो युक्त हो यह माहात्म्य कहा जाता है—सामर्थ्य शब्द से देह से उत्पन्न हुई शक्ति, और शौर्य शब्द से शत्रु के पकड़ने का यत्न किया जाय उसे कहते हैं ॥ ५८ ॥

दशा द्विवस्र लाने का वर्णन ।

शुद्धांशकांस्तान्गुणयेदनेन लब्धध्रुवांकेन भवेद्दशायाः ।

मानं दिनाद्यं खलु तदग्रहस्य फलान्यथासां निगदेतु शास्त्रात् ॥

भाषार्थः—पूर्वोक्त लब्ध ध्रुव (दशागुणकांक) से सर्व शुद्धांशों को भी गुणना चाहिये, ऐसा करते हुए उस ३ ग्रह के दिनादिक दशा को प्रमाण होता है, ऐसे ही दशा के दिन आदिकों को लाकर इन दशाओं के शुभ व अशुभ फलों को ज्योतिःशास्त्र से कहें ॥ ६६ ॥

अंशों के साम्य का निर्णय ।

शुद्धांशसाम्ये बलिनोदशाद्या बलस्य साम्येऽल्पगतेस्तु पूर्वा ।

साम्ये विलग्नस्य स्वगेन चिन्त्यात्रलादिका लग्नपतेर्विचिन्त्या ६७

भाषार्थः—दो ग्रहों के अंशों करके साम्य रहते पंचवर्गों में जिन का बल समान हो उसही दशा प्रथम होती है, अर्थात् शोभ्य, शोभक दोनों ग्रहों के अंश समान हों उन दोनों में से पंचवर्गों में से बल अधिक हो उसही दशा पहिली बनी जायेगी यह ग्रहों पर विचार करना है कि 'हीनांगसाम्ये' का अर्थपाठ है, क्योंकि इन पाठ में किसी आचार्य का प्रमाण पाया नहीं जाया जाता है, इस कारण 'हीनांगसाम्ये' ऐसा पाठ मानना चाहिये इस पाठ में सब आचार्यों का सम्मत भी है, इसमें पहिली जो दशा अधिक बलवान्ता चाहिये, और यही दशा का क्रम पहिले लिखा ही होता है, तदनन्तर जो इन क्रम में शब्दांग होते हैं वे ही हैं, इसमें शोभ्य शब्दों का प्रमाण नहीं मिलता बल पंचवर्गों में शोभ्य का बल ही पहिली दशा होती है, तदनन्तर दूसरे की और जो शब्दों में शब्द पाये हों अथवा पहिले बाने की दशा पहिली होगी ही। तब ३ ६ ९ का अंग समान हो दो पहिले अन्वय की दशा जानना

शुद्धांश का उदाहरण ।

यदि शुद्धांश ३०० हो तो अंग ३०० के शुद्ध अंग ३०० विभाजित है, सो यह

पंचांग से मास प्रवेश की घड़ी लाने का प्रकार ।

मासाऽर्कस्य तदासन्नपंकत्यर्केण सहान्तरम् ।

कलाऽकृत्वाप्तगत्याप्तं दिनाद्येन युतोनितम् ॥ ७० ॥

तत्पंक्तिस्थं वारपूर्वमासाकेऽधिकहीनके ।

तद्वाराद्यं मासवेशो द्युवेशोऽप्येवमेव च ॥ ७१ ॥

भावार्थ—एकर गणिके योगमें मासप्रवेश का सूर्य होताहै,इसीके समीपवर्ती पंचांग में स्थित जो अथर्वि का रवि और मास प्रवेश का रवि इन दोनों का अंतर करे फिर उमकी कला करे तदनन्तर अथर्विस्थ रवि की गति से भाग करे वह वार घटी पत्त मिलेंगे इनहो अथर्विस्थ वारादि में युक्त करे अथवा अथर्विस्थ वारादि में युक्त करना चाहिये और यदि मास प्रवेश के रवि से अथर्विस्थ रवि अंतर होवे तो घटा देंगे, फिर उम शेष वारादि अर्थात् वार घटी कला करे तदनन्तर मास का प्रवेश होवेगा, पूर्व दिन प्रवेश निकालने की रीति की समझना, पूर्व अथर्विस्थ वारादि के स्थान पर पंडित विश्वनाथ दंडवश ने कहा है कि उम शेष वारादि का अंतर करे पंचांग में अथर्विस्थ (अथर्विस्थ वारादि) अथर्विस्थ बनाया है अथर्विस्थ वारादि का अंतर करे व नमचाप को जोड़ने हैं, परन्तु यह ग्रन्थकार का अर्थ नहीं है, इस कारण पूर्व अथर्विस्थ का प्रकार ग्रन्थ स्थान में लिखा है कि उम शेष वारादि का अंतर करे ॥ ७० ॥ ७१ ॥

एत भाष्य इत्यादि, एते कर्तव्ये भाष्य में प्रायः विद्या गो कर्तव्ये २ इत्येते प्रायः
 मन्त्रो दीप इत्यादि- को २० में गुणा गो १०६७० एत भाष्य गता, इमं
 भाष्य में प्रायः विद्या गो कर्तव्ये २० एत एते जानी, शेष २१० को ६० में
 गुणान्ते पर २६० एत इमं भाष्य में प्रायः विद्या गो १३ लक्ष रूप इत्येते
 एत भाष्य, एत एत विद्या कर्तव्ये विद्या प्रयोग के सर्व में व्यवस्थित नृप
 जीवन्ते इत्येते २ । ३० । १३ को मन्त्रवाचक मन्त्रा पर इत भाष्य को
 व्यवस्थित भाष्य, १ । १ । १ में पद्या गो ३ । २६ । ४७ एत चार चर्चा
 एत एत, एत एत कर्तव्ये इत्यादि नृपान्ते भीमात् २६ एते ४७ एत पर
 विद्या गो मन्त्र का प्रयोग मन्त्रिण एत, एत एत भाष्य का प्रयोग जानना,
 एते ही एत एत कर्तव्ये जानना और कर्तव्य समान नृप कर्तव्ये रीति में
 एते एत को मन्त्रिण कर्तव्ये जानना गो दिन प्रयोग कर्तव्ये जायेंगे, मन्त्र दिन
 प्रयोग काल में कर्तव्ये और भाष्य को भी मन्त्रेण कर्तव्ये और पंचमणी चर्चा मन्त्रेण
 कर्तव्ये पंचमणी कर्तव्ये मन्त्रेण दिनपति भी जानना, और हादशवर्गी
 जाति कर्तव्ये जा भी विचार करना ।

पूर्व वर्ष से ज्ञान के रूप का प्रकाश होने का क्रम (ग्रन्थान्तर)

शुशीचाणचन्द्रः कुरामैः सुरामैर्युतं पूर्ववपौद्भवं वासराद्यम् ।
 भवेदग्रिमो वर्षवेशस्तदानीं तिथेयोजितं शंकरैर्जायतेत्र ॥ १ ॥

भाष्यार्थः—पूर्व वर्ष के चारादि में १ । १७ । ३१ । २० जोड़ देने से आगे
 वाली वर्ष का प्रवेश होता है, अर्थात् चार में १, पत्नी में १५, पत्नी में ३१, वि-
 पत्नी में ३० जोड़ना और तिथि में १० जोड़ना, तो आगे के वर्ष प्रवेश का
 प्रकाश होता है, योग में १०, नक्षत्र में १०, लग्न में ३॥ साठे तीन जोड़ने का मत
 किमी किमी गणितों का है ॥ १ ॥

जन्म लग्न में वर्ष लग्न जानना (ग्रन्थान्तर)

गताब्दात्रिनिघ्नाद्विधाशून्यरामैरवाप्तं फलं चार्द्रराशीषु युक्तम् ।
 ततो भानुभिर्मक्षशेषेण युक्ताततो जन्मलग्नाद्भवदेवदलग्नम् ॥ २ ॥

भाष्यार्थः—गत वर्ष गण को तीन से गुणा करके दो स्थानमें स्थापन करना
 एक जगह तीस का भाग देके लग्न फल दूसरी जगह वाले में जोड़

भावार्थः - इस विन्यासमालि नामक ईश्वर का पुत्र जनन्य गुणों से भविष्यत्काल में प्रकृत पूर्ववर्ती से प्रसिद्ध होता गया, जो कि मन्वन्तों के ज्ञानन्दाभेद विन्यासमालि से प्रकृत ज्ञानसे नामक मन्वन्त के उत्तर होता था। स्वभाव से या जीमूत नाम की एक कनिका उत्तर ज्ञान के मार्ग को निरूपण करता गया कि जिसमें इन्द्र का लक्षणों के समकाल में जन्म पर द्वारा शुभ जीमूत जन्म मन्वन्त का निरूपण होता है ॥ ७३ ॥

पञ्चाम्बुजमावि ततो वयधिनन्दीनीलकण्ठःश्रुतिशास्त्रनिष्ठः ।
विद्वन्निवर्त्तनीतिकरं व्यधात्तं गंजाविवेकं सहमावर्त्तनम् ॥ ७४ ॥

भावार्थः - मन्वन्त ईश्वर ज्ञानान्तर्यामी या अम्बुजा (माता) मन्वन्त श्रीनीलकण्ठः शक्तिव्यापित्तोभावात् नीलकण्ठः पञ्चोप्यादि (मन्वन्तः) कर्त्तव्यः विद्वान् पतिनः श्रुतिशास्त्रनिष्ठः (वेदशास्त्रमन्वन्तः) साधनविवेकं (मन्वन्त विद्या) मन्वन्त कर्त्तव्यं, सहमावर्त्तनं सहमन्वन्तकं ज्ञानमन्वन्तको भूयान् मन्वन्त मन्वन्त मन्वन्त सहमन्वन्तं सम्पन्न निरूपितवान् पुनः श्रीनिवर्त्तनीतिकरं पण्डितशिरपीविदम् ॥ ७४ ॥

भावार्थः - मन्वन्त इस जन्म ईश्वर से पञ्चाम्बुजा नाम माता ने पाण्डियादि ज्ञानोपाय नीलकण्ठ स्व ही पुत्र को जन्म दिया जो कि सम्पूर्ण विद्याओं का ज्ञान और वेदविहित कर्मों का करने वाला ऐसा नीलकण्ठ संज्ञावन्त को स्वभाव से या जन्म में मन्वन्तों का निरूपण अच्छे प्रकार से किया गया, और जो विद्वान् रूप शिरजी के लिये ही प्रीति को देता है, ऐसा यह मन्वन्त संज्ञावन्त है ॥ ७४ ॥

इति लक्ष्मीसूत्रे श्रीवन्मिश्रशोभारामात्मजचन्द्रमुखीगर्भजज्ञ्यो-
तिर्विद्वत्तित्तनारायणप्रसादकृतायां नीलकण्ठीनाजिकग्रन्थे
नारायणीभाषाटीकायां गंजावन्त्रे सहमादिनिरूपणं
नाम चतुर्थे प्रकरणम् ॥ ३ ॥

द्वितीयं वर्षतन्त्रं प्रारभ्यते ।



भाषाकार कृत मङ्गलाचरण ।

नत्वा भवानीतनयं गजास्थं नारायणो भूसुरवृन्दभक्तः ।

श्रीनीलकण्ठीकशुभाब्दतंत्रे टीकां प्रवक्ष्ये सुगमां मनोज्ञाम् ॥ ६ ॥

अन्वयः—भवानीतनये (पार्वतीपुत्रं) गजास्थं (गजाननं गणेशं) नत्वा (नमस्कृत्य) भूसुरवृन्दभक्तः नारायणः (मिश्रनारायणप्रसादाख्योऽहं) श्रीनीलकण्ठीकशुभाब्दतंत्रे (श्रीनीलकण्ठीदेवज्ञकृतममीचीर्षतन्त्रे) सुगमां (सरलां) मनोज्ञाम् (मनोहराम्) टीकां प्रवक्ष्ये (कथयिष्ये ॥ १ ॥

भावार्थ—श्रीपार्वती जी के पुत्र हार्थी के गमान मुरा वाले श्रीगणेश जी को प्रणाम करके ब्राह्मणों का भक्त मैं नागगणप्रसाद श्रीनीलकण्ठ देवज्ञ के वृत्ते हुए सुन्दर वर्षतन्त्र में सरल मनोहर भाषाटीका को वर्णन करूँगा ॥१॥

जिन गणेश की प्रमथना के बिना महादेव आदिक सम्पूर्ण देवता धपने धपने मनोरथा को निरिधनापूर्वक पावने को नहीं समर्प्य होते हैं यह निरन्धय करके वेदादितो में सुना जाता है, इसमें श्रीगणेश की स्तुति अवश्य ही करनी योग्य है । १ ॥

वर्षं नन्द्य भार भः ।

जातकोदितदशाफलं च यत्स्युकालफलदं स्फुरं नृणाम् ।

तत्र न स्फुरति देवविन्मतिस्तद्बुधेऽब्दफलमादिताजिकान् ॥२॥

भाषार्थ—जातक शास्त्र में फले हुए शुभ व अशुभ फल मनुष्यों को बहुत फल में फल देने वाले होते हैं ऐसा प्रगट है, योंकि जातक शास्त्र में ग्रहों की वर्ष नक्षत्र वार्त्ता दशा गणित करने से आती है इस फल में पण्डितों की बूढ़ि काम नहीं देती है, कि किम समय क्या फल होवेगा, इस कारण वर्ष के मध्य में फल के प्रानार्थ एवं तांत्रिक ग्रंथों में शुभ व अशुभ फल को वर्णन करना है ॥ २ ॥

गताः समाः पादयुताः प्रकृतिप्रसमा गणात् ।

खवेदाप्तघटीयुक्ता जन्मवारादिसंयुताः ॥ ३ ॥

अब्दप्रवेशवारादिसप्ततष्टेऽत्रिनिर्दिशेत् ।

शिवन्तोऽन्दःस्वस्वात्रीन्दुलवाढ्यःस्वाग्निशेषितः ॥ ४ ॥

जन्मतिथ्यन्वितस्तत्रतिथावन्दप्रवेशनम् ।

तत्कालेऽर्कोजन्मकालरविणास्याद्यतरसमः ॥ ५ ॥

एकैकराशिवृद्धाचेत्तु ल्यांशद्यै र्यदारविः ।

तदामासप्रवेशोद्यु प्रवेशश्चेत्कलासमः ॥ ६ ॥

इन चार श्लोकों का भावार्थ पूर्व संज्ञातत्र में वर्णन कर चुके हैं इस कारण यहां वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

तात्कालिक स्तुखचराः सुधिया विधेयाः स्पष्टाविलग्नमुखभावग-

एषोविधेयः । वीर्यं तथोक्तविधिना निखिलग्रहाणामब्दाधिपस्य
विधये कथयामि युक्तिम् ॥ ७ ॥

भाष्य — पण्डितों को उचित है, कि प्रथम तात्कालिक गृहों को गति
मार्गिन स्पष्ट करें और लग्नादि भावों को स्पष्ट पूर्वक साधन करें, तदनंतर
द्वोंक्त पञ्चवर्गों व द्वादशवर्गों के द्वारा संपूर्ण गृहों का बलावल विचार करें,
दिनें द्वारा में वर्गों की विधि जानने के अर्थ युक्ति को वर्णन करता हूँ॥७॥

वर्षों की निर्णय ।

जन्मलग्नपतिरब्दलग्नपोमुंथहाधिप इतिस्त्रिराशिपः ।

सूर्यराशिपतिरहिन्चन्द्रमाधीश्वरो निशिविमृश्य पंचकम् ॥८॥

वर्त्तायण्पांननुर्माक्षमाणः सर्वपपो लग्नमनीक्षमाणः ।

नेताब्दपो दृष्ट्यति रेकतः स्याद्वलस्य साम्ये विदुरेवमाद्याः ६

शमादिसाम्येन्यन निर्वलत्वे वर्षाधिपः स्यान्मुथद्वेश्वरस्तु ।

पनापिनोनेत्तनुर्माक्षमाणा वीर्गाधिकोऽब्दस्य विभुर्विचिन्त्यः १०

वर्गादिमाम्ये रनिराशिपोद्दिनिर्शान्दुराशीडिति केचिदाहुः ।

सेनेन्दुशान्दोदविभुदराशी म वर्षाधिपश्चन्द्रभपान्यथात्वे ॥ ११ ॥

भाष्य — वर्षों की निर्णय के इन चारों श्लोकों की भाषाटीका प्रथम
मूल श्लोक में दिए चारों हैं, इस कारण यहाँ निर्णय की आवश्यकता
रही है ॥ ८-११ ॥

वर्षों की स्थित वर्ग से फल का वर्णन ॥

जन्मराशिसेन्यवदृष्टमभिन्नमंथो लवशेदयोद्दजनुपोमदृशो-

वर्षेण । निश्चोत्सुहमत्वा विदधानि कायेनेन्द्रमज्यवलनवधि-

वर्त्तायण्पांननुर्माक्षमाणः ॥ १२ ॥

वचन है कि जो मन्त्र को नहीं देखने से भी पञ्चाधिकारियों में से अधिक
बल वाला ग्रह वर्षेण होता है, इस कारण वह वाच्य कहा, और वर्षेण
मन्त्र प जन्म समय में उद्यम को प्राप्त हो गया समान बल हो, अर्थात्
बलहीन नहीं होवे, ऐसा वर्षेण ग्रह सम्पूर्ण उत्तम फल को करता है, शरीर में
ज्योतिष्यता, राज्य बल की प्राप्ति और बहुत सुख को करता है ॥ १२ ॥

वर्षेण बल क अनुसारोय में वर्षेण का फल वर्णन ।

वृत्तपूर्णं ऽद्भुतं पूर्णं शुभं मध्ये च मध्यमम् ।

अधमं दुःखरोगादिभयानि विविधाः शुचः ॥ १३ ॥

भाषार्थ—जो वर्षेण का न्यायी पूर्ण बली हो अर्थात् पंचरर्गों में दस
दिशा में अधिक बल वाला हो तो मं पूर्ण वर्षेण शुभ फल होता है, मध्य
बली अर्थात् दस तक बल होवे तो मध्यम फल होता है, और जो हीनबल हो
अर्थात् पांच दिशा में न्यून (कमती) बल हो, तो दुःख शरीर में रोग, व
शत्रु गणों से भय तथा अनेक तरह के मोनों को करता है ॥ १३ ॥

वर्षेण वर्षेण का फल ।

सूर्ये ऽद्भुतं बलानि राज्यसुखात्मजार्थलाभः कुलोचितविभुः प-
रिवारसौख्यम् । पुष्टं यशोगृहसुखं विविधा प्रतिष्ठा शत्रुविन-
श्यति फलेजनि खेटयुक्त्या ॥ १४ ॥

भाषार्थ—जो सूर्य वर्षेण हो और पूर्ण बली होवे तो राज्य, सुख, पुत्र,
द्रव्य इनका लाभ हो, कुल के अनुगार प्रभुता हो, परिवार में सुख हो,
देह के लिये पुष्टता, यश, गृह का सुख, नया शत्रुओं का नाश होवे, परन्तु
ऐसा फल तब होता है कि जो जन्म काल में वर्षेण उत्तम बली हो तो
परमाणम फल होता है, और यदि मध्य बली हो तो उत्तम फल, अधम बल
होने से मध्यम फल जानना, तथा जो जन्म काल में वर्षेण ग्रह मध्यम बली
होकर वर्षेण समय में उत्तम बली हो तो उत्तम ही फल होता है, जो मध्यम
बली हो तो मध्यम फल अधम बली हो तो अधम फल होता है, और यदि
जन्म काल में वर्षेण ग्रह अधम बली होकर वर्षेण काल में उत्तम बली होवे तो
मध्यम फल को देता है, मध्यम बली होवे तो अधम फल, अधम बली

वर्षेश मंगल का फल ।

भोमेऽद्भ्येवलिनीकीर्तिजयारिनाशसेनापतित्वरणनायकताप्रदिष्टा
लाभः कुलोचितधनस्य नमस्यतात्रलोकेषुमित्रसुतवित्तकलत्र-
सौम्यम् ॥ २१ ॥

भा०—जिनके वर्षकाल में मंगल पूर्णवली होकर वर्षपति होवै तो वह प्राणी कीर्तिमाना जयमाना व शत्रुओं का नाश करने वाला होकर सेनापति होता है जिनमें वह रणनायक (संग्राम का स्वामी) कहा जाता है और इनके उचित धनको पाकर लोक में जनों में पूजित होकर मित्र पुत्र धन की सुखसौभाग्य प्राप्त है ॥ २१ ॥

मयेऽद्भ्येऽवनिमुते रुधिरमुतिश्रकोपाधिकाशकटशस्त्रहतिक्ष-
निश । स्वामिन्मात्मगणतोवलगौरवंचमध्यंमुखंनिखिल मुक्त-
फलं विनिन्द्यम् ॥ २२ ॥

भा०—जिनके वर्ष पेश समय में मंगल मध्यम वली होकर वर्ष का स्वामी होवे तो प्राणी के रक्तमुति श्रकोप फोड़ा फुन्गी आदि से रुधिर व पीर हो, शीत वद बहुत कोपमाना व माडी से गिरकर चोट व क्षीण दृष्टिमान के अन्तरे से मर व मर व अपने कर्णोंका मसारी वन और मरुतामदित मरुत मुक्तता प्राप्त होता है, यह मर कदा कृष्ण तन पण्डितों को चिन्तयन करने पर प्राप्त है ॥ २२ ॥

हृदिऽद्भ्येऽग्निभयंगिपुनम्कगमिनिलोकापवादमयमात्मधियावि-
नाशः । कार्यस्य पितृमनिगोगमयं विदेशयानं क्षयोपनयनो-
पुनदप्ययभावे ॥ २३ ॥

भा०—जिनके वर्ष प्रवेश समय में मंगल मध्यम वली होकर वर्ष का स्वामी होवे तो प्राणी के रक्तमुति श्रकोप फोड़ा फुन्गी आदि से रुधिर व पीर हो, शीत वद बहुत कोपमाना व माडी से गिरकर चोट व क्षीण दृष्टिमान के अन्तरे से मर व मर व अपने कर्णोंका मसारी वन और मरुतामदित मरुत मुक्तता प्राप्त होता है, यह मर कदा कृष्ण तन पण्डितों को चिन्तयन करने पर प्राप्त है ॥ २३ ॥

सूक्त होकर विदेग को जाता है, और मगध को गृहपति नहीं देखना हीन को समोति (दुःख) से भर होता है ॥ २३ ॥

पुत्र प्रवेश का फल ।

सौम्येऽब्दपेवत्वति प्रतिवादलेख्यमन्त्रास्त्रसहस्रवहताविजयो-
ऽर्थलाभः । ज्ञानं कलागणितवैद्यभवं सुरत्यं राजाश्रयेण नृपता
नृपमत्रिता वा ॥ २४ ॥

भा०—जिनके वर्ष प्रवेश समय में पुत्र फलान होकर पुत्र प्रवेश का फल हीन को यह प्राणी प्रतिवाद शीघ्र उन्नत देने व निम्नने व प्रवृत्त वेदा-
नादि शस्त्रों में प्रयोग होकर समोतिन अग्रहणों में विजय व धनको पाता है और ज्ञानान व मय फलायी (पारीगरी की विद्याओं) में कुशल (निष्ण) होकर गणित तथा वैद्य विद्याकी सुरता को जानना दृष्टा राजा के आश्रय से राजा के समान व राजा का मन्त्री होता है ॥ २४ ॥

अब्दाधिपेशशिसुतेखलुमध्यवीर्यस्यान्मध्यमेनिखिलमेतदयाध्वया-
नम् । वाणिज्यवतनमयात्मजमित्रसौख्यं सौम्येत्यशालवशतोपरधां
न सम्यक ॥ २५ ॥

भा०—जिनके वर्ष प्रवेश समय में पुत्र मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी होवे, तो पूर्वोक्त मय फल मध्यम होता है, और यह प्राणी यात्रा द्वारा व्यापार कर्म को करता है, उर्ता से अपने पुत्र व मित्रवर्गों को सुख देता है, परन्तु पुत्र शुभग्रहों के साथ उत्पशाल के वश से शुभफल होता है इस से अन्यथा हो तो अशुभ फल जानना अर्थात् पुत्रका पापग्रहों के साथ ईराफ योग होवे तो अनिष्ट फल जानना ॥ २५ ॥

सौम्येऽब्दपेऽधमवले वलबुद्धिहानिर्धर्मक्षयः परिभवो निजवा-
क्यदोपात् । विक्षेपतो विपदतीव सृपेव साक्ष्यं हानिः परव्यहतेः
सुतवित्तमित्रैः ॥ २६ ॥

भा०—जिनके वर्ष प्रवेश समय में पुत्र अधमबली होकर वर्ष का स्वामी

होने तो उम प्राणी के बलबुद्धि की हानि होती है, और वह प्राणी धर्म का नाश करता हुआ अपने वाच्य दोष से तिरस्कार (अनादरभाव) को प्राप्त भवमाना मा होकर अपनेकानेक विपत्तियों को सदाता हुआ बहुत भूँठी गवाही देता हुआ परमेश्वर के अपने पुत्र, मित्र व धन इन करके हानि को मान होता है ॥ २३ ॥

गुरु वंश का फल ।

जीवेऽदपे बलयुते परिवारसौख्यं धर्मो गुणग्रहिलताधनकी-
र्त्तिपुत्राः । विश्वस्यता जगति सन्मतिविक्रमासिर्लाभोनिधेर्नृप-
तिगौरवमभ्यरिधनम् ॥ २७ ॥

भावार्थः—जिसे वंशप्रदेश ममय से वृद्धयति पूर्ण बली होकर वप का प्राप्ती होवे तो आदमी परिवार से सुखी, धर्मरिमा, गुणों का आहक होता है और कीर्ति, धन, पर इनका गुण व लोक में विश्रामी उचम बुद्धि बल की प्राप्ति, निधि (सत्ताया) का लाभ, राजा से नदार्डे, शत्रुओं का नाश इन सब फलों का करण है, यर्थात् यह व पूर्ण उचम फल होते हैं ॥ २७ ॥

अशुभानि मुरगुणे हिल मध्यर्वाये स्यान्मध्यमं फलमिदं नृप-
सममनन । विप्रश्च शस्त्रपरतायशुभेमराफे दारिद्र्यमर्थविलय-
न्य कानुपीडा ॥ २८ ॥

भावार्थः—जिसे वंशप्रदेश ममय में वृद्धयति मध्यम बली होकर वप का प्राप्ती होवे, तो वंशों कदा कदा कर्ण उचम फल मध्यम होता है, और यह आदमी शत्रुहण शस्त्र शस्त्रों व यजिप्रायो का शशा दाता है, जो उदयति परादमी से दैवमाय मय करे तो पर आदमी दारिद्र्य होकर अपनी कानुपीडा का करण है, यथा व विप्र धन का नाश होता है ॥ २८ ॥

जीवेऽदपेऽपानवते धनसमौख्यदानिम्यत्रन्ति मुर्तामित्रत्रना-
सममनने । नोकायकदभ्यमाहृतानिदृष्टं धृतिमननोकफर-
तमिदृष्टे, इतिदृष्ट ॥ २९ ॥

भाषार्थः—जितने वर्ष प्रवेश समय में सुहरति स्वयं बली होकर वर्ष का होने तो धन प्राप्त, सुख की दानि होवे, और पुत्र मित्र कुटुम्बी जन तथा स्त्री मन्त्रि इनको छोड़ केने है, और लोक के प्रयासः स्वयं मित्रा कर्मकर्म प्राप्त होकर वृद्ध की प्राप्ति होता है, और अपने धर्म में कर्म रोप प्रयास पर कर लेता है जिनमें हीन बली होकर वह मनुष्य कर्म प्राप्ति करता जाता है, और शत्रु से भय और कन्पुजनों से कर्म की प्राप्ति होता है ॥ २६ ॥

वर्षेशुक्र का फल ॥

शुक्रोऽब्दो बलिनि नीरजता विलासच्छास्त्ररत्नमधुराशन-
भोगतोपाः । जेमप्रतापविजया वनिताविलासो हास्यं नृपाश्रय-
वशेन धनं सुखं च ॥ ३० ॥

भाषार्थ—जितने वर्ष प्रवेश समय में शुक्र उत्तम बली होकर वर्षेश होवे तो वह प्राणी रोग रहित (आरोग्य शरीर) व सुन्दर शाय और रत्नों का विलासी होकर मधुर पदार्थों का भोजन करने वाला व लोगों से मनुष्य व कन्पाण युक्त व प्रतापी शत्रुओं का जीतने द्वारा व वनिताओं के साथ भाव कथाओं से आनन्दित व हंसता हुआ प्रति दिन प्रयत्न मन वाला व राजा के आश्रय वश से धन और सुख का प्राप्ति होता है ॥ ३० ॥

अब्दाधिपे सृगुसुतेखलुमध्यवीर्यं स्यान्मध्यमं निखिलमेतदथा-
ल्पवृत्तिः । गुप्तं च दुःखमिखिलं सुनिबद्धवृत्तिः पापारिबीक्षित-
युते विपदोऽर्थ नाशः ॥ ३३ ॥

भाषार्थ—जितने वर्ष प्रवेश समय शुक्र मध्यम बली होकर वर्ष का स्वामी होवे, तो पूरा कला हुआ सब फल मध्यम होवे और वह प्राणी थोड़ी जीविका वाला होता है, और संपूर्ण दुख विषा हुआ होवे, कोई दुख देखने में प्रगट न होवे, और जीविका बंधी हुई होवे अर्थात् चाकरी (वेतन, पगार) जितनी बंधी हो उससे अधिक प्राप्ति नहीं होवे, जो शुक्र पापगुहों से वा शत्रु से दृष्ट युक्त हो तो विपत्ति और धन का नाश होवे ॥ ३१ ॥

शुक्रेऽब्दपेऽधमवले मनसोऽतितापो लोकापहासविपदो निज
वृत्तिनाशः । द्वेषः कलत्रसुतमित्रजनेषु कष्टादन्नाशनं च विफल
क्रियया न सौख्यम् ॥ ३२ ॥

भाषा—जिम्मे वर्ष पृथेश ममय में शुक्र अधम वली होकर वर्ष का
शरणा होवे, तो उम प्राणी के मन को बहुत ताप हो, लोक में उपहास हो
वर्तित हो, अपनी जीविका का नाश हो, योग स्त्री, पुत्र, मित्रों के विषे द्वेष
भार होवे, तथा कष्ट में अन्न भिने जो कार्य आरम्भ करे वह निष्फल
होवे ॥ ३२ ॥

चौदश शनि का फल ।

मन्देऽब्दपे नलिनिनूतनभूमिवेश्म क्षेत्राप्तिरर्थनिचयो यवनाव-
नीशान । शारामनिर्मितजलाशयसौख्यमंगपुष्टिः कुलोचितप-
दापिगुणागुणित्वम् ॥ ३३ ॥

भाषा—जिम्मे वर्ष पृथेश ममय में शनि उन्नम वली होकर वर्ष का
शरणा होवे, तो उससे नलीन भूमि, पुर, खेत इनकी प्राप्ति होवे और
शारामादि में वन निर्मा, तथा खरीया जालास, कृषा, यात्रही वनभाव और
श्री लक्ष्मी का शरीर शर्व, और अपने कुल के उन्नत पर को प्राप्त होने वाला
शुभ फल निचयो के प्राप्त होवे ॥ ३३ ॥

अब्दविने मयिमुते मन्मध्यर्वाये म्यन्मध्यमं निग्निलमन्न-
भूमिभूदशान । दामांश्रमादिपकुलान्यरतिस्नुलाभःपापं फलं
शरीरं पापयुतिशान्ति ॥ ३४ ॥

मन्दे बलेनरहितेऽब्दपत्तो क्रियाणां वष्यत्तमर्धविलयो विपदा-
 ऽरिभीतिः । स्त्रीपुत्रगित्रजनवरकदन्नभुक्तिः सौम्येत्यशालियुजि
 सौख्यमपीपदाहुः ॥ ३५ ॥

भाषार्थः—जिम्बे वर्ष मवेश समय में होन फल जाना शनिश्चर वर्ष का
 स्वामी हो, जो उम यादगी की सम्पूर्ण क्रियाओं का वाधक तम भव का
 नाश, विधि, पैरी का भय, और रीति, पुत्रजन इन से पैर होना है, तथा जाना
 काहानि पादि दुष्ट कर्म पावन होना है, शनिश्चर के साथ शुभ ग्रहों का दृ-
 शान हो तो कुछ सुख भी मिलता है, ऐसा आचार्यों ने कहा है ॥ ३५ ॥

वर्षेश द्वारा सम्पूर्ण वर्ष का शुभाशुभ फल ।

वर्षेश्वरो भवति यः मदशाधिपोब्दे ज्ञेयोभिलेब्दजनुपोर्वलमस्य
 चिन्तयम् । वीर्यान्वितेऽत्रनिभ्रिलं शुभमब्दमाहुर्हान्त्यनिष्टफलता
 सगता समत्वं ॥ ३६ ॥

भाषार्थः—जो ग्रह वर्ष का स्वामी होना है, वही सम्पूर्ण वर्षभर दशा
 का स्वामी जानना, उसका रत्न जन्म समय और वर्ष समय पंचवर्षी द्वारा
 चिन्तन करना, बलवान हो तो सम्पूर्ण साल पर्यन्त शुभ फल जानना, हीन
 बली हो तो अनिष्ट फल, और मध्य बली हो तो मध्यम फल जानना ॥३६॥

दृश्यशाल योग द्वारा वर्षेश का फल ।

येनेत्थशालोऽब्दपतेर्ग्रहोसौ स्त्रीयस्वभावात्स फलं ददाति ।
 शुभेसराफे शुभमस्ति किंचिदनिष्टमेवाशभमूसरीफे ॥ ३७ ॥

भाषार्थः—वर्ष का स्वामी जिम्बे ग्रह के संग दृश्यशाल योग करे तो
 यह ग्रह अपने स्वभाव (संज्ञान्त्र में कहे हुए स्वरूप) वश से शुभ फल को
 देता है, और वर्ष स्वामी ग्रह शुभ ग्रह के साथ ईसराफ योग करे तो
 शुभ फल होता है, पाप ग्रह के साथ ईसराफ योग करे तो कुछ अनिष्ट
 फल होता है ॥ ३७ ॥

हजा द्वारा वर्षेश का फल ।

हृद्दे यादृशि यः खेट आधत्तेऽत्र च यो महः ।

जन्मन्यब्दे च तादृक्वेत्तदात्मफलदस्त्वसौ ॥ ३८ ॥

भाषार्थः—जो वंशेश्वर ग्रह अपने मित्र अथवा शत्रु हृद्देश में हो और मित्र दृष्टि च शत्रु दृष्टि से तेज को धारण करता हो अर्थात् इत्थशाल योग होने, तथा जन्म समय वर्ष समय में उक्त तरह से समान हो तो शुभ या अशुभ फल हवा के अनुसार देता है अर्थात् शुभ ग्रह होवे तो शुभ फल और पापग्रह होवे तो अनिष्ट फल का देने वाला होता है ॥ ३८ ॥

जन्मकालीन शुभाशुभ फलदायि ग्रह द्वारा वंश का फल ।

यो जन्मनि फलं दातुं विभुर्मृसरिफोऽस्य चेत् ।

अब्दलम्नाऽब्दपभवस्तस्मिन्नब्देन तत्फलम् ॥ ३९ ॥

न्यन्यामं फलमादेश्यमित्थशाले विशेषतः ।

नाभयं नैतदायमिन् जन्माश्रयमितिस्फुटम् ॥ ४० ॥

भाषार्थः जो ग्रह जन्मकाल में अपने भाव का फल देने को समर्थ है, यदि जन्म वर्ष जन्म काली प्रौढ वयोग के मंग ईशराफ योग होने तो उस वयोग में उस भाव में उत्पन्न दृष्ट्या फल नहीं होता है ॥ ३९ ॥ जो ग्रह अपने विरुद्ध हो वंशेश्वर ईशराफ योग नहीं होने वा जन्म कालिक जन्म वर्ष वयोग है तथा जो उन्वशाल योग होने तो विशेष करके अशुभ फल देता है, और जो ईशराफ च मृगशीक दोनों योग नहीं होने तो अशुभ फल देता है परन्तु मित्थ है, क्योंकि कोई भी ग्रह अशुभ नहीं है, यद्यपि (अन्यामं फलमादेश्यं) इस करके पुनर्कालिक फल का प्रकट होता है जो भी अपने स्वष्ट्र शरी में पैदा कदा गया, अन्यथा वह शुभ फल से ही है यदि भी वयोग १५५५ में ग्रन्थकार नीलकण्ठी का मत है कि जो ग्रह अशुभ फल देता है, वह उदाहरण ।

पुनर्कालिक जन्मनि पृथग्भवे पश्यन्मृतं दानुपमो ममर्थः ।

नैतद्वदन्तस्मिन्कं दुस्स्य दायो मयर्वाट वर्षे ॥ ४१ ॥

भा०—जन्म समय में पंचम भावका स्वामी अपने (पाँचवें) भाव को देखना हुआ वह ग्रह प्रथम फल देने का समय हाफर वर्ष में जहाँ कहीं स्थित है और वर्षों के साथ इतराफ योग को करना है, इससे इस वर्ष में परदा नाश होगी, ऐसे ही अन्य भावों में वर्ष लगनेश और वीरेश इन दोनों के साथ भावेन का इतराफ योग करने उदाहरण को जान लेना ॥ ४१ ॥

हरे का उदाहरण ॥

अब्देस्वरो गुरुमित्रहृद् मित्रहृशा शशी ।

मद्योत्राधादमृद्वसवयेन्द्रस्तेन शोभनः ॥ ४२ ॥

भा०—पाँचवाँ स्वामी बुधस्वानि जन्म समय मित्र हृद् में है और मित्र हृद् में चन्द्रमा के साथ इतराफ योग है अर्थात् चन्द्रमा बहुस्वति में अपने नेत्र को धारता है, इस कारण वर्ष समय शुभ जानना चाहिये ॥ ४२ ॥

पाँच फल का उपसंहार ।

एवमुन्नेयमन्यच्च शुभाशुभफलं बुधैः ।

बलाबलविशेकेन योगत्रयविमर्शतः ॥ ४३ ॥

भा०—अब योग फलाध्याय का उपसंहार (समाप्त) करते हैं—कि इसी प्रकार अन्य शुभ पंडितों करने बलाबल के विचार और मुयशिल, कम्बूल, इतराफ, इन योगों के ज्ञान से जानना चाहिये ॥ ४३ ॥

इति श्रीनीलकण्ठीभाषाटीकायां वर्षतंत्रं वर्षेश फल

निरूपणाध्यायः प्रथमः ॥ १ ॥

अथ मुथंहानिरूपणाध्यायां द्वितीयः प्रारभ्यते ।

मुथहा के लाने का प्रकार ।

स्वजन्मलग्नात्प्रतिवर्षमेकैकराशिभोगान्मुथहा भ्रमेण ।

स्वजन्मलग्नंरवितष्टयात्तशरद्वृतं साभमुखेथिहा स्यात् ॥ १ ॥

भा०—अपनी जन्म लग्न से प्रति वर्ष एक २ राशि भोग करता हुआ मुथहा भ्रमण करता है, अर्थात् जन्म लग्न से प्रत्येक वर्ष एक एक राशि बढ़ता

है, अपनी जन्म लगन संख्या में गत वर्ष संख्या जोड़कर चारह का भाग देकर शेषांक रहे मेषादि मुंघडा राशि होती है, इसका उदाहरण संज्ञा तन्त्र में यह चुके हैं ॥ १ ॥

मुन्घडा की उपपत्ति ग्रहों के समान है ।

प्रत्यहं शरलिप्ताभिर्वर्द्धते सानुपाततः ।

सार्धमंशद्वयं मासमित्याहुः केपि सूरयः ॥ २ ॥

भावार्थः - प्रति दिन मुंघडा अनुपात (त्रैराशिक) से पांच २ कला बढ़ती है इस प्रकार एक मास में अर्धशत अन्धा बढे है यह कितनेक विद्वानों से कहा है ॥ २ ॥

सप्तमी और शुभ ग्रहों द्वारा मुन्घडा का फल ।

स्वामिमौम्येक्षणात्मौम्यं क्षुतदृष्टया भयं रुजः ।

भावान्नांकनमंगोगात्फलमस्या निरूपयते ॥ ३ ॥

भावार्थः - अपने स्वामी शुभग्रह के देगे जाने में मुन्घडा सुलको देता है इस सुलका का शुभ ग्रह स्वामी वा पाप ग्रह स्वामी धरु दष्ट से देयता हो तो मर्त्यो देता है पर कर्मादि द्वादश भागों में स्थित व ग्रहों की दृष्टि तथा मर्त्यो से इस सुलका का फल निष्पन्न किया जाता है ॥ ३ ॥

वर्षादि भाग में स्थित मुन्घडा का फल ।

वर्षान्मान्मुम्याम्नान्त्यदिपुमन्ध्रान्शोभना ।

पुनर्वर्षाद्ये गाम्द्याम्यं दत्तेऽन्यत्राद्यमाद्धनम् ॥ ४ ॥

भावार्थः - वर्षादि भाग में १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ इन स्थानों में स्थित मुन्घडा कष्टक देता है १ । २ । ३ इन स्थानों में जाने में व्याप्तिय को देता है ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । १७ । १८ । १९ । २० । २१ । २२ । २३ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । ३२ । ३३ । ३४ । ३५ । ३६ । ३७ । ३८ । ३९ । ४० । ४१ । ४२ । ४३ । ४४ । ४५ । ४६ । ४७ । ४८ । ४९ । ५० । ५१ । ५२ । ५३ । ५४ । ५५ । ५६ । ५७ । ५८ । ५९ । ६० । ६१ । ६२ । ६३ । ६४ । ६५ । ६६ । ६७ । ६८ । ६९ । ७० । ७१ । ७२ । ७३ । ७४ । ७५ । ७६ । ७७ । ७८ । ७९ । ८० । ८१ । ८२ । ८३ । ८४ । ८५ । ८६ । ८७ । ८८ । ८९ । ९० । ९१ । ९२ । ९३ । ९४ । ९५ । ९६ । ९७ । ९८ । ९९ । १०० ।

वर्षादि भाग में स्थित मुन्घडा का फल ।

वर्षान्मान्मुम्याम्नान्त्यदिपुमन्ध्रान्शोभना ।

शरीरपुष्टि विविषोद्यमाश्च ददाति वित्तं मुथहा तनुम्वः ॥५॥

भा०—जन्म में स्थित मुन्यहा शत्रु ज्ञान मनमें प्रमत्तता लाभ मत्वाप की पुष्टि राजा की प्रमत्तता देह में पहना इनको कर है अपनेक व्ययों से पनको देव है ॥ ५ ॥

द्विगरे भाव में स्थित मुन्यहा का फल ।

उत्साहतांशगमनं यशश्च स्ववन्धुसन्माननृपाश्रयश्च ।

मिष्टान्नभोगो बलपुष्टिमौख्यं स्यादर्धभावे मुथहा यदाच्चे ॥६॥

भा०—जो र्प प्रवेश मगय में मुन्यहा द्विगरे भाव में होवे तो उत्साह से धन वाकर यह प्राणी लोक में यदास्वी शौर अपने बंधुजनों से सम्मान को प्राप्त होना हुआ राजा के आश्रय से मिष्टान्न भोग बल पुष्टि मुख को प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

तीगरे भाव में स्थित मुन्यहा का फल ।

पराक्रमाद्विजयशःसुखानि सौन्दर्यसौख्यं द्विजदेवपूजा ।

सर्वोपकारस्तनुपुष्टिकीर्तिनृपाश्रयश्चेन्मुथहा तृतीया । ७ ॥

भा०—यदि मुन्यहा तीगरे भाव में होवे तो अपने ही पराक्रम से धन यश, सुख, प्राप्ताण शौं देवनाथों की पूजा, मक्का उपकार यह शरीर, यश, राजा का आश्रय यह सब फल होता है ॥ ७ ॥

चौथे भाव में स्थित मुन्यहा का फल ।

शरीरपीडा रिपुभीः स्ववर्ग्यवरं मनस्तापनिरुद्यमत्वे ।

स्यान्मुथहायां सुखभावगायां जनापवादामयवृद्धिदुःखम् ॥८॥

भा०—चौथे भाव में मुन्यहा स्थिर होने से शरीर पीडा, शत्रु भय, अपने कुटुम्बी जनों से वर्ग, मनको ताप, निरुद्यमता (बेरोजगार) मनुष्यों में अपवाद, (कलक) गोग शौं दुःखकी वृद्धि इनको करता है ॥ ८ ॥

पंचम भाव के मुन्यहा का फल ।

यदीथिहा पंचमगाद्दवेशे सद्बुद्धिसौख्यात्मजवित्तलाभः ।

प्रताप वृद्धिर्विविधा विलासाः देवद्विजार्चा नृपतेः प्रसादः । ६ ।

भावार्थ—जो चर्च पवेश समय में मुंथा पांचवे स्थान में स्थित हो तो मुन्दर वृद्धि व सुख, पुत्र, द्रव्य इनका लाभ, प्रताप की वृद्धि अनेक प्रकार के विनाश, देवता और ब्राह्मणों में भक्ति राजा की पसन्दता से शुभ फल होते हैं ॥ ६ ॥

एठे भाव के मुंथा का फल ॥

कुरात्वमंगेषु रिपूदयश्च भयं रुजस्तस्करतो नृपाद्वा ।

कार्यायनाशो मुयहारिगा चेद्बुद्धिःवृद्धिःस्वकृतोऽनुतापः १०

भावार्थ—एठे मुंथा एठे भाव में स्थित होतो शरीर में दुर्बलता शत्रुओं का उदय, रोग, चौर वा राजा में भय, कार्य और धन का नाश, दुष्टवृद्धि की वृद्धि, अपने किये हुए कृत्यों में पश्चताप, ये अशुभ होते हैं ॥ १० ॥

सातौ भाव के मुंथा का फल ।

कलत्रवन्नुद्यमनादिर्भानिरुग्माहभंगो धनधर्मनाशः ।

शून्योगा चेन्मृषदा मनोःम्याद्दुजा मनोभोहविरुद्धचेष्टा ॥ ११ ॥

भावार्थ—सातौ भाव प्रवेश समय में मुंथा सातौ स्थान में स्थित होवे, तो शत्रु व वृद्धों में दाया शत्रु वय, उन्माद भंग धन और धर्म का नाश, रोग दूषण को छोड़ विपत्तियों के प्रलय फल होते हैं ॥ ११ ॥

आठौ भाव के मुंथा का फल ।

अन मिदोऽभ्युत्थनो विनाशो धर्मार्थयोर्द्व्यमनामयश्च ।

धुम्बुम्बुदा चेन्मृषदा नगणां वलत्रयः म्याद्रमनं सुदुरे ॥ १२ ॥

भावार्थ—आठौ भाव प्रवेश समय में मुंथा आठौ स्थान में स्थित होवे, तो अज्ञान, अहंकार, अविद्या मनुष्यों को शत्रु, भय चौर व वृद्धों में दाया शत्रु वय, उन्माद भंग धन और धर्म का नाश, कष्ट देने वाला रोग, वय दूषण को छोड़ विपत्तियों के प्रलय फल होते हैं ॥ १२ ॥

नवौ भाव के मुंथा का फल ।

अन मिदोऽभ्युत्थनो विनाशो धर्मार्थयोर्द्व्यमनामयश्च ।

देवहिजायां परमं यशश्च भाग्योदयो भाग्यगतेन्विहायाम् १३

भा०—नवम स्थान में मुंथहा होने में स्वामिन्दर, राजा से धन की प्राप्ति धर्म का उत्तम, पूत्र श्री करके सुख, देवता और माधवों का पूजन, परम परम भाग्य का उदय, यह सब उचम फल प्राप्त होते हैं ॥ १३ ॥

दशम भाग के मुंथहा का फल ॥

नृपप्रसादं स्वजनापकारं सत्कर्मसिद्धिद्विजदेवभक्तिम् ।

यशोभिवृद्धिं विविधार्थलाभं दत्ते म्वरस्था मुथहा पदाप्तिम् १४

भा०—दशम भाग में स्थित मुंथा राजा की प्रमन्नता, अपने जनों का उपकार करना व करना, अपने कर्मों की सिद्धि, प्राणाय और देवताओं में भक्ति, व धन की उद्वि, अपने क प्रहार के धनों का लाभ व स्थान की प्राप्ति, इन सबों को देवे हैं ॥ १४ ॥

ग्यारहवें स्थान में स्थित मुंथा का फल ॥

यदीन्विहा लाभगता विलाससौभाग्यनैरुज्यमनः प्रसादाः ।

भवन्ति राजाश्रयतो धनानि सन्मित्रपुत्राभिमताप्तयश्च ॥१५॥

भा०—यदि मुंथा ग्यारहवें स्थान में स्थित होवे तो गियों के विलास से मुक्त, सुन्दर भाग्य धानोग्यता, निज में प्रमन्नता, राजा के आश्रय से धन की प्राप्ति, उत्तम मित्र, पुत्र, वांछित पदार्थों की प्राप्ति, ये उचम फल होते हैं ॥१५॥

बारहवें स्थान में मुंथहा का फल ।

व्ययोधिको दृष्टजनैश्च संगो रुजा तनो विक्रमतोर्थसिद्धिः ।

धर्मार्थहानिनिमुंथहा व्ययस्था यदा तदा स्याज्जनतोपि वैरम् १६

भा०—बारहवें स्थान में मुंथहा स्थित हो तो अधिक व्यय (उपादा-मर्च) दृष्ट मनुष्यों से संग, देह में रोग, अपने पराक्रम से अर्थ सिद्धि, धर्म व धन की हानि अपने या अन्यजनों से और, ये अशुभ फल होते हैं ॥ १६ ॥

क्षत दृष्टि द्वारा क्रूर ग्रह स्थित मुंथा का फल ।

क्रूरदृष्टः क्षुतदृशा यो भावो मुथहात्र चेत् ।

पापग्रह सौम्य भावों में युक्त मुख्या का फल ।

यदोभ यत्रापि हुता भावो नश्येत्स सर्वथा ।

उभयत्र शुभत्वेतु भावोसौ वर्द्धतेतराम् ॥ २० ॥

भाषार्थः—जन्म लग्न से व वर्ष लग्न पूर्वोक्त अग्निष्ट जगट में स्थित पाप युक्त मुख्या हो तो मनुष्य को उम भाव सम्बन्धी अग्निष्ट फल को सर्वदा अवश्य ही देने हैं और जो मुख्या दोनों जगट (जन्मकाल व वर्षलग्न) में शुभग्रहों से युक्त हो तो यह मुख्या उक्त भाव अग्निष्ट फलके वृद्धि को प्राप्त होता है अर्थात् यह मुख्या उक्त भाव अवश्य ही अग्निष्ट फल को देवे है ॥ २० ॥

वर्षेऽग्निष्टगेहस्यायद्भवेजनुपिस्थिता ।

क्रूरोपघातात्तं भावं नाशयेच्छुभयुक्तशुभाः ॥ २१ ॥

भाषार्थः—वर्ष प्रवेश समय में वर्षलग्न से जन्मलग्न से भी अग्निष्ट जगट अर्थात् चौथे, छठे, सातवें, आठवें, दसवें घर में मुख्या विराजमान हो तो जन्म समय में जन्मलग्न से जिस भाव में मुख्या विराजमान हो यदि वह भाव वर्ष समय में पापग्रहों से युक्त हो तो उक्त जन्मस्थित मुख्यायुक्त भाव को नाश करे है और यदि वर्ष में अग्निष्ट समनम्य मुख्या अग्निष्ट गृहों से युक्त हो तो अग्निष्ट फल देवे है ॥ २१ ॥

उदाहरण ।

जनुर्लग्नतस्तुर्यगा सौम्ययुक्ताद्भवेशेपितृव्यस्थ लाभं विधत्ते ।

नृपाद्धीतिदा पापयुक्तिकष्टाष्टमादावपीत्यं विमशो विधेयः ॥२२॥

भाषार्थः—वर्ष में जन्मलग्न से चौथे घर में विराजमान मुख्या वर्ष प्रवेश समय में अग्निष्ट गृह से युक्त हो तो चचा को लाभ होता है और पापयुक्त हो तो राजा से भय होता है और अति कष्ट पाता होता है ऐसा जानना एवं आठवें आदि अग्निष्ट घरों का विचार करना ॥ २२ ॥

वर्षेश के बल से भाव स्थित मुख्या का फल ।

यस्मिन्भावे स्वामिसौम्येक्षिता चेद्भावो जन्मन्येष यस्तस्य वृद्धिः ।

एवं पापैर्नाश उक्तस्तु तस्येत्यूह्यत्तं वीर्याद्विर्षपःसौख्यमेव ॥२३॥

भा०-वर्ष प्रवेश समय में वर्ष लग्न से मुखहा जिस भाव में स्थित हो
 और उस भाव के स्वामी व शुभग्रह से दृष्ट हो, वह राशि जन्म समय में जिस
 भाव में हो उस भाव का फल प्राप्त होता है पाप युक्त होने से भावका नाश
 होता है, और वर्ष स्वामी ग्रह वल्लवान होवे तो मुखहाकृत अशुभ फल अरिष्ट
 फल नहीं करना मुख ही देता है ॥ २२ ॥

ग्रहों की राशि ग्रहों के भाव व ग्रहों की दृष्टि द्वारा मुख का फल ।

यदीन्विहा मूर्धगृहे युता चेतसूयेण राज्यं नृपसंगमं च ।
 दत्ते गुणानां परमामवाप्ति स्थानान्तरस्येति फलं दृशोपि ॥२४॥

भा०-जो मुख मूर्धही राशि (सिंह) में स्थित हो वा सूर्य से
 दृष्ट हो तो उस प्राणी के अर्थ राज्य और राजा के संगम को देवे है,
 और जो सूर्य के परम उत्कृष्ट स्थान को पारकर अर्थात् गुणज्ञ होकर
 किसी और है और जो मूर्ध मुखहा को देगना होवे तो भी यही फल
 प्राप्त ॥ २४ ॥

चंद्रो मूर्धोन्मृगहेथ दृष्टेन्दुनापि वा धर्मयशोभिवृद्धिम् ।
 मन्त्रयमन्तोपमनिवृद्धिं ददाति पापेक्षणतोतिदुःखम् ॥ २५ ॥

भा०-जो चंद्रो मूर्धो मृगहेथ चन्द्रमा से युक्त हो वा चन्द्रमा
 मूर्धो मृगहेथ में स्थित हो अथवा चन्द्रमा देगना हो तो उस प्राणी
 को धर्मयशोभिवृद्धि, मन्त्रोपमनिवृद्धि की वृद्धि इन शुभ फलों
 को देवे है और जो मूर्धो मृगहेथ पाप ग्रहों से युक्त हो तो अति दुःख
 को देवे है ॥ २५ ॥

जनेन युवा वृद्धे कृजेन दृष्टा च पितोऽप्यग्रजं कर्मेति ।
 मन्त्रोन्विता मन्त्रिभ्योऽपि मन्त्रिभ्योऽपि मन्त्रिभ्योऽपि मन्त्रिभ्योऽपि ॥२६॥

भा०-जो युवा वृद्धे कृजेन दृष्टा च पितोऽप्यग्रजं कर्मेति ।
 मन्त्रोन्विता मन्त्रिभ्योऽपि मन्त्रिभ्योऽपि मन्त्रिभ्योऽपि मन्त्रिभ्योऽपि ॥२६॥

युधेन शुभेण युतेक्षिता वा तद्ग्रेषु वा श्रीमतिलाभसौख्यम् ।

धर्मं यशश्चाप्यतुलं विधत्ते कष्टं च पापेक्षणयोगतः स्यात् ॥२७॥

भा०—जो मूषहा वष और शुक से युक्त वा दृष्टि श्रवणा इनकी ३ । ६ । २ । ७ राशि में स्थित हो तो शिवों से सुख, व भक्ति (पंडित) का प्रदान व धनता लाभ, सुख धर्म और अतुल यश प्राप्त होवे है और पाप श्यों से दूरने वा योग से मूषहा अविद्वष्ट को दूर है, लगान उम मनुष्य को बहुत बह पाप होता है ॥ २७ ॥

युक्तेक्षिता वा गुरुणा गुरोर्भे यदीन्विहा पुत्रकलत्रसौख्यम् ।

ददाति हेमाश्वरत्नभोगं शुभेत्थशालादिह राज्यलाभः ॥२८॥

भा०—यदि मूषहा बृहस्पति से युक्त व बृहस्पति की १ । १२ राशि में स्थित हो तो पत्र श्यों का सुख देवे है, और सुवर्ण, वस्त्र, भोग, इनको भी देवे है। शुभग्रह के साथ शत्रुशान योग हो तो राज्य का लाभ करे है ॥ २८ ॥

शनेर्गृहे तेन युतेक्षिता वा यदीन्विहा वातरुजं विधत्ते ।

मानक्षयं वह्निभयं धनस्य हानिं च जीवेक्षणतः शुभाप्तिः ॥२९॥

भा०—यदि मूषहा शनि की राशि (मकर कुम्भ) में श्रवणा शनेश्चर से युक्त श्रवणा शनेश्चर की दृष्टि से यात हो, तो वात रोग करे है और मानका क्षय, अग्नि भय धनकी हानि करे है। तथा यदि पूर्वोक्त मूषहा पर बृहस्पति की दृष्टि हो तो वह मनुष्य शुभ फल पाता है ॥ २९ ॥

राहु मुख मूष्या का फल ॥

तमोमुखे चेन्मुखहा धनाप्तिं यशः सुखं धर्मसमुन्नतिं च ।

सितेज्ययोगेक्षणतः पदाप्तिं सुवर्णरत्नाम्बरलब्धयश्च ॥ ३० ॥

भा०—जिगके वर्ष प्रवेश समय में जो मुखहा राहुके मुखमें विराज मान हो तो धनकी प्राप्ति हो, और यश सुख व धर्मकी उन्नति हो तथा पूर्वोक्त मूषहा शुक बृहस्पति के योग से व दृष्टि से युक्त होने पर पद (अधि-

शर्प के शक्ति में अशुभ फल देने ई प्रमा कहा है और जो जन्मकाल व वर्ष काल में मृत्यु भन होवे तो समान फल होगा है ॥ ३३ ॥

शुभ शर्मा का शुभ फल वर्णन ।

पष्टेष्टमेत्ये भुविचैन्विदेशोऽस्तगोध चकोऽशुभदृष्टयुक्तः ।

क्रूराननुयास्तगतश्च भव्यां न स्याद्भुजं यच्छ्रुति वित्तनाशम् ॥ ३४ ॥

भाषार्थ— जिसके स्वामी वर्षकाल शुभा का स्वामी हवे, श्याटने, बारहवें वर्ष में इन पानिष्ट वर्षों में बँटा हो यथा अशुभ होगया हो या चक्री हो तथा पाप ग्रहों से युक्त दृष्ट हो, यथा क्रूर ग्रहों के पर से ४ । ७ वर्ष में विगज्ज-मान हो तो शुभ फल नहीं किन्तु रोग व भन हो जानि करवा है ॥ ३४ ॥

शुभ शर्मा का और अशुभ फल वर्णन ।

यत्रष्टमेशेन युतोथ दृष्टः क्षुताख्यदृष्ट्या न शुभस्तदापि ।

योगद्वये स्यान्निधनं यदेकयोगस्तदा मृत्युसमत्वमाहुः ॥ ३५ ॥

भाषार्थ— जिसके वर्षकाल से श्याटने जगह का स्वामी शुभ ग्रह व पाप ग्रह से युक्त मृगहा का स्वामी हो या क्षुत्र दृष्टि अर्थात् चौथी, मातृर्षी, पहली दसवीं दृष्टि से देखा जाता हो तो शुभ फल का देने वाला नहीं जानना, और जिसके यह दोनों योग हो तो उस श्याटमी का मरण ही होता है और कदाचित् मर ही योग हो तो मृत्यु, समान फल होवे, ऐसा पूर्वार्थावो ने कहा है ॥ ३५ ॥

शुभ और उसके स्वामी का शुभाशुभ फल वर्णन ।

सुश्रद्धा तत्पतिर्वापि जन्मनीक्षितयुक् शुभैः ।

वर्षारम्भे शुभं दत्तोऽदे चेदन्त्येऽन्यथाशुभम् । ३६ ॥

भाषार्थ— जिसके जन्म मृगहली में शुभा व उगका स्वामी शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो वह वर्ष के पूर्व भाग में शुभ फल को देवे, और इससे अन्यथा हो अर्थात् पापग्रहों से युक्त व दृष्टि हो तो वर्ष के अन्त्य भाग में

असुप्त फल को देना है, अब यह विचारना चाहिये कि (अन्यथा) इसमें अकार का मरलेग (आसिगन) है इसी से अशुभ फल कहा जाता है परन्तु यह पाठ मन्त्रेह युक्त है इस कारण (नसत्) ऐसा पाठ होना चाहिये ॥३६॥

इति नीलकण्ठीभाषाटीकायां मुखहाफलनि-
स्वर्णं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथाऽग्निष्टविचाराध्यायस्तृतीयः प्रारभ्यते ।

लग्नेशेऽष्टमगेष्ये तनुस्थे वा कुजेक्षिते ।

हृत्तविवारस्त गयोः शस्त्रघातो विपन्मृतिः ॥ १ ॥

भाषाणः-यद्यग्निष्ट विचार नामक तीसरा अध्याय वर्णन करते हैं तबमें वरुण नामक लग्न का स्वामी आठवें स्थान में हो अथवा आठवें घर का स्वामी लग्न में मङ्गल की दृष्टि हो अथवा बुध और बृहस्पति ये दोनों चन्द्रग्रह ही स्वामी वरुण के स्वयं अन्तर्धान को प्राप्त हो तो किसी हथियार के लिये ही कनेक विपत्तियों को मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ १ ॥

अब्जलग्नेशरंभ्रणो व्ययाष्टद्विमुक्तपणो ।

मृथतामयुतो मृत्युप्रदो तद्भावुकोपतः ॥ २ ॥

भाषाणः-वर्णन का स्वामी, और आठवें घर का स्वामी, ये दोनों चन्द्रग्रह स्वामी वरुण के स्वयं अन्तर्धान में से किसी जगह में स्थित होवे और बुध और बृहस्पति ये दोनों चन्द्रग्रह ही स्वामी वरुण के स्वयं अन्तर्धान को प्राप्त हो तो किसी हथियार के लिये ही कनेक विपत्तियों को मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ २ ॥

तन्मृतामयुतं मृथतामयुतं मृत्युप्रदं तद्भावुकोपतः ।

मृथतामयुतं मृथतामयुतं मृत्युप्रदं तद्भावुकोपतः ॥ ३ ॥

भाषाणः-वर्णन का स्वामी वरुण के स्वयं अन्तर्धान में से किसी जगह में स्थित होवे और बुध और बृहस्पति ये दोनों चन्द्रग्रह ही स्वामी वरुण के स्वयं अन्तर्धान को प्राप्त हो तो किसी हथियार के लिये ही कनेक विपत्तियों को मृत्यु को प्राप्त होता है ॥ ३ ॥

अष्टम स्थान का स्वामी होकर वर्ष लग्न में मातृपै पर में विराजमान हो, त त्रिनेत्र आचार्य कहते हैं, और अन्य कई आचार्य ऐसा कहते हैं कि म कालीन लग्नका स्वामी वर्षकाल में वर्ष लग्न में आठवें स्थानका स्वामी और पंचांगों अलग होनबल होना हुआ सूर्य के मन्त्रियवश में लग्न हो ने और दोनों मतो में सूर्य का कर्म देगा जाता हो ऐसा ब्रह्म उग्र प्राणी के वि मृत्यु, वृद्ध, खान और आपदा इन्हीं को देता है, अब यहाँ पर विचार रना चाहिये कि उम श्लोक में (अस्त्वो यदा) ऐसा पाठ ग्रन्थकार ने मत में पडा है, क्योंकि सूर्य के माहचरित्व (ब्रह्मके अस्त्वोयत्वं) में और देना समभव है, तो (सूर्य इष्टः) यह पाठ अर्थ ही है तथा सूर्य से इनर परे व वास्तव में मणि को प्राप्त ब्रह्मका सम्भार का सम्भार और शक्ति का सम्भार नहीं है, अथवा (अस्त्वः) यहाँ पर (मन्त्रियः) यह पाठ होना चा स्तु पाठ में इन्ही भंग हो जावेगा, और यह अर्थ मन्त्रिय नहीं, वास्तव में अस्त्वः) इनके स्थान पर (लग्नः) ऐसा पाठ चाहिये, और यहाँ पर ह चाहिये कि तिसरे वर्ष लग्न अष्टम स्थान का स्वामी लग्न में प्राप्त इतर सूर्य में देगा जाता हो तो यह उग्र प्राणी को मृत्यु देता है, मणित्व आचार्य का प्रमाण है कि—(चेन्नमनाथो विरलो मृतीगो लग्ने गतो भारकर ष्ट मृतिः ॥) शत्रुभिधातं नहृषा च कष्टं कृष्टं शरीरे मरणेन तुल्यम् इस मणित्व के बचन को सर्वथा मन्य मानना परमावश्यक है ॥३॥

अस्तगौ मुन्थहालग्ननाथो मेन्देक्षितो यदा ।

सर्वनाशो मृतिः कष्टमाधिव्यधिभयं रुजः ॥ ४ ॥

भा०—तिसरे वर्षकाल मृषदा लग्नका स्वामी और वर्ष लग्न का स्वामी में दोनों सूर्य के मन्त्रिय वश में अस्त को प्राप्त होकर शनैश्चर से उखे जाने हों, तो उग्र प्राणी के मर्य अर्थात् द्रव्य, स्त्री, पुत्र, आदिकों का नाश, मृत्यु कष्ट व आधि, (मानमी दुःख) व्याधि (शरीर व्याधा) भय रोग आदि लग्न होते हैं ॥ ४ ॥

क्रूरमूसरिफोऽब्देशो जन्मेशः क्रूरितः शुभैः ।

कम्बूलेऽपि विपन्मृत्युरित्थमन्याधिकारतः ॥ ५ ॥

भा०—जिम्के वर्ष काल में वर्षका स्वामी पाप ग्रहके साथ ईसराफ योग को करे और जन्म लग्नका स्वामी अस्तङ्गत आदिकों से क्रूर भावको प्राप्त होवे और वर्ष स्वामी व लग्न स्वामी इनमें से किसी एक का शुभ ग्रह के साथ कम्बुन योग होवे, और शुभग्रहों के वा जन्म लग्नेश और वर्षेश इन दोनों के वा इनमें से किसी एक के साथ यदि चन्द्रमा सुवशिल योग को करता हो तो उस प्राणी को नाना प्रकार के दुःखों के अनुभव से मृत्यु होती है अर्थात् वह प्राणी अनेक क्लेशों को भोगता हुआ पतित होता है, फिर शुभ कम्बुल के प्रभाव से बचा ही कहना है, ऐसा ही अन्य अधिकार होता है ॥ ५ ॥

क्रूरा वीर्याधिकाःसौम्या निर्वला रिपुरन्ध्रगाः ।

तदाधिन्याधिभीतिः स्यात्कलिहानिस्तथा विपत् ॥ ६ ॥

भा०—जो क्रूरग्रह अधिक बली हो और शुभग्रह निर्वल हो और छठे घाटों स्थान में स्थित हों तो याति, व्याधि, कलह, हानि तथा विपत् ये अशुभ फल होते हैं ॥ ६ ॥

नीने शुक्रौ गुरुः शत्रुभागे मौख्यलवोपि न ।

लग्नेशेऽश्रमगेष्येण तनौ वा मृतिमादिशत ॥ ७ ॥

भा०—जो वर्ष का मं शुक्र नीच राशि में स्थित हो और शत्रुस्थिति शत्रु भाग में स्थित हो तो उस प्राणी को मृत्यु नहीं होता है तथा वर्ष लग्न का स्वामी लग्नेश शत्रु भाग में हो अथवा घाटों स्थान का स्वामी वर्ष लग्न में स्थित हो तब भी मृत्यु नहीं होती ॥ ७ ॥

निर्भयो धनीवित्तशो दुष्टमेष्टाम्ननौ म्रियताः ।

तन्मर्त्यमिवाजिता नश्येद्यदि शुक्रौ जीप रक्षिता ॥ ८ ॥

भा०—जो धनी व धनवान् हो तथा शत्रु भाग में स्थित हो स्वामी व रक्षित हो तो मृत्यु नहीं होती है तथा शत्रु भाग का स्वामी शत्रु भाग में स्थित हो तब भी मृत्यु नहीं होती है अथवा शत्रु भाग में स्थित हो तब भी मृत्यु नहीं होती है ॥ ८ ॥

नीने चन्द्रेऽन्धराः सौम्या दिव्याः स्वर्गतेःपद ।

शरीरपीडाभृत्युर्वा साधिव्याधिभयं द्रुतम् ॥ ९ ॥

भा०—जो वर्ष कालमें चन्द्रमा नीच राशि में स्थित हो और युव, मुग्ध शुक के शुभ ग्रह अशुभ होगये हों तो यह प्राणी अपने भाई मृत्युओं से विपुक्त (जड़ा) होना हुआ पीडा युक्त शरीर पान्ना होकर मर जाता है अथवा वह प्राणी मानसी व्याधि ममेत रोगों से पीड़ित होकर शीघ्र ही भयको प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

अन्द्रलग्नंजन्मलग्नंराशिभ्यामष्टमं यदा ।

कष्टं महाव्याधिभयं मृत्युः पापयुतेक्षणान् ॥ १० ॥

भा०—जो वर्ष कालमें जन्म लग्न या जन्म राशि से वर्ष लग्न आठवें होवे, तो कष्ट और महाव्याधियों से भय होता है, और वर्ष लग्न पाप ग्रहों से युक्त हो अथवा उसको पापग्रह देखने हों तो मृत्यु होती है यह योग किसी प्रकार दान मान चर्म पुनादिकों से निवारण नहीं हो सकता है ॥ १० ॥

जन्मन्यष्टमगः पापो वर्षलग्ने रुगाधिदः ।

चन्द्राअन्द्रलग्नपौ नष्टवलीं चेत्स्यात्तदा मृतिः ॥ ११ ॥

भा०—जो जन्म कालमें जन्म लग्न से आठवें पापग्रह स्थित हो वही (पापग्रह) यदि वर्ष लग्न में स्थित होवे, तो रोग और व्याधि (मानसी पीडा) को देता है और चन्द्रमा तथा वर्ष लग्नका स्वामी हीनवली हो अथवा चन्द्र राशी वर्ष लग्न स्वामी ये दोनों पंचवर्ग बल से नष्ट वली हों तो उस प्राणी की मृत्यु होती है ॥ ११ ॥

जन्माअन्द्रलग्नपौ पापयुक्तौ पतितभस्थितौ ।

रोगाधिदो मृत्युकरावस्तगौ नेक्षितौ शुभैः ॥ १२ ॥

भा०—जिसके वर्ष काल में जन्म लग्न का स्वामी व वर्ष लग्न का स्वामी ये दोनों पापग्रहों से युक्त होकर वर्ष लग्न से चर्चें, दृष्टे आठवें, बारहवें, इन स्थानों में किसी स्थान में स्थित होवे, तो उस प्राणी के अर्थ रोग और मानसी व्याधि को देते हैं, यदि वे दोनों मृत्यु के सन्निध्यवश से अस्त होकर शुभग्रहों से न देखे जायें अर्थात् अस्त को प्राप्त हों और उन

चन्द्रोऽर्धमण्डलगतो रिपुरिफ्फाष्टवन्धुगः ।

त्रिदोषतस्तस्य रजो विविधेज्यं दशा शुभम् ॥ ३५ ॥

भाषार्थः—जो रासि चान्न में चन्द्रमा अन्तर्भाव की मास होकर वर्ष लग्न में पड़े, चारहवें आठवें वर्षों इन वर्षों में से किसी घर में विराजमान हो तो वात पिच कफ से उपपन्न अनेक रोग उस आठमी को होते हैं तथा यदि उन चन्द्रमा को शुभानि देखना हो तो उस आठमी के अष्ट कण्ठा फल होता है अथ यहाँ पर इस श्लोक में (रिपुरिफ्फाष्टवन्धुगः) के जगह में (रिपुरिफ्फाष्टभ-
दिग्गः ।) ऐसा पाठ है क्योंकि मणिग्य नामक आचार्य ने कहा है कि चन्द्रमा वर्ष से मण्डल में विराजमान हो अथवा पड़े, चारहवें और आठवें इन भागों में स्थित हो तो उस आठमी को त्रिदोषत (वात पिच कफ से उपपन्न) रोग होते हैं और चन्द्रमा की दशा में बड़ा फल होता है । उक्तच मणिग्येन—“रात्रीश्च भारकर्मदन्त्ये पापे न्यये वा भूतिभावसंस्थे । त्रिदोषतोमौ भद्रभिः प्रजाभिः कर्माणि कष्ट विविध दशागाम् ॥ इममे इम श्लोक में (रिपुरिफ्फाष्टवन्धुगः) ऐसा पाठ नहीं चाहिये ॥ १५ ॥

हृदाहायनलग्नेशो संसाप्तान्त्ये खलान्वितो ।

स्वदशायां निधनदो शुभदृष्ट्या शुभं वदेत् ॥ १६ ॥

भाषार्थः—जिसके वर्ष लग्न में हृदा या स्वामी और वर्ष लग्न का स्वामी ये दोनों भातवें, आठवें, चारहवें इन वर्षों में से किसी घर में पापग्रहों में गुरुत वा विराजमान होते तो वे स्वामी अपनी दशा में अथवा अन्तर्दशामें उस आठमी को मास दानते हैं और जब उन स्वामियों को अच्छे ग्रह मित्र दृष्टि से देखते हैं तो मरण नहीं होता है, किन्तु उनकी दशा व अन्तर्दशा में सुखी होके कल्याण को प्राप्त होता है ॥ १६ ॥

अन्दलग्नाहज्वनृजू व्ययार्थस्थो रुजा तदा ।

एवं वर्षान्दलग्नेशजन्मेशोरपि बन्धनम् ॥ १७ ॥

भाषार्थः—जिसके वर्ष प्रवेण में मार्गी गृह और बकी गृह ये दोनों वर्ष लग्न से चारहवें, दूसरे घर में हों अर्थात् चारहवें मार्गी पापगृह हो, और दूसरे

रतन पतंगपानन्य चन्द्रमा का भय ही फल कहा है, यथा मग्नाभान्य-
 । दिमर्त्तनः) धन्यन्त्र, (निपनतनुमदारिप्रान्यगः शीतगश्मिः) ऐसे
 जल जन्मों में जानों, ऐसा चन्द्रमा मंगल से देखा जाता हो तो उस
 के लिये शनि का भय देना है, अथवा शिरी हृदियार से भय को करता
 है, गह, वंश, इनसे देखा हुआ चन्द्रमा शुक से भय को देने वाला
 जाना है, और केवल शुक ही से देखा हुआ चन्द्रमा शन दोषों से उत्पन्न
 का और दरिद्रता को करता है । अथ कहें हुए चन्द्रमा का अथवा
 है, जिसके पूर्वक चन्द्रमा को शुक, बृहस्पति शुक्र से नीनों गृह मित्र
 में देखते हों तो उस प्राणी को शुभ होता है, अथवा केवल बृहस्पति ही
 का हो तो भी शुभ कहना चाहिये ॥ १५ ॥

मंगा कृति परिष्ट का वर्णन ।

ः शान्तिनेचित्तयुतो शनिनेन्थिहाधिन्याधिप्रदा जनुपि रिष्कसु-
 मारिरन्ध्रे । चूने च वर्षतनुनेधनगा मृतिं सा दत्ते खलेचित्तयुत-
 यपि चिन्त्यमायोः ॥२०॥

भा०—जिसके वर्षकाल में पापगृह से युक्त मृन्धा को शन श्वर देखता हो,
 अथवा युवन हो तो उस प्राणी को मानसी व्याधि को देती है, तथा वह मुन्धा
 जन्म ममय में वारहवें, चौथे, छठे, आठवें और सातवें इन स्थानों में से
 कमी स्थान में स्थित मुन्धा यदि वर्ष लग्न से शान्ति स्थान में विराजमान हो
 और विश्रंभ करके उसको पापगृह देखते हों तो उस प्राणी की मृत्यु को वह
 मुन्धा देवे है, यह भी श्रेष्ठपण्डितों करके चिन्तन करना चाहिये ॥ २० ॥

इति नीलरुग्णोभाषादीकार्या वर्षफलतंत्रेऽरिष्टाध्यायस्तृतीयः ॥ ३ ॥

अथाग्निष्टभंगोनाम चतुर्थाध्यायो व्याख्यायते ।

लग्नाधिपो बलयुतः शुभेचित्तयुतोपि वा ।

केन्द्रत्रिकोणगोऽरिष्टं नाशयेत्सुखवित्तदः ॥ १ ॥

यत्र अरिष्टभंगनाम चौथे अध्याय की व्याख्या करते हैं ।

भा०—जिनके वर्ष काल में लग्न का स्वामी पंचवर्गी के बल से बलिष्ठ (उन्नत चर्मा) हो और उमकों शुभ गृह देखने हो अथवा शुभगृह युक्त हो और केन्द्र १ । ४ । ७ । १० स्थान में वा त्रिकोण ६ । ५ स्थान में स्थित हो तो मरुतुर्न अग्निना का नाश करता हुआ सुख और धन को देता है ॥ १ ॥

गुरुः केन्द्रे त्रिकोणे वा पापादृष्टः शुभेक्षितः ।

लग्नचन्द्रेन्यहाऽरिष्टं विनाशयार्थं सुखं दिशेत् ॥ २ ॥

भा०—जिनके वर्ष काल में गुरुपति केन्द्र वा त्रिकोण स्थान में स्थित हो और उमकों पापगृह नहीं देखे किन्तु शुभगृह देखने हो तो वह उस प्राणी के विरुद्ध, चन्द्रमा और गुरु इन सवों में उत्पन्न अग्नि को नाश करके धन में सुख व सुख को देता है ॥ २ ॥

गगं ग्राभिगतं महिदृष्टिं मौम्ययशोऽर्थदम् ।

लग्ने तर्वायेऽथगुरुर्जन्मेष्टमौम्यार्थदः सुखे ॥ ३ ॥

भा०—जिनके वर्ष काल में लग्न में चतुर्थ स्थान अपने स्वामी से युक्त गुरु गगं ग्राभिगतं महिदृष्टिं मौम्ययशोऽर्थदम् और तर्वायेऽथगुरुर्जन्मेष्टमौम्यार्थदः सुखे का अर्थ है कि वह वर्ष उत्पन्न लग्न में हो अथवा तीसरे बल गगं ग्राभिगतं महिदृष्टिं मौम्ययशोऽर्थदम् का स्वामी स्थितमान होवे, तो गुरु तर्वायेऽथगुरुर्जन्मेष्टमौम्यार्थदः सुखे का अर्थ है ॥ ३ ॥

तर्वायेऽथगुरुर्जन्मेष्टमौम्यार्थदः शुभभिबदृष्टः ।

विश्वं विवेकपूर्वमायुर्वर्तिं दिशन्नापाके नृपतिप्रसादम् ॥ ४ ॥

भा०—जिनके वर्ष काल में लग्न में चतुर्थ स्थान अपने स्वामी से युक्त गुरु विश्वं विवेकपूर्वमायुर्वर्तिं दिशन्नापाके नृपतिप्रसादम् और तर्वायेऽथगुरुर्जन्मेष्टमौम्यार्थदः शुभभिबदृष्टः का अर्थ है कि वह वर्ष उत्पन्न लग्न में हो अथवा तीसरे बल विश्वं विवेकपूर्वमायुर्वर्तिं दिशन्नापाके नृपतिप्रसादम् का स्वामी स्थितमान होवे, तो गुरु विश्वं विवेकपूर्वमायुर्वर्तिं दिशन्नापाके नृपतिप्रसादम् का अर्थ है ॥ ४ ॥

यत्र विवेकपूर्वमायुर्वर्तिं दिशन्नापाके नृपतिप्रसादम् ।

राज्यं गजाश्वाम्बररत्नपूर्णं रिष्टस्य नाशोप्यतुल्यशश्च ॥ ५ ॥

भा०-जिसके वर्ष लग्न से नवम स्थान का स्वामी और धन स्थान का स्वामी वे दोनों पंचवर्षों के बल से बलिष्ठ और पापगृहों से नहीं दूरे हुए रूप में होते होंगे तो उस प्राणी के अरिष्ट का नाश होता है, और वह प्राणी हाथी, घोड़े व मत्तों से परिपूर्ण राज्य को प्राप्त होकर लोक में अतुल्य यश को पाता है, क्योंकि जब पंचवर्षों के उचम बल से संयुक्त और पापगृहों से नहीं दूरे होते हैं तब ऐसे धर्म व धन के स्वामी लोक में प्राप्त होंगे तब वह प्राणी उक्त फल को प्राप्त होता है ॥ ५ ॥

त्रिषष्टलाभोपगतैरसौम्यैः केन्द्रत्रिकोणोपगतैश्च सौम्यैः ।

रक्ताम्बर स्वर्णयशस्सुखाप्तिर्नाशोप्यरिष्टस्य तनोश्च पुष्टिः ॥ ६ ॥

भा०-जिसके वर्ष काल में वर्ष लग्न से तीसरे, छठे, ग्यारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में पाप गृह स्थित हों, और केन्द्र १।४।७।१० और त्रिकोण ६।५। इन स्थानों में से किसी स्थान में शुभ गृह विद्यमान होंगे, तो वह प्राणी रत्न, कपड़े, सोना, यश और कीर्ति इनको प्राप्त होकर परमानन्द से मग्न रहता है, और उसके अरिष्टों का नाश होता है, और उसके शरीर की पूर्वाष्ट होती है ॥ ६ ॥

यदासर्वीयोंमुग्रहाधिनाथो लग्नाधिपो जन्मविलग्नपो वा ।

केन्द्रत्रिकोणयधनस्थितास्ते सुखार्थहेमाम्बरलाभदाः स्युः ॥ ७ ॥

भा०-जिसके वर्ष काल में गृह्णा स्वामी वा वर्ष और जन्म लग्न स्वामी वे तीनों पंचवर्षों के बल से युक्त होकर केन्द्र १।४।७।१० और त्रिकोण ६।५ ग्यारहवें, और दूसरे इन स्थानों में से अन्य किसी स्थान में विद्यमान हों तो उस प्राणी के अर्थ, सुख, धन, सुवर्ण और पत्न इन सबों को दते हैं ॥ ७ ॥

तुङ्गं शनिर्वा भृगुजो गुरुर्वा शुभेत्यशालाघवनाद्वनाप्तिम् ।

वली कुजो वित्तगतो यशोऽर्थतेजांस्यकस्माच्च सुखानि दद्यात्

भा०-जिसके वर्ष प्रवेश समय में शनि, शुक्र, गुरु ये तीनों अप-

ने उच्च स्थानों में स्थित हों और शुभग्रहों के साथ इत्थशाल को करै तो धन (मुसलमान) लोगों से धन की प्राप्ति होती है, अर्थात् शनि, शुक्र, मंग, इनमें से कोई एक ग्रह शुभग्रहों से इत्थशाल को करता हुआ अपने उच्च घर में स्थित हो तो वह प्राणी म्लेच्छ (मुसलमान) के सकाश से धन को पाता है प्राणी जो उक्त तीनों ग्रह शुभग्रहों के साथ इत्थशाल (मिलाप) को करते हुए अपने अपने उच्च स्थानों में वाम करै, तो बहुत धन की प्राप्ति होती है तथा वनवान मङ्गल दमरे स्थान में स्थित हो तो उस प्राणी के अर्थ, यश तेज और परम्भान् सुख को देता है । ८ ।

मृग्येव्यशुक्रा मिथ इत्थशालं कुर्युस्तदा राज्ययशस्सुखार्थाः ।
 मृग्यैः कुजो वोपचये ददाति भद्रं यशोमंगलमिन्थिहायाः ॥६॥

भा० --जिसके वर्ष काल में मृग्य, युक्र शक्र ये तीनों ग्रह परस्पर इत्थ-
 शाल योग को करै तो उस प्राणी के अर्थ, राज्य, यश, सुख और धन इन
 बातों दंते हैं तथा जिस प्राणी के वर्ष ममय जिस किसी स्थान में मृग्या स्थित
 हो म ममय से ३ । ६ । १० । ११ इन स्थानों में से किसी स्थान में
 मृग्य स्थित होवे, अथवा मंगल ही स्थित हो तो उस प्राणी के अर्थ
 वनवान, यश, मङ्गल, विवाहादि ह्युप इन्हीं को देता है ॥ ६ ॥

मृकात्रचन्द्रा हृदये म्ये पापाम्प्रथायगता यदि ।
 मरुवाटवलमो हेम मुग्धां कीर्तिं नरोऽश्नुते ॥ १० ॥

भा० --जो मृग्य, युक्र, मंग, ये तीनों अपने दला में हों और मृग्य, मङ्गल
 कीर्ति, यश, मङ्गल, ये तीनों मङ्गल के अर्थों में स्थित हों तो वह मनुष्य अपने
 मङ्गल कीर्ति यशोमंगल से मृग्य, मङ्गल, और कीर्ति इनको पानेका होता
 है मृग्य मङ्गल से मङ्गल यशोमंगल से मृग्य मङ्गल कीर्ति पानेका है परन्तु दला
 में मृग्य मङ्गल कीर्ति मङ्गल यशोमंगल से मृग्य मङ्गल कीर्ति पानेका है नहीं
 पानेका है मङ्गल यशोमंगल से मृग्य मङ्गल कीर्ति पानेका है ॥ १० ॥

अथ मृग्य के अर्थ वनवान ।

वृकाशो मृग्यो मुग्धिकमभावगः ।
 मृग्यो मृग्यो मृग्यो मृग्यो मृग्यो मृग्यः ॥ ११ ॥

भाषार्थ—जिसके वर्ष में शुभ, शुक्र ये दोनों मंगरीक योग करें और गुरु वर्ष लग्न से तीसरे घर में हो यह मनुष्य राज्य, पशु, सुपत्नी, मोती और मूँगा इन सबों को प्राप्ति होता है ॥ ११ ॥

भौमो मित्रगृहेऽन्देशः कम्बुली स्वग्रहादिर्गैः ।
गजाश्वहेमाम्बरभूलाभं दत्तं सुखाधिकम् ॥ १२ ॥

भाषार्थः— जिसके वर्ष काल में मङ्गल वर्ष का स्वामी होकर अपने मित्र घर में बँठा हो, और अपने घर में उगादि घरों में विराजमान ग्रहों के साथ इत्यज्ञान करना हो और अपने घर में अपने उगादि में स्थित चन्द्रमा के मङ्गल इत्यज्ञान योग करे तभी कम्बुली कहा जाता है, ऐसा मङ्गल उस मनुष्य के अर्थ हाथी, घोड़ा, मोना, कपड़े पृथ्वी लाभ इनका और अधिक सुखका देता है ॥ १२ ॥

राजयोग मन्मथी शुभाशुभ फल ।
इत्थं जन्मनि वर्षे च योगकर्तुर्वलावलम् ।
विमृश्य कथयेद्राजयोगं तद्ब्रह्ममेवच ॥ १३ ॥

भाषार्थः—जन्मकाल और वर्ष काल में राजयोग करने वाले ग्रह के बला-बल का विचार करके राजयोग वा राजयोग भङ्ग को करे ॥ १३ ॥

राजयोग मङ्ग वर्णन ।
अन्धेन्दिहेशादिखगाः खलेश्चेद्य तोक्षिता अस्तगनीचगा वा ।
सौम्या वलाना नृपयोगभंगं तदा वदेद्वित्तसुखक्षयञ्च ॥ १४ ॥

भाषार्थः—जिसके वर्ष काल में वर्ष स्वामी मृथहा स्वामी आदि शब्द से वर्ष लग्न स्वामी, ये ग्रह पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो और शुभग्रह हीन बली हो तो राजयोग का भङ्ग कहना, तथा पूर्वोक्त वर्षशादि ग्रह सूर्य के सान्निध्य चक्ष से अस्तगत हो, अथवा नीच राशि में बैठा हो और शुभ ग्रह पंचवर्गी बल से हीन बली हो तो भी राजयोग का फल नहीं होवे है इन दोनों योगों में धन और सुख का नाश होता है ॥ १४ ॥

इति नीलकण्ठीभाषाटीकायां वर्षफलतन्त्रे अष्टमोऽध्यायश्चतुर्थः ४ ॥

और आदि शब्द में विद्याया व विन सादि के मर्यादा प्रदण विरि जाने है, इन अधिकारियों में से जिस किसी अधिकार को प्राप्त होकर मृत्यु नष्ट चल अर्थात् बीच विद्या में उन्नत बन जाता है तो यह उस प्राणी की स्वचा (पाल) और सेवा को नष्ट करना है, अर्थात् ऐसा मृत्यु होवे तो वह प्राणी सोयी होकर सोयी में नष्ट हो जाता है, और उन्माद में रहित जन्म जीवना द्वारा माया विद्या में उन्नतित होता है तथा जिस प्राणी के पूर्वोक्त अधिकारियों में से किसी अधिकार विषय वस्तुता नष्टन हो तो उस प्राणी के नेत्र और शक्ति कायों का नाश होता है, और वह दृष्टि होकर जरा जाता है वहां क्रमादर को प्राप्त हुआ स्थियों ने कलद करना है और मानसी अपारि व रोगों में भयमान होता है ॥ ६३ ॥

मग्न का फल ।

भोमे चलत्वं भीमत्वं बुधे मोहपराभवो ।

जीवे धर्मज्ञयः कष्टफला जीवितवृत्तयः ॥ ४ ॥

भा०—जो मग्न वदेन मग्न में एक अधिकारियों में से जिस किसी अधिकार को प्राप्त होकर मग्न नष्टनी हो तो उस प्राणी का मन चलायमान रहता है, और वह और आदिकों ने भयभीत होता है और उक्त अधिकारियों में बुध नष्टनी हो तो उस प्राणी को मोह पराभव फल होता है, तथा जिसके उक्त अधिकारियों में बुधनादि नष्टनी हो तो धर्म का धय होता है और बड़े कष्ट से कन्द मूल फलादिकों को काटे जीवित करने वाला वह प्राणी होता है, अथवा कष्ट स्व फल में ही जीवित करने द्वारा जानना ॥ ४ ॥

शुक और शनि का फल ।

शुके विलाससौख्यानां नाशः स्त्रीभिः समं कलिः ।

सौरे भृत्यजनादुःखं रुजो वातप्रकोपतः ॥ ५ ॥

भा०—जिसके वर्षापाल में उक्त अधिकारियों में से जिस किसी अधिकार को प्राप्त होकर शुक बलहीन हो तो उस प्राणी के विलास क्रीड़ा आदि और सौख्य का नाश होता है और स्त्रियों के साथ कलह करने

वाना वह होता है, एवं उक्त अधिकारियों में से किसी अधिकार में प्राप्त होकर गति नष्ट वर्ती हो तो सेवक से क्लेश प्राप्त होता है, तथा वातरोग से पीड़ा की प्राप्ति होता है ॥ ५ ॥

लग्न का फल ।

लग्नं पापयुतं सौम्यैरदृष्टं सहितं नृणाम् ।

विवादं वचनां दुष्टमशनं चापि विन्दति ॥ ६ ॥

भाषार्थः—जिह्वक वर्षप्रवेश समय में वर्षलग्न पापग्रहों से युक्त हो और शुभग्रहों में न देखा जाय न युक्त हो तो वह आदमी मनुष्यों का विवाद (झगडा) और नोकरियों में टग जाना व दुष्ट भोजन इन अशुभ कर्मों की प्राप्ति होता है ॥ ६ ॥

वर्षलग्न अधिकारियों के होने हुए फल का वर्णन ।

अन्वात्ताङ्गपन्ध्रपाद्दमुथहानाथा बलाढ्यास्तदा रम्यं वर्ष-
मृशन्ति सर्वमनुत्तं मौर्यं यशोर्थागमः । पष्ठाष्टान्त्यगता न-
चंरति पन्ध्रं दुःस्वर्भानिप्रदा निर्वाय्या यदि वर्षमेतदशुभं वाच्यं
समेवा सिना ॥ ७ ॥

धन नाश योग का वर्णन ।

सूतो धनप्रदः स्येते धनाधीशश्च तौ यदि ।

वर्षे नष्टौ वित्तनाशान्यनिक्षेपापवाददौ ॥ = ॥

भा० - जिनके जन्मकाल में धनका देने वाला ग्रह और धन स्थान का जो वे दोनों यदि वर्ष में नष्टवर्ण होवें तो उस पुरुष का धन नाश हो और अन्य मनुष्य के वहाँ परे हुए धनका अपवाद अर्थात् जिनके वहाँ धन ने जो दिया है वह यश्वत जाय कि हमारे धन नहीं परा है और यदि कि दोनों ग्रह वनिष्ठ होवें तो धन नाश करने वाले होते हैं ॥ ८ ॥

एवं समस्तभावानां सूतो नाथाश्च पोषकाः ।

शब्दे नष्टवलास्तेषां नाशायोद्या विचक्षणैः ॥ ९ ॥

भा० - इमी प्रकार जिनके जन्म कालमें सम्पूर्ण भावों के मध्य जिन जिन भावों में फलके देने वाले ग्रह स्थित होवें, और उन भावों के स्वामी फल देने को मर्गा होवें, यदि वेही वर्ष कालमें चलवान होय तो उम मनुष्य के जो अथवा भाव सम्बन्धी फलको देने हैं, और जब उक्तग्रह वर्ष में नष्ट चलवाले हों तो उन भावों को नष्ट करने हैं अथवा उन भावों का नैसा फल है उसको ही दे सकने हैं वह परिदृष्टी करके जानना चाहिये ॥ ९ ॥

इति प्रथम भाव विचारः ॥ १ ॥

धन भाव का विचार ॥

वित्ताधिपो जन्मनि वित्तगोच्चे जीवो यदा लग्नपतीत्यशाली
तदा धनाप्तिः सकलेपि वर्षे क्रूरेसराफे धनधान्यहानिः ॥१०॥

भा० - जिनके जन्म कालमें वृहस्पति धन भावका स्वामी होकर वर्ष में दूसरे स्थान में स्थित हो और लग्न स्वामी के साथ इत्यशाल योग को करता हो तो उम प्राणी के जो धनकी प्राप्ति सम्पूर्ण वर्ष भर होवें है, और जो वृहस्पति लग्न स्वामी को छोड़ अन्य किसी पापग्रह के साथ ईसराफ योग को करे वा सम्पूर्ण वर्ष पर्यन्त धन धान्य की हानि को करे है ॥ १० ॥

दूसरे धन लाभ योग ।

जन्मन्यथावलोक्योऽन्देऽन्देशो बलवान् यदा ।

तदा धनासिर्बहुला विनायासेन जायते ॥ ११ ॥

भा०—जिनके जन्म कालमें ग्रहस्पति दूसरे स्थान को देखता हो और द्वि वर्ष में तर्का स्वामी होकर बनवान होवें तो उम वर्ष में उम प्राणी को उमा परिश्रम धन लाभ होता है ॥ ११ ॥

पूर्व को द्वाप वर्ष का सम्पूर्ण भागों में अति वैश ।

एवं यद्भावपी जन्मन्यन्दे तद्भावगो गुरुः ।

लग्नेशेनेन्यशानी नेनद्भावजसुखं भवेत् ॥ १२ ॥

भा०—जिनके जन्म कालमें ग्रहस्पति जिन भावका स्वामी हो यदि वर्ष उम वर्ष की भाँति मिले तो, और वर्ष लग्न स्वामी के इत्यशाल योग को उम वर्ष उम प्राणी को तर्का भारता फल मिलता है अर्थात् उम भाव से उत्पन्न लाभों का होना है ॥ १२ ॥

पयोग योग का और वर्णन ।

तथा जनुषि सं पश्येद्भावमन्देऽन्दपी गुरुः ।

तदा तद्भावः सं सौम्यसुखं ताजकवेदिभिः ॥ १३ ॥

भा०—जिनके जन्म कालमें ग्रहस्पति जिन भावको देख रहा हो और तदा तदा उम वर्ष उम प्राणी को उम भाव सुखकी सुखको प्राप्त होता है उम वर्ष उम प्राणी को उम भाव से उत्पन्न है ॥ १३ ॥

ये दो योग हैं योग और दण्ड योग ।

यन्मन्त्रद्विभुः पत्रान्दे स्वल्पनामदः ।

यन्मन्त्रद्विभुः सुतो सुतो शो वाग्दण्डःपनेच्छ्वयम् ॥ १४ ॥

तो रातदण्ड भय होता है, अर्थात् वह किमी मुक्तदमे में फैसकर सुरमाने के योग्य होता है ॥ १४ ॥

अन्य धन लाभ योग का वर्णन ।

गुरुपित्तं शुभेदृष्टो युतो वा राज्यसौख्यदः ।

जन्मन्यच्चे च मुधदा राशिं पश्यन्विशेषतः ॥ १५ ॥

भाषायाः-जिनके वर्षपाल में गुरु धन भाव में विराजमान हो और उमर को शुभ गृह देखते हों वा शुभगृहों से युक्त हो तो उमर आदमी के अर्थ राज और सुख को देने हैं तथा जन्म समय जन्मलग्न में गुरु हो और वर्ष समय वर्षलग्न में स्थित होकर जिन राशि में मुंथा हो उमर राशि को देखता हो तो विशेष करके राज्य वा सुख को देने वाला होता है अथवा जन्म समय गुरु शुभगृहों से दृष्ट वा युक्त होकर धन स्थान में बैठा हो और वर्षपाल में भी उक्त स्वरूप से मुधदा को देखता हुआ धन भाव में जा पड़ा हो तो विशेष करके राज्य व सौख्य को देता है ॥ १५ ॥

शुक्र योग से धन योग और उमर के नाश का वर्णन ।

एवं सितेऽब्द भूरि द्रव्यं धान्यं च जायते ।

वित्तलग्नेशसंयोगो वित्तसौख्यविनाशदः ॥ १६ ॥

भाषायाः-उर्वीचत प्रकार से शुक्र वर्ष का स्वामी होता हुआ धनस्थान में विराजमान हो और उमरको शुभ गृह देखते हों वा शुभ युक्त हो तो बहुत धन व धान्य होता है तैसे ही जन्मलग्न वर्षलग्न और मुंथा जिन राशि में स्थित हों और शुक्र देखता हो अथवा इन्हीं में से किसी में विराजमान हो तो विशेष करके बहुत धन व धान्य को देता है, अथ धन क्षय योग को दिखाते हैं, जो धन भवन में धन भाव का स्वामी और लग्न स्वामी इनका योग होने तो वह धन व सौख्य के विनाश को देता है ॥ १६ ॥

अन्य धन प्राप्ति योग ।

एवं बुधे भवीर्यं स्यात्त्रिपिज्ञानोद्यमैर्धनम् ।

जन्मलग्नगतास्सौम्या वर्षेऽर्थे धनलाभदाः ॥ १७ ॥

भा०—पैसे ही (पूर्वोक्त प्रकार) धुध बलिष्ट होकर वर्षका स्वामी
 हुआ धन भाव में स्थित हो और उसको शुभग्रह देखते हों अथवा शुभ ग्रहों
 में युक्त हो तैसे ही जन्म लग्न वर्ष लग्न और मुखहा जिस राशि में स्थित हों
 इन्हीं को अथवा इनमें से किसी को धुध देखता हो अथवा यही धुध से युक्त
 हों, तो निम्नने व ज्ञानस्त्री (व्याख्यानादि) उद्यम से धन प्राप्त होता है,
 तथा जिनके जन्म लग्न में शुभग्रह स्थित हों और वेही यदि वर्ष समय धन
 भाव में स्थित हों तो धन लाभ के करने वाले होते हैं ॥ १७ ॥

बहुत धन लाभ योग ।

मालसञ्जनि वित्ते वा बुधेज्यसितसंयुते ।

तेर्वा दृष्टे धनं भूरि स्वकुले राज्यमाप्नुयात् ॥ १८ ॥

भा०—जिनके वर्ष पंचम समय में मालसम (धन सङ्गम) और धन
 भाव में जिनकी बुध, बुधराशि, और शुक में राशुक्त हों वा इन करके देखे जाते
 हों तो उनको बहुत धन व धन कूलमें राज्य इनको प्राप्त होता है अथवा
 धन के मान धनको करते हैं ॥ १८ ॥

अन्य धन लाभ योग वर्णन ।

अर्थाथमहमेगां चन्द्रुभेमिग्रहशेनितो ।

रत्नितो सुगतो लाभप्रदो यन्नादरेद्रशा ॥ १९ ॥

भा०—जिनके वर्ष में धन वास्तव स्वामी और धन गणम का स्वामी
 व ग्रहों में शुभग्रहों करके निम्न दृष्टिसे देखे जाते हों, और पंचवर्षी चलने उद्यम
 से धन के ही अथवा धन के अर्थ सुख रत्नित लाभ को देते हैं और जो पूर्वोक्त
 व ग्रहों में शुभग्रहों करके धन भाव के स्वामी को गन्धु दृष्ट से शुभ ग्रह
 व ग्रहों में शुभग्रहों करके देखे जाते होते हैं ॥ १९ ॥

अन्य धन योग व अर्थ का वर्णन ।

दिवदृष्टक सर्वागने श्रीमयोः सुधनो धनम् ।

स्वोर्ध्वदृष्टिं विदनागदुर्गमभीनयः ॥ २० ॥

भा०—जिनके वर्ष में धन वास्तव स्वामी और धन गणम का स्वामी
 व ग्रहों के अर्थवर्षी चलने उद्यम से धन के ही अथवा धन के अर्थ सुख रत्नित
 लाभ को देते हैं और जो पूर्वोक्त व ग्रहों में शुभग्रहों करके धन भाव के स्वामी को
 गन्धु दृष्ट से शुभ ग्रहों में शुभग्रहों करके देखे जाते होते हैं ॥ २० ॥

होता है और उन दोनों को ईश्वरकृपा योग होने तो उग्रह धनका नाश होता है और मनीषि में कर्ताव करना हुआ वह मनुष्य भयभीत होता है ॥ २० ॥

अन्य धन योग ।

जन्मनीज्योऽस्ति यद्राशौस राशिर्वर्षलग्नगः ।

शुभस्वामीचिनयुतो नैरुज्यस्वाम्यवित्तदः ॥ २१ ॥

भा०—जन्म समय वृहस्पति जिन राशि में हो यदि वह राशि वर्ष लग्न हो, और शुभग्रहों का स्थान स्वामी में दृष्ट या युक्त हो तो शान्तिपूर्वकता प्रकृता और वित्त (धनको) देता ॥ २१ ॥

अन्य धन लाभ व नाश योग ।

मृतौ लग्नै रविर्वर्षे धनस्थोधनसौख्यदः ।

शनीवित्तेकार्यनाशोलाभोऽधनव्ययः ॥ २२ ॥

भा०—जन्म समय मृत्यु लग्न में हो और वर्ष समय धन स्थान में स्थित हो तो धन व सुखको देता है और जो धन भाग में शनि हो तो कार्य को नाश करता है और थोड़ा लाभ करके धनको खर्च कर देता है ॥ २२ ॥

शनि के दृष्ट अथवाद से धन नाश योग ।

भातृसौख्यं गुरुयुते भूतयः स्युः शुभेक्षणात् ।

क्रूरयोगेक्षणात्सौख्यं विपरीतं फलं भवेत् ॥ २३ ॥

भा०—जिनके वर्ष समय धन भाग में स्थित शनिश्चर बुद्धशक्ति से युक्त हो तो उग्रहों अपने भाई बन्धुओं से सुख होता है और जो पूर्वोक्त शनि को शुभ ग्रह देखते हैं तो उग्रहों बड़े पंश्चर्य प्राप्त होते हैं कि जो पूर्वधन लाभ कारक ग्रह पाप ग्रहों से युक्त दृष्ट हो तो सम्पूर्ण फल विपरीत होता है अर्थात् धनकी हानि होती है ॥ २३ ॥

जन्म समय धन भाग के फल का अलग २ वर्णन

वित्तेशो जन्मनि गुरुर्वर्षेवर्षशतं दधत् ।

यद्भावगस्तमाश्रित्य लाभदो लग्न आत्मनः ॥ २४ ॥

वित्ते सुवर्णरूप्यादेर्भात्रादेः सहजर्चगः ।

भा०—जो वर्ष काल में वर्ष का न्यायी वर्ष या मुक्त हो और पंचवर्गीय बन से बलिष्ठ होने और पाप प्रदो में युक्त या एष्ट न हो तो उगरी भाइयों का मुख्य प्राप्त होता है तथा इसमें विपरीत पंगुश मूर्ध शुक निर्मली होकर पाप प्रदो में युक्त या एष्ट हो तो भाइयों में कलह आदि होते ।

दग्धकलिः महजपेऽन्द्रपत्नी तयोर्वा जीवे बलेन रहिते सहजे सहोत्थे । वैरं तृतीयभवनाधिपतीमराफे मान्द्यं कलिं स्वजन-सौदरतश्च विन्द्यात् ॥ २६ ॥

भा०—जिसने वर्ष काल में तीसरे भाव का न्यायी वर्ष का अधीश होता हुआ मूर्ध के मान्दि-परशु से अन्व होना वै अथवा दृष्ट स्थान में स्थित हो तो वह मायी बुद्धिओं करके कलह करता है और उन मूर्ध शक्तों में कोई एक वर्ष का स्वामी होकर अस्वंगत होना तो वह भी युद्धादिकों करके कलह करता है और जो बृहस्पति तीसरे भाव से युक्त होकर तीसरे भवन में स्थित हो तो भाइयों के साथ वैर होता है, जो वर्ष न्यायी तीसरे भाव के स्वामी के साथ ईशराफ का करता हो तो उगरे शरीर में बड़ा भारी कष्ट आकर प्राप्त होता है, उगी से वह निर्बल होकर अपने मित्रवर्गों से वा अपने बन्धुओं से लड़ाई का करने द्वारा होता है ॥ २६ ॥

यदेत्यशाल सहजेश्वरेण गुरुस्तृतीये सहजात्सुखाप्तिः ।

सारं विधौ स्यात्कलहस्तृतीये दृष्टो युतो नो गुरुणा यदा तो ३०

भा०—जो अपे लग्न स्वामी या वर्षेश इन दोनों में से किसी एक का तीसरे भाव के स्वामी के साथ इत्यशाल योग होवे तो उस प्राणी को भाइयों से सुख की प्राप्ति होती है, और बृहस्पति तीसरे भाव में स्थित हो तो भी भाइयों से मुख्य मिलना है और जो तीसरे भाव में मंगल सहित चन्द्रमा स्थित हो और यदि वे दोनों बृहस्पति से नहीं देखे जायें अथवा न युक्त हो तो भाइयों के साथ युद्धादिकों करके लड़ाई होती है ॥ ३० ॥

अन्य भ्रान्त सुखकारक योगों का वर्णन ।

सहजे सहजाधीशेधिकारिणि समागते ।

लग्नयो वा मुद्यशिले मिथः सौख्यं सहोत्थयोः ॥ ३१ ॥

भा०—जिसके वर्षकाल में तीसरे भाव का स्वामी पांचों अधिकारियों में से किसी जगिहार में नियमान होकर तीसरे भाव में स्थित हो और उसी के वर्ष स्वामी व वर्ष लग्न स्वामी इन दोनों में से किसी एक का इत्थशाल योग होवे, तो उसके भाइयों को परम्पर मुख प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥

भात्रदोष योग ।

करं गराके कलहः शनोभौमर्त्तगै रुजः ।

जर्त्तं अन्वगनुजे मान्यं वदेत्सहजगे स्फुटम् ॥ ३२ ॥

भा०—जिसके वर्ष समय में तीसरे भाव के स्वामी के साथ पापग्रह ईगरोक लग्न के साथ हो करें तो पापों के भाइयों का परम्पर कलह होता है शनि गराके के पाप (मूल बुधवच) में से किसी राशि में स्थित होकर तीसरे भाव में स्थित हो तो पाप भागों के भाई योग से पीड़ित होना है तब ही मंगल बुध के साथ पाप विद्वत् कर्मका दूरी से किसी राशि में स्थित हो तो भाइयों को कलह उत्पन्न करने का शोच्य परिणत फल को कल देवे ॥ ३२ ॥

करं भाइयो के सौख्यकारी योग का वर्णन ।

करं भाइयोऽर्त्तुजं बुधं कृजर्त्तं सदजे शुभेः ।

सुखं भाइयो मोदगातां मिथः सौख्यं भवेत्तद् ॥ ३३ ॥

भा०—जिसके वर्ष काल में तीसरे भाव के स्वामी के साथ मंगल बुध के साथ पाप विद्वत् कर्मका दूरी से किसी राशि में स्थित हो तो भाइयों को कलह उत्पन्न करने का शोच्य परिणत फल को कल देवे ॥ ३३ ॥

३३

भाषार्थः—जिसके जन्मकाल व वर्षकाल में बुध, शुक ये दोनों बलवान होकर तीसरे भाग में स्थित हों वैसे ही गुरु बलवान होकर तीसरे घर में चंटा हो तो भाई और बन्धुगणों को सुख के करने दारे होने हैं और अपने घर व अपने १५५ आदि को प्राप्त होकर बुध जन्म समय लग्न में स्थित हो और वर्ष समय तीसरे घर में स्थित हो तो भाइयों की वृद्धि होती है ॥ ३४ ॥

महज भाव में दुखकारक योगों का वर्णन ।

पापान्विते तु सहजे सहमेशभावेनाथेक्षणेन रहिते सहजस्य दुःखम् । एवं सहोत्थसहमेऽपि वदेत्तदीशौ दग्धौ यदा सहज-नाशकरो विचिन्त्यौ ॥ ३५ ॥

भा०—जिसके वर्षकाल में तीसरा भाग पापग्रहों करके युक्त होवे और उसको महज महम का स्वामी और सहज भाव का स्वामी ये दोनों नहीं देखते होय तो उस आदमी के भैया को दुख होता है, ऐसे ही भ्रातृ महम भी पाप ग्रहों करके युक्त होवे और उसको उसका स्वामी और तीसरे भाव का स्वामी ये दोनों नहीं देखें तो भी भाइयों को कष्ट होवे, और भ्रातृभाव के साथ ये दोनों सम्बन्धन होकर अपने तीन आदि स्वभाव स्थान में स्थित होंगे तो उसको भाइयों को नष्ट करने हैं ऐसा परिणतों करके चिन्तन करना चाहिये ॥३५॥

भाइयों के बुरे योगों का वर्णन ।

तृतीयपादद्वादशतौ द्यु नस्थे लग्नेश्वरे वा सहजैर्विवादः ।
तृतीयपो जन्मनि तादृग्वदे शुभेक्षितस्तत्र सहोत्थतुष्ट्ये ॥३६॥

भा०—जिसके वर्षकाल में तीसरे भाव के स्वामी से सातवें स्थान में वर्ष स्वामी स्थित हो अथवा लग्न स्वामी तीसरे घर के स्वामी से सातवें घर में विराजमान हो तो उसका भाइयों से युद्ध होता है, अब अच्छा योग कहते हैं—जिसके जन्म समय तीसरे स्थान का स्वामी उस सहजभाव में विराजमान हो और उसको अच्छे ग्रह देखने हों अथवा यदि वही (तीसरे भाव का स्वामी)

गुरुगृहों से युक्त हो एवं वर्षकाल में भी तीसरे घर का स्वामी अपने स्थान में स्थित हो और उसको अपने गृह देखते हों तो उसके भ्रातों को सन्तोष होता है. क्योंकि सब समन्वय पूर्वक रहते हैं ॥ ३६ ॥

अति मदजभावविचारः ।

वीर्ये भाव का विचार वर्णन ।

तुमं रवीन्दू पितृमानृपीडा पापान्वितौ पापानिरीक्षितौ च ।

जन्मरथगुर्यर्चगतेऽर्कपुत्रेवमानना वैरकली च पित्रा ॥ ३७ ॥

भाव - (जन्म मनुष्य के वर्षकाल में सूर्य पापगृहों से युक्त या दृष्ट होकर तो पाप से स्थित हो तो उसके पिता को पीड़ा होती है, ऐसा ही चन्द्रमा जो मनुष्य के जन्म से युक्त या दृष्ट होकर वीर्य भाव में स्थित हो तो माता को पीड़ा होती है, तथा सूर्य अथवा चंद्रमा पाप पाप या पापदृष्ट हाकर चतुर्थे भाव में स्थित हो तो माता को पीड़ा होती है अथवा जन्म मनुष्य सूर्ये जिन राशि में अथवा चन्द्रमा राशि में स्थित हो तो उसके पिता का अश्रमान होता है अथवा अथवा अथवा वीर्य भाव में या अथवा अथवा को करता है जिनमें अथवा अथवा होता है ॥ ३७ ॥

अथ जन्मरथगुर्यर्चगतेऽर्कपुत्रेवमानना वैरकली च पित्राः ।

अथ जन्मरथगुर्यर्चगतेऽर्कपुत्रेवमानना वैरकली च पित्राः ॥ ३८ ॥

योस्तु । दग्धे तुरीयगृहमे च यदीन्विहाया नाशस्तयोस्महमयो
रपि दग्धयोः स्यात् ॥ ३६ ॥

भा०—जिमके जन्म कालमें और वर्ष काल में चौथे भावका स्वामी
नष्ट हो होय तो उसके माता पिताकी दुःख करना है और जो मातृ पितृ महम
पापघटों से पीड़ित होता हुआ चौथे स्थान में स्थित हो तो उसके माता पिताका
नाश होता है, तथा जो मातृ पितृ महम ये दोनों दग्ध हो शय्या अस्तादि
घंटों से युक्त हो तो भी माता पिताका नाश होता है ॥ ३६ ॥

माता पिता के घनेश योगों का वर्णन ।

जन्मन्यम्बुगृहं यच्च तत्पतिस्तत्पदोपगौ ।

शन्यारौ क्लेशदौ पित्रोर्न चेत्योम्यनिरीक्षितौ ॥ ४० ॥

भा०—जिमके जन्म कालमें चौथे घर व चौथे स्थान का स्वामी उन दोनों
के स्थानों में शनि मंगल स्थित हो और शुभग्रहों से यदि युक्त ना रह न हो
तो उसके माता पिता को ब्रह्म देने हैं ॥ ४० ॥

शुभ अशुभ योगों का वर्णन ।

मातुः पितुश्च महमे तनुपेत्यशाले तुयंपिचेत्थमवगच्छ सुखा-
नि पित्रोः । चेदष्टमाधिपतिना कृतमित्यशालं पित्रोर्विपद्भय-
मनिष्टकृतेसराफे ॥ ४१ ॥

भा०—जिमके वर्ष कालमें माता पिता महम लग्न स्वामी के साथ इत्य-
शाल योग करना हो तो उसके माता पिता के अर्थ सुख प्राप्त होय एवं चौथा
भाव वर्ष लग्न स्वामी के साथ इत्यशाल करे तो भी माता पिता को सुख
जानो, अब अशुभ योग दिखाने हैं, माता पिता महम वर्ष लग्न से आठवें घर
के स्वामी के साथ इत्यशाल योग करे तो उसके माता पिता बड़े दुःखको प्राप्त
होते हैं, और जो माता पिता महम पापघटों से मिलाप करते हुए ईमराफ
योग करे तो माता पिताको भय प्राप्त होता है ॥ ४१ ॥

इति सुख भाव विचारः ॥

पंचम भाव का विचारः ।

पुत्रायगो वर्षपतिगुरुश्चेत्सूर्यारसौम्योशनसोथ वेत्थम् ।

मत्पुत्रमौख्याय खलादितास्ते दुःखप्रदाः पुत्रत एव चिन्त्याः ।

भा०- जिनके वर्ष कालमें यदि वर्षका स्वामी होकर बृहस्पति पांचवें व स्याग्दहों स्थान में स्थित हो तो पुत्रों को सुख होता है, अथवा सूर्य, मंगल, वृष और शुक्र इनमें से कोई एक वर्ष का स्वामी होता हुआ पांचवें व स्याग्दहों स्थान में स्थित हो तो वह पुत्रों को सुख कारक जानना चाहने वालों के लिये, मूढ, मंगल, वृष, और शुक्र ये पांचों ग्रह यदि पांचवें व स्याग्दहों स्थान में स्थित हो तो पुत्रों को दुःख देने हैं, यह पांडितों करके जिनका चरना जानिये ॥ १७ ॥

पत्र मानि गोग वर्णन ।

पत्रे मनस्य मन्त्रे मनले मुनासि मौम्येक्षितेप्यतिमुखं यदि
मत्र नसि । मौम्येक्षितः शुभग्रहो मकुजो बुधश्चेत्पुत्रायगः सुत-
म्यसि विषयः मुनार्निम् ॥ १८ ॥

भा०- जिनके वर्ष कालमें पांचवें व स्याग्दहों स्थान में स्थित हो तो पुत्रों को सुख होता है, अथवा सूर्य, मंगल, वृष और शुक्र इनमें से कोई एक वर्ष का स्वामी होता हुआ पांचवें व स्याग्दहों स्थान में स्थित हो तो पुत्रों को दुःख देने हैं, यह पांडितों करके जिनका चरना जानिये ॥ १८ ॥

पुत्र प्राप्ति और पुत्र दौष्टिय योग का वर्णन ।

यत्रेऽप्यो जनुषि गृहे विलग्नमंतत्पुत्राप्येत्ये बुधसितयोरपीत्थम्-
ताम् । यद्राशौ जनुषि शनिः कुजश्च सोऽन्दे पुत्रार्ति तनुसुतगः
करोति नूनम् ॥ २५ ॥

भा०—जन्म समय वृत्तगति जिन स्थान में स्थित हो यदि वह स्थान वर्ष
नमय लग्न में हो तो पुत्र प्राप्ति के अर्थ जानना, एवं बुध शुक के स्थान को
भी जानना, तथा अशुभ योग यह है कि जन्म समय शनि मंगल जिन राशि
में स्थित हों वह राशि वर्ष काल में लग्न में या पंचम भाग में हो अथवा
शनि मंगल एक साथ लग्न में व पांचवें स्थान में स्थित हो तो निश्चय करके
पुत्रों को पीदा करते हैं ॥ २५ ॥

पुत्र प्राप्ति योग का अन्य वर्णन ।

पुत्रे पुण्यस्य महम पुत्राप्ये शुभदृष्टियुक् ।
लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे पुत्रदौ बलिनौ यदि ॥ ४६ ॥

भावार्थ—वर्ष में पांचवें पुण्य महम शुभ ग्रहों की दृष्टि से युक्त हो तो
पुत्र की प्राप्ति जानना, तथा यदि लग्नेश और पुत्र भावेश बलवान होकर पंचम
भाग में स्थित हो तो पुत्र को देते हैं ॥ ४६ ॥

शुभाशुभ योग वर्णन ।

चन्द्रो जीवोऽथ वा शुकः स्वोच्चगः सुतदः सुते ।
वक्री भौमस्सुतस्थश्चेद्दृत्पन्नतमुतनाशनः ॥ ४७ ॥

भाषार्थः—जो वर्ष काल में चन्द्र, गुरु, अथवा शुक अपने उच्च राशि में
प्राप्त होकर पंचम भाग में स्थित हो तो पुत्र को देते हैं तथा यदि वक्री मंगल
पांचवें स्थान में स्थित हो तो उन्पन्न पुत्र को नाश करता है । ४७ ॥

पुत्र प्राप्ति व पुत्र नाश का योग वर्णन ।

पुत्राधिपो जन्मनि भार्गवोन्दे पुत्रे विलग्नधिपतीत्थशाली ।
पुत्रप्रदो मन्दपदस्थपुत्रे पापाधिकारीक्षित आत्मजार्तिः ॥४८॥

भाषार्थः—स्वामिना नामक रोग होता है यह पूर्व श्लोक में सम्बन्ध रखता है एवं मङ्गल वर्षों में स्वामी से पीड़ित व वक्रवर्ति वाला होता हुआ इसे भार में विराजमान हो तो शनि विहाय में रोग उत्पन्न होता है, ऐसी ही जिसके पूर्व वर्ष का स्वामी होकर पापग्रहों से पीड़ित होता हुआ इसे भाव में बैठा हो तो रोग विना उत्पन्न होता है, अथवा अशुभ वर्ष में उक्त स्वामी से मध्य विराजमान हो तो वर्षों में नष्ट होता है, तथा शुभ वर्ष स्वामी होकर पापग्रहों से पीड़ित हो इसे भाव में विराजमान हो और उनको इसे भाव का स्वामी देखना हो अथवा शुभ वर्ष भाव के स्वामी से युक्त हो तो श्लेषमा रोग होता है, एवं शुभमा यदि वर्षों होकर इसे भाव में विराजमान हो तो कफ सम्बन्धी रोग होता है ॥ ५१ ॥

वृष का फल वर्णन ।

एवं बुधे पापयुतेऽब्दपेरो वातोत्थरोगो जनितमनायः ।

पापोब्दपेन क्षुत्तदृष्टिदृष्टो रोगप्रदोमृत्युकरः सपापः ॥ ५२ ॥

भाषार्थः—यु मङ्गल वर्ष वर्ष का स्वामी इसे वर्ष में विराजमान हो और चक्री ग्रह व पापग्रहों से युक्त हो तो वातरोग पैदा होता है और जो जन्म कालीन लग्न या स्वामी पाप ग्रह होकर वर्तमान वर्ष के स्वामी करके क्षुत्तदृष्टि से देखा जाता हो तो यह रोग का देने वाला और जो जन्मकालीन लग्न का स्वामी पाप ग्रह होकर वर्षकाल में पापग्रहों से युक्त हो और उसका वर्ष स्वामी खराब निगाह से देखता हो तो वह मृत्यु का देने वाला होता है ॥ ५२ ॥

शनि कृत अरिष्ट योग वर्णन ।

सत्याकिंभे लग्नगते रूक्षशीतोष्णरुग्भयम् ।

शनीक्षिते याप्यता स्यात्सपापे मृत्युमादिशेत् ॥ ५३ ॥

भाषार्थः—जिसके जन्म समय शनिश्चर जिस राशि में बैठा हो वह राशि वर्ष समय लग्न में विराजमान हो तो उसके शरीर में रुखाई, जूड़ी, ज्वर आदि रोगों का भय होता है, शनिश्चर जन्म समय जिस राशि में हो वर्ष समय वह राशि उसका पद भया, यदि वर्ष समय शनि उस जगह (पद) को देखे तो वैद्यक शास्त्र में प्रसिद्ध याप्यरोग को करता है तथा जो शनि पापग्रहों से यु

में स्थित हो और मंगल वर्षलग्न में हो तो उसको आलस्य महिष मूर्च्छा होती है तथा जो चन्द्रग्रह मंगल लग्न में स्थित हो और पापग्रह मरु अष्टम भाग में हो तो उसके अंग का नाश होता है, तथा दस्य ममय पंच में पापग्रह हो या: वर्ष ममय वे ही पापग्रह लग्न में स्थित हो तो उसको रोग करने हैं और शुभ को नष्ट भाग में स्थित पापग्रह देखने ही तो कफ रोग को उत्पन्न करने हैं ॥ १६ ॥

**दिनेऽन्दप्रवेशो विलग्नेन्दमृत्योर्यदा हकहृद्वागृहाद्योऽधिकारः ।
रेवर्वा कुजस्यात्रपीडाञ्चरःस्याददृशासौम्यस्वेदोत्थयान्तेमुग्धापि :**

भा०—जो दिन में वर्ष प्रवेश हो और जन्मकाल वर्षकाल के लग्न में सूर्य या मंगल का द्रंशण या हृषा व अगृहादि अधिकार हो तो उस वर्ष में वार पीडा होती है और जो लग्न में स्थित मंगल को सूर्य को शुभग्रह देखने ही तो वर्ष के अन्त में सुख की प्राप्ति होती है ॥ १७ ॥

रोग नाश व रोगोत्थानि का वर्णन ।

निशि सूतो वद्धमाने चंद्रे भौमेत्थशालतः ।

रुमर्येदेधते मदेत्थशालाद्व्यत्ययोऽन्यथा ॥ १८ ॥

भा०—जिसका रात्रि में जन्म हो और शुक्लपक्ष का वद्धमान चन्द्रमा वर्षकाल में मंगल के साथ इत्थशाल योग को करता हो तो उसका रोग नाश की प्राप्ति होता है, तथा चन्द्रमा जो शनि के साथ इत्थशाल योग को करता हो तो रोग का बढता है, हमसे विपरीत अथवा कृष्णपक्ष में जन्म हो और चन्द्रमा वर्ष में मंगल से इत्थशाल करता हो तो रोग की वृद्धि हो शनि के साथ इत्थशाल करे तो रोग का नाश करे ॥ १८ ॥

रवावीदृशि विस्केतुयुतेव्दन्निखिलं गदः ।

अधिकारी बली सूतावद्धे केतुज्ञयुक्तया ॥ १९ ॥

भा०—तथा अन्य दो योगों को कहतेहैं कि वर्ष में केतु और बुधसे युक्त होकर, सूर्य मंगल के साथ इत्थशाल योग को करे तो वर्ष पर्यन्त रोग करता है, तथा जन्म काल में कोई किसी के अधिकार में हो अथवा

इत्यादि में होके वलित हो और यदि वर्ष कालमें वही ग्रह केतु, बुध से युक्त होवे तो वर्षा भर रोग हो देता है ॥ ५९ ॥

जल योग वर्णन ।

चतुर्यंज्जते च मुखहा क्षुतदृष्टया शनीक्षिता ।
शूलपीडा पापस्वर्गेष्टा तत्परिणामजा ॥ ६० ॥

भाव - यदि लग्न म चौथे चौम भावों स्वान में मुखहा स्थित हो और शनी, बुध, केतु इति में युक्त हो तो शूल पीडा होवे, और उक्त मुखहा को पाप-स्वर्ग देखेंगे तो जो शतनाश होकर फिर शूल रोग हो जावे ॥ ६० ॥

मकरों के शूल पीडाक योग का वर्णन ।

जन्मभर्जागमिनराशिगते महीजे सूर्याशगे पिडकशीतलिका-
दि मान्यम् । शीतोष्णमंडभवरुक् च बुधे च सेन्दौ कुष्ठं भगं-
दरुको पि ममण्डमाला ॥ ६१ ॥

भाव - जन्म भर्जागमिन राशि में स्थित मंगल बुध के अशुभ हो तो उनके शरीर में शीतोष्ण २ प्रतियोगी व शीतला आदि रुग्ण रोग होवे, शूल, मण्ड, कुष्ठ, इतने रोग उत्पन्न होते हैं, एवं जन्म समय शीतोष्ण मंडल मंगल स्थित हो तो मंडल ममण शीत राशि में स्थित वरु-
दरुको मण्ड माला मण्डल, मण्डमाला व रोग होते हैं ॥ ६१ ॥

जल योग वर्णन ।

रुग्ण रोगे शिवाभाषो पशुं पापान्निवेदिनीं ।
विद्वेषे शरीरं शीतोष्णं शून्यायनिकृष्टौ ॥ ६२ ॥

भाव - रुग्ण रोग होने से शीत व शीतोष्ण रोगों के स्वान में स्थित हो-
कर शरीर शीतोष्ण शून्यायनिकृष्ट होवे, शूल पीडा यदि
रुग्ण रोगों के स्वान में स्थित होवे तो शूल रोग होवे ॥ ६२ ॥

जल योग वर्णन ।

शुभ्रमल्लभ्यते इ. स्वल्पमभ्यासं गौडराः ।
व्युत्थे वदते मन्त्रे विद्या शक्तिर्दिव्ये ॥ ६३ ॥

भा०—जिमके वर्षपाल में मृधदा, वर्ष जल मृधदा स्वामी वर्ष जल स्वामी में चारों पादगुहों के मध्य स्थित हों तो रोग को देने वाले होते हैं और जो इनके मध्य में कोई एक ही पादगुह स्थित हो तो भी उसको रोग देता है, तथा जिमके वर्ष समय छठे स्थान का स्वामी शुभ गृह होकर छठे स्थान में स्थित हो तो स्त्री की भांति जानो वही समग्रमिह का मन है कि छठे स्थान का स्वामी जब गृह होकर छठे भाग में स्थित हो तो भामिनी को रोग को भांति होती है ॥ ६३)

रोग स्थान योगवर्णन ।

रोगकर्ता यत्र राशावंशे स्याद् नयोर्वली ।

तत्स्थानं तस्य रोगस्य वाच्यं राशिस्वरूपतः ॥ ६४ ॥

जन्मपष्ठाधिपे भौमे वर्षे पष्ठगते च रुक् ।

कुरैत्यशाले विपुलः शुभद्वययोगतस्तनुः ॥ ६५ ॥

भा०—पूर्वोक्त प्रकार में रोग कर्ता गृह जिम राशि नवांश में हो और राशि नवांशों के बीच जो राशि बनी हो वह राशि उस रोग के राशि स्वरूप (नान पिच फफ प्रयुक्त) करके उसका स्थान (घर) कहना चाहिये ६४ जन्म समय छठे भाग का स्वामी मंगल हो, तो वर्ष समय वही मंगल छठे स्थानमें स्थित हो तो वह उम मांगी को रोग करता है, तथा पूर्वोक्त मंगल छठे भाग में स्थित होकर पादगुहों के माथ इत्यशाल योग करता हो तो बड़ा भारी रोग करता है, और जो उक्त मंगल को शुभ गृह देखते हों अथवा वह मंगल ही शुभ गृहों में युक्त हो तो छोटा रोग होता है ॥ ६५ ॥

इति पष्ठभाव विचारः ॥

सप्तम भाग विचार ।

वली सितोव्दाधिपतिः स्मरस्थः स्त्रीपक्षतःसौख्यकरो विचिन्त्यः
ईज्येक्षितोऽत्यन्तसुखं कुजेनाधिकारिणा प्रीतिकरो मिथः स्यात्

भा०....जिमके वर्षपाल में चलवान शुक्र का स्वामी होकर सातवें भाग में स्थित हो तो उसकी स्त्री के घर से सुख करता है ऐसा जानना, तथा जो पूर्वोक्त शुक्र को गुरु देखें तो वह उम मांगी के घर बड़ा सुख दे।

और पचायिकारियों में से किसी अधिकार में स्थित होकर मंगल उक्त शुक्र को देखता हो तो उस प्राणी की भार्या और उसकी दोनों को परस्पर बहुत प्रीति होती है ॥ ६६ ॥

जाग्ना योग और विवाह योग वर्णन ।

बुधेजितं जारता स्याल्लब्ध्या मन्देन वृद्धया ।

गुन्दृष्ट्या नवा भार्या सन्तिस्वरितततः । ६७ ॥

भाव-जिते नरानामें शुक वर्ण का स्वामी होकर सातवें स्थान में स्थित हो और चतुस्रोक्ष देखें तो उस प्राणी का थोड़ी उमर वाली स्त्री के साथ प्रेम कर्म होता है, और जो उस शुक को शनि देखता हो तो पुत्री स्त्री के साथ प्रेम कर्म (गुण मन्वन) होता है, तथा जो उक्त शुक को बृहस्पति देखते हैं तो उसका विवाह नवीन भार्या के साथ होता है, और उससे अति शीघ्र विवाह सम्भव होता है यदि उक्त प्रयोग में (एकदृष्ट्या) ऐसा पाठ है तो दूसरे के समान ही अथवा उक्त पुरा प्रयोग में (उभयेक्षितो) ऐसा कह सकते हैं, इस कारण (उक्त वर्ण नवा भार्या) ऐसा पाठ उचित है, कारण यह कि उक्त प्रयोग में (गुण वर्ण गुणवृत्ति नखनु मातृपुत्र संशयतः) ऐसे प्रयोगों का प्रयोग है, और ऐसे ही ताजिक ग्रन्थानामें भी कहा है (एक प्रयोग उक्त वर्ण नवा भार्या) का उक्ति ॥ ६७ ॥

स्वर्ग मन्त्र और विवाह योग ।

अथ यथाशक्ति स्तम्भे दारमोक्ष्यं बलान्विते ।

अथ गुरुर्नमस्तेन्द्रे स्त्रीनाभायः मितेन्द्रे ॥ ६८ ॥

भाव-यथाशक्ति अर्थात् जो जो हाथ बलवान् में या शक्ति स्थान में मितेन्द्रे अर्थात् मितेन्द्र के अर्थ है, तथा गुरु मन्त्र अथवा शक्ति में ही प्रयोग करने से प्रयत्न है, और नखनु का स्वामी हो तो स्त्री की प्राप्ति सम्भव है ।

अथ यथाशक्ति अर्थात् हाथ बलवान् ।

अथ गुरुर्नमस्तेन्द्रे स्त्रीनाभायः मितेन्द्रे ॥ ६८ ॥

अथ गुरुर्नमस्तेन्द्रे स्त्रीनाभायः मितेन्द्रे ॥ ६८ ॥

भाषार्थः—वर्ष लग्न स्वामी, यात्रों पर का स्वामी इन दोनों का परस्पर
अन्वयान हो तो स्त्रीलाभ योग पहना, अर्थात् विवाह द्वारा स्त्री का लाभ होरे,
और जो स्त्री महम का स्वामी या यात्रों भाव का स्वामी विनष्ट (कृमि ग्रहों के
बीच या कूर्यक, या कूर्यष्ट) हो तो स्त्री को कष्ट देने वाला जानना ॥६६॥

योग्य स्त्री सुख और बहुत स्त्री सुख योग ।

नष्टेन्द्रो शुक्रपदमे मेषुनं स्वल्पमादिशन्तु ।

जन्मशुक्रर्चगो भौमः स्त्रीसुखोत्सवकृद्बली ॥ ७० ॥

भाषार्थ—जो वर्ष ममय शुक्र विराजमान राशि में अर्थात् शुक्र के साथ
जिनष्ट चन्द्रमा विराजमान हो तो योग्य मेषुन कर्के, तथा जन्म ममय शुक्र जिन
राशि पर हो उस राशि पर पत्नी महान होवे तो उसकी स्त्री को सुखों के उत्सवों
का करने वाला जानना ॥ ७० ॥

स्त्री सुख सम्बन्धी चार योग ।

जन्मास्तपेन्द्रपसितेन युगीक्षिते स्यारस्त्रीसंगमो बहुविलाससुख
प्रधानः । केन्द्रत्रिकोणगुरो शनिशुक्रभस्थे स्त्रीसौख्यमुक्तमिति
हृद्दविवाहपोश्च ॥ ७१ ॥

भा०—जिमहे वर्ष ममय जन्मलग्न से महम घर का स्वामी वर्षेण शुक्र
से युक्त हो अथवा दृष्ट होरे तो उसको बहुत विलासों और सुख समूहों से
स्त्री का समागम होता है तथा जन्म ममय शुक्र स्थित राशि में गुरु हो मो वर्ष
में केन्द्र त्रिकोण में विराजमान हो तो स्त्री सुख कहना, एवं वर्षकाल में हृद्दा
स्वामी जन्मकालीन शुक्र स्थित राशि में विराजमान होकर केन्द्र त्रिकोण में हो
तो स्त्री सुख कहना, तथा विवाह महम का स्वामी जन्मकालीन शुक्राधिष्ठित
राशि में विराजमान होकर वर्ष ममय केन्द्र त्रिकोण जगह में विराजमान हो तो
स्त्रीसुख कहना, यहां चार केन्द्रों में लग्न को छोड़कर ३ अर्थात् ४।७।१० घरों
का ग्रहण है यह समरसिंह का वचन है. ग्रन्थकर्त्ता ने फल के साम्य की उक्ति
के लाघव से लग्न को कहा है ने बोद्धव्य है, ये चारों योग करे ॥ ७१ ॥

स्त्री वजेश और विवाह योग ।

अधिकारीपदस्थेऽर्के स्त्रीभ्यो व्याकुलतानिशम् ।

श्री नाम योग जानना, तथा श्री महम हो मंगल व शुक्र देखने ही नो निद्रनय
श्री का नाम होना है ॥ ७५ ॥

विवाह के लिए दो योग ।

सूतौ वा दारमहमे तददृष्टे योपिदाप्यते ।

स्वामिदृष्टं स्त्रीसहमं शुक्रदृष्टं विवाहकृत् ॥ ७६ ॥

भा०—जिनके वर्ष कालमें श्री महम शुक्र योग महान से देखा जाता हो
तो उससे स्त्री प्राप्ति होती है, तथा श्री महम अपने अपने स्वामी और शुक्रमे
देखा जाता हो तो वह विवाह का करने वाला होता है, और जो स्त्री महमका
स्वामी अपने घरका देखा हो और उसी का शुक्र देखा हो तो स्वल्प उस
प्राणी का विवाह होता है ॥ ७६ ॥

श्री मय प्राण योग ।

सूतौ द्यूनाधिपे वर्षे सहमेशे स्त्रियाः सुखम् ।

जन्मास्तपेन्विहानायवर्षंशाःखे द्युने तथा ॥ ७७ ॥

भा०—जिनके जन्म समय मयम परका स्वामी वर्ष कालमें स्त्री सहमका
स्वामी हो तो उसका स्त्री से सुख प्राप्त होता है, तथा जन्म लग्न से मातर्वे
भावका स्वामी और वर्षमें मुखका स्वामी, वर्ष स्वामी ये तीनों दशम स्थान में
तथा मातर्वे परमे हो तो भी उसका स्त्री से सुखको प्राप्ति होती है ॥ ७७ ॥

विदेश गमन योग वर्णन ।

मुखहातौ द्यूनसंस्थः स्वगृहोगतः शशी ।

विदेशगमनं कुर्यात् क्लेशः पापेक्षणान्द्रवेत् ॥ ७८ ॥

भा०—जो वर्ष कालमें अपने घर व अपने उच्च में प्राप्त चन्द्रमा मुख-
हासे सातवें स्थान में स्थित हो तो उस प्राणी के अर्थ विदेश गमन कराता है,
यदि उक्त चन्द्रमा को पापग्रह देखने हों तो उसको कष्ट होता है ॥ ७८ ॥

इति सप्तमभाव विचारः ॥

अष्टम भाव विचारः ॥

भोमेऽब्दपे क्रूरहतेऽयसा घातो बलोज्झिते

अग्निभीरग्निभे क्रूरनराद्विपदभे मृत्तिः ॥७६॥

वियत्यवनियामात्यरि पुनस्करजं भयम् ॥

तुर्यं मानुः पितृव्याद्वा मातुलात्पितृतो गुरोः ॥८०॥

भा०— जो वर्ष कान्तमें मंगल वर्ष का स्वामी होता हुआ क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो निर्बल होकर जिस क्षिती घटमें स्थित हो तो उसके अङ्ग में लोहे से घात होता है, एवं मंगल अग्नि तथा राशिमें हो तो अग्नि से भय होता है, तथा दिशः राशि में स्थित हो तो उग्र स्वभाव जानी (चौरादिकी) से मृत्यु होयै अर्थात् चौरादि जनों कर्मके साग जानै । ७६ । तथा मंगल वर्षेश हो करीब निर्बल तथा उग्र ग्रहों से पीड़ित होकर दशम भावमें स्थित हो तो पत्नी या सा क मन्त्री, शत्रु, और चोरों से भय कहना, और जो पूर्वोक्त मंगल स्वामी स्थान में स्थित हो तो उसके माता, चाचा, मामा, पिता और गुरु स्वामी से भय होयै यथा कथना ॥ ८० ॥

मदा मृत्यु योग वर्णन ।

नमोऽपि नदात्तममात्तपो मृनिशाश्नेदित्यशालिन इमे निघन
मदा मदा । नमोऽपि नदात्तममात्तपो मृनिश्च तत्र सार्केकुजे नृपभय
दित्तमोऽपि नमो ॥ ८१ ॥

भा०— जो वर्ष मंगल स्वामी, मृदा का स्वामी और वर्ष स्वामी से दृष्ट हो निर्बल होकर दशम भावमें स्थित हो तो वे मृत्यु-योग के योग्य होते हैं, तथा यदि उग्र राशिसे पाप ग्रह की दशा में पापग्रह का स्वामी हो तो उग्र भाव ही होता है तथा दिशकी वर्ष मंगल हो और निर्बल होकर दशम भावमें स्थित होयै यथा कथना है ॥ ८१ ॥

नमो मृत्यु योग वर्णन ।

भा०—जिसके जन्म समय मृगश्रुक् के साथ मुनश्चिह्न योग करे वर्ष
समय पंचाधिकारियों में से किसी अधिकार में प्राप्त होकर पंद्र १ । ४ । ७
१० में स्थित होय, तो राजा से और रोग से भय होय तथा जन्म समय जिस
राशि में मंगल हो वर्ष में उस राशि पर पृथ अधिकारी होकर स्थित हो तो
रोग होता है, तथा वर्ष अधिकारी होकर मंगल कर दृष्टि से देखा जाता
तो तो क्षीय से विचार उत्पन्न होय, तथा पंचाधिकारी में पृथ मंगल से
देखा जाता हो और मंगल की राशि में स्थित हो अथवा मूढ में मंगल से
परान्जित हो तो राजदौट में कामकर बंधन में पड़ने मृत्यु पाता है ।

रोग रोग वर्णन ।

भौमस्थानेऽधिकारीन्दो गुप्तं नृपभयं रुजः ।

मन्दोधिकारी खे लोहहतेः पीडाकरः स्मृतः ॥ ८३ ॥

भा०—जन्म समय मंगल जिस राशि में हो उस राशि पर वर्ष समय
अधिकार युक्त चंद्रमा स्थित हो तो गुप्त राज भय और रोग होता है, तथा
तो जर्मश्चर किर्मा (पंचाधिकारी) अधिकार में प्राप्त होकर वर्ष लग्न से
दशम स्थान में स्थित हो तो लोह के पडार से पीडा करने वाला जानना ऐसा
पंचाचार्यों ने वर्णन किया है ॥ ८३ ॥

अन्य मृगश्रुक् योग

भौमेष्टमे भयं वह्नेः प्रहारो वा नृपाद्भयम् ।

आरे स्वस्थे चतुष्पद्भयं पागो दुस्य रुजोऽभृजः । ८४ ॥

भा०—जिसके वर्ष समय वर्ष लग्न में आठवें स्थान में मंगल स्थित हो
उसको आग्नि से भय, हाथियार से घाय और राजा से, भय होता है तथा
वर्ष लग्न से दशम स्थान में मङ्गल स्थित हो तो यह किर्मा रीपाये पांडा आदि
से गिर कर दुस्य को भास्य होय और लोह के विकार से रोग उत्पन्न होय ।

धन नाश और विवाह योग का वर्णन ।

वित्ताष्टमेऽथो धनहा यद्यद्देशोऽशुभेक्षितः ।

मन्दे धूने दुर्वचनापवादकलिभर्त्सनम् ॥ ८५ ॥

भा०—यदि वर्ष का दशमी बृहस्पति होकर दुसरे वा आठ

विगजमान हो और उसको पापग्रह देखने हों तो वह धन का नाश करनेवाला होता है, तथा वर्षलग्न से मानवें घर में शनि विगजमान हो तो दुर्वचन, अस्वास्ति कलह और रिक्कार इन सबों को प्राप्त होता है ॥ ८५ ॥

महा अल्प मृत्यु योग ।

पतिते ज्ञे क्रूरहरारेत्यशाले मृतिं वदेत् ।

कुजहृत्स्थिते नाशः सौम्यदृष्ट्या शुभं भवेत् ॥ ८६ ॥

भा०—जिनके वर्षकाल में बुध पतित होकर क्रूर दृष्टि से मङ्गल के साथ इगजमान योग का करे तो विद्वान् उपरका मरण का देवे, और जो उक्त ग्रह मङ्गल के दृष्टा में विगजमान हो तो द्रव्यादिकों का नाश होता है, यदि इन दोनों ग्रहों में बुध की शुभदृष्टि देवे तो शुभ कडना ॥ ८६ ॥

कलह योग ।

नमनाधिपे नष्टदग्धे योपिद्वादोशुभान्विते ।

नमन्यप्रममो ज्ञीषो नाधिकारी कलिः प्रभुः ॥ ८७ ॥

भा०—जो वर्षकाल में बुध (१५) नमनी नष्ट धन होगा दृष्टादग्ध (अस्वत्त) कलह प्रममो यो ज्ञीषो नाधिकारी और अन्ध विषों में कलह होता है, यदि बुध नष्ट हो तो प्रमम मान विष मुह हो और वर्षकाल में पंचाविका-
नमन्य प्रममो यो ज्ञीषो नाधिकारी कलिः प्रभुः ॥ ८७ ॥

द और प्रसाद योग ।

सर्वः शुभं लयादृक्तः प्रत्युत्सवशेनतु ।

विनिन्दते भवे सर्वे वादान्तोशं विनिदिशेत् ॥ ८८ ॥

दग्धो जन्मांगपो वर्षेऽष्टमो रोगकली दिशेत् ॥ ८६ ॥

भाषार्थः—जिम्मे वर्षकाल में वर्ष का स्वामी मंगल ने हत (पीड़ित) होवे तो उसके वैशियों व कुटुम्बियों से कलह होता है, और मंगल में भय होता है, तथा जिम्मे जन्मकाल स्वामी वर्ष में अष्टम होकर आठवें घर में स्थित हो तो उसका रोग और कलह के कारण पीड़ा कलह देने ॥ ८६ ॥

शय कलह योग वर्णन ।

सृत्यन्दयोरधिकृतो भौमस्थाने गुरुर्हतः ।

पापैर्वादः स्फुटोप्येवं तादृशीन्दो शनेः पदे ॥ ६० ॥

भाषार्थः—जन्मकाल और वर्षकाल में गुरु अधिकारी होकर जन्म कुण्डली में स्थित मंगल की गति में विराजमान हो और पापग्रहों में पीड़ित हो तो लोगों के साथ स्फुट (भगद) वाद होता है, तथा जन्मकाल और वर्षकाल में अधिकारी होकर चन्द्रमा जन्म समय में शनि जिस राशि में हो उस राशि पर विराजमान हो और पापग्रहों में हत हो तो भगद कलह होता है ॥ ६० ॥

विदेश गमनादि योग वर्णन ।

सृत्यन्दयोरधिकृतो चन्द्रे बुधपदे हते ।

क्रूरविदेशगमनं वादः स्याद्विमनस्कता ॥ ६१ ॥

भा०—जिम्मे जन्मकाल और वर्षकाल में अधिकार को प्राप्त चन्द्रमा जन्म समय में बुध जिस राशि में विराजमान हो उस राशि पर वैद हो और पापग्रहों में पीड़ित होवे तो वह मनुष्य विदेश गमन में अल्प जनों के साथ विवाद (भगदा) करने से दुष्ट स्वभाव वाला होजावे ॥ ६१ ॥

शय अन्य मृत्यु योग ।

मेपे सिंहे धनुष्यारेऽदपे रन्ध्रेऽसितो भयम् ।

मृतौ मृतीशग्नेशौ मृत्युदौ पापदृग्युतौ ॥ ६२ ॥

भा०—जिम्मे वर्षकाल में मेप, सिंह और धन इन राशियों में से किसी राशि में मंगल वैद हो और वर्षस्वामी वर्षलग्न से आठवें घरमें वैद हो तो खद्ग से भय होता है, और जो मेप, सिंह, धन इन राशियों में से कोई

घाटवें घर में ही, वही वर स्वामी होकर मंगल स्थित हो तो खडग से भय हो, वर वर लग्न से घाटवें भाव का स्वामी घाटवें घर में विराजमान हो और वर लग्न स्वामी घाटवें हो, और पापगूहों की दृष्टि हो या पापगूहयुक्त हो तो मरण करने है ॥ ६२ ॥

सामान्य वर्ष योग ।

यत्रर्चं जन्मनि कुजः सोऽदलग्नपगो यदा ।

वृषो वर्षपनिर्नष्टवलस्तत्र न शोभनम् ॥ ६३ ॥

ध्यान-जन्म समय मंगल दिन राशि में हो वह राशि यदि वर्ष लग्न से हो और वर्ष का वर्षेश व वर स्थित होकर विराजमान हो तो वर्ष पर्यंत मरण करे ॥ ६३ ॥

घाटन से भय और मरण का योग ।

मार्गे शनो भौमयुगे म्नाष्टम्ये वाहनाद्द्वयम् ।

मार्गे भौमेषुम्ये तु पतनं वाहनाद्धदेन ॥ ६४ ॥

ध्यान-मार्ग वर्षहात में मर्त्य मर्त्य जनि मंगल से युक्त होकर पर्याप्त हो तो मरण करे ॥ ६४ ॥ मार्ग विराजमान हो तो वाहन (मारी) से भय होता है ॥ ६४ ॥ मार्ग वर्षहात में मर्त्य मर्त्य जनि मंगल से युक्त होकर पर्याप्त हो तो मरण करे ॥ ६४ ॥

मार्ग से मरण योग ।

शौचमेषु ज्ञेयैः सुसुप्तयुग्रे ज्ञेयामिमृनो मृतिः ।

सुसुप्तयुग्रे निर्जने निर्जने मृतिः ॥ ६५ ॥

पुण्य महा मृत्यु योग वर्णन ।

पुण्यसञ्ज्ञेश्वरः पुण्यसहमाष्टमगो यदा ।

मृत्युमृगेशः पुण्यस्थो मृत्तिदः पापद्वयुतः ॥ ६६ ॥

मृत्युष्टमगतो राशिः पुण्यसञ्ज्ञानि नाथयुक् ।

अब्दलग्नादष्टमर्चंचेदित्यं स्यान्मृत्तिस्तदा ॥ ६७ ॥

भा०—तो पुण्य मन्मरा स्वामी पुण्य महम से अष्टम स्थान में प्राप्त हो और पापग्रहों से युक्त रहूँ, तो भरण होता है, तथा जन्म कालमें आठवें स्थानका स्वामी वर्ष ममय पुण्य महम में स्थित हो और पापद्वय वायुक्त हो तो मृत्यु को देने वाला जानना ॥ ६६ ॥ जन्म ममय लग्न से आठवीं राशि पुण्य महममें स्थित होकर जो अपने स्वामी से युक्त हो तो मृत्यु होती है ॥६७॥

पुण्यसञ्ज्ञाशुभाक्रान्तं मृतीशोन्यारि रन्ध्रमः ।

मुखहेशोऽन्दपो वापि मृत्युं तत्र विनिर्दिशत ॥ ६८ ॥

सक्रे जन्मपे मृत्यो मृत्तिश्चेदित्यिहाकियुक् ।

भोमे क्षुतेक्षणात्तत्र मृत्युः स्यादात्मघाततः ॥६९ ॥

भा०—जिनके वर्ष कालमें पुण्य महम पापग्रहों से युक्त हो, और यदि आठवें स्थान का स्वामी चारहवें, छठे, आठवें इन किसी स्थानमें स्थानों में से स्थित हो तो मृत्यु कहना, तथा मुखहाका स्वामी और वर्ष का स्वामी पापग्रह से युक्त होकर चारहवें, छठे और आठवें इन स्थानों में से किसी स्थानमें स्थित हो तो उसके मृत्यु को कह देंगे ॥ ६८ ॥ वर्ष कालमें जन्म लग्नका स्वामी पापग्रहों से युक्त होकर आठवें स्थान में स्थित हो तो मृत्यु होती है, तथा यदि मृत्यु जिन किसी स्थान में शनिश्चर से युक्त स्थित हो और उसको मङ्गल धनु (१४ । ७ । १०) स्थान दृष्ट से देवता हो तो इस योग में उस प्राणीकी आत्मघात से मृत्यु कहना ॥ ६९ ॥

मन्दोष्टमे मृतीशेत्यशाला मृत्युकराः स्मृताः ।

शुभेत्यशालात्सर्वेऽपि योगा नाशुभदायकाः ॥१००॥

मृत्तिरन्ध्रपतिर्मन्दोऽष्टमोऽध्दे लग्नपे न चेत ।

इत्यशाली क्रूरदशा तत्काले मृत्युदायकः ॥ १०१ ॥

भा० - वर्ष ज्ञान से शनैश्चर 'घाठने' स्थान में स्थित होके घाठने स्थान के स्वामी के साथ इत्यशाल योग को करै तो उसको मृत्युकारक होता है, तथा पूर्वोक्त सम्पूर्ण मृत्यु योगों में परिष्कारक ग्रहों के साथ इत्यशाल योग होके तो परिष्कारक ग्रह यशुभ फलके देने वाले नहीं होते हैं किन्तु शनैश्चरको देने हैं ॥ १०० ॥ जन्म समय अष्टम स्थान का स्वामी शनैश्चर स्थान में घाठने स्थान में स्थित होता हुआ वर्ष लग्न स्वामी के साथ अष्टम (१ । ५ । ७ । १०) से इत्यशाल योग को करता हो तो उसी स्थान में मृत्युकारक के साथ को देने वाला होता है ॥ १०१ ॥

अष्टम भाग विचारः ।

(नाम भाग विचारः)

यास लाभ योग वर्णन ।

भोगेऽध्दे विनवगेह्मायुके बलान्विते ।

गणात्मनसा मार्ग शनरं कार्यं स्थिरंततः ॥१०२॥

विषमेशोऽध्दः कश्चर्त्ता मार्गमौह्यदः ।

अन्तर्गतानं म्यात्मवेज्ञाधिकतो भवेत् १०३॥

अन्ते वा कुगतिः सौम्ये देवयात्रातथाविधे ॥ १०४ ॥

करादित्ते कुपानं स्यादगुणवेधं विचिन्तयेत् ।

इत्यशाले लग्नधर्मपत्योर्यात्राम्पचिन्तिता ॥ १०५ ॥

भाषार्थः— जो गुरु वर्ष वा स्वामी होता हुआ वर्षलग्न में तीसरे नवमें घर में विराजमान हो तो उसको मारग में गुरु होता है और जो पूर्वोक्त शुक्र बली हो जायदा वर्ष के कृत्स्निय वर्ष से लग्न होजाये तो उसको कुत्स्वित (बुग) गमन होता है, यद्यपि याथा करने में कार्य लाभ नहीं होता, तथा बुध वर्षेश होता हुआ, यन्मशन होता हुआ वर्षलग्न में तीसरे या नवम घर में विराजमान हो तो किसी देवता के उद्देश से गमन होता है यही तीर्थ यात्राका उत्सवगण जानना ॥ १०४ ॥ और जो यह शुक्र, बुध पापग्रहों से पीड़ित या मृक हो तो यात्रा कृत्स्नित (अस्वा नहीं) कइना, एवं गुरु वर्षेश बली होकर वर्षलग्न में तीसरे, नवमें घर में विराजमान हो तो देव यात्रा हो और जो गुरु वर्षेश पाप पीड़ित या पाप शुक्र हो तो कुपान (नेष्ट गमन) होता है तथा वर्षलग्न स्वामी के साथ नवम भाव स्वामी का इत्यशाल योग होवे तो अचिन्तित (नहीं स्मरण की हुई) यात्रा होती है ॥ १०५ ॥

चिन्तित यात्रा योग वर्णन ।

लग्नेशो धर्मपे यच्छस्वमं महश्चिन्तिताश्वदः ।

एवं लग्नाब्दपोयोगे मुथहांगपयोरपि ॥ १०६ ॥

भाषार्थ— जो वर्षलग्न स्वामी नवमभाव स्वामी के साथ इत्यशाल योग करे तो वह उम आद्रमी के अर्थ चिन्तित गमन को देता है, एवं वर्षलग्नस्वामी वर्षेश के साथ इत्यशाल योग करे, तथा मुथहा स्वामी वर्षलग्न स्वामी के साथ मुथशिल योग करे तो भी चिन्तित गमन को देवे ॥ १०६ ॥

समीचीन यात्रा योगों का वर्णन ।

गुरुस्थाने कुजे धर्मे सद्यात्रा भृत्यवित्तदा ।

ज्ञस्थाने लग्नपो भौमो दृष्टः सद्यानसौख्यदः ॥ १०७ ॥

स्वस्थानगो वा बलवांलग्नदर्शी सुयानदः ।

मन्त्र विदेश यात्रा योगों का वर्णन ।

घनेन्धिता धर्म इन्दोः सवलंघ्याविदेशजः ।

वर्षेशो बलवान्पापो युतः केन्द्रेऽधिकारवान् ॥ १११ ॥

अधिकारे गतिं संख्ये सेनापत्येऽपि वा वदेत् ।

एवं बुधे कुजे जीवयुतेर्काञ्चिर्गते पुनः ॥ ११२ ॥

परसेन्योपरि गतिर्जयः ख्यातिमुखावहः ।

जीवान्नवमगे भौमे शुभा यात्रा नृणां भवेत् ॥ ११३ ॥

भा०—जिसके मानके स्थान में मृगहा और नवमे स्थान में चलमहित चन्द्रमा जो वे विदेश का लाभ कारक मार्ग जानना, तथा वर्ग का स्वामी मन्त्री व पापग्रहों के योग से रहित, पंचाधिकारियों के बीच अधिकारी होकर केन्द्र १।४।७।१० स्थान में स्थित हो ॥ १११ ॥ उसका किसी अधिकार में गमन होता है अथवा रणभूमि व सेना के स्वामित्व में गमन होता है इसी प्रकार मृग और मंगल चरित्र व उदित व वृहस्पति से युक्त होकर केन्द्र में स्थित हो तो ॥ ११२ ॥ पर सेना के ऊपर गमन (धावा करना) होता है, कि जिससे वह मनुष्य जय, ख्याति (प्रसिद्ध) और सुखको प्राप्ति होता है, वर्ग कालमें वृहस्पति से नवम स्थान में मंगल स्थित हो तो मनुष्यों की शुभ यात्रा होती है ॥ ११३ ॥

इति नवम भाव विचारः ।

दशम भाव विचारः ।

(राज्य सुख धन लाभ योग)

सवलेन्दपतो स्वस्थे राज्यार्थसुखकीर्तयः ।

स्थानान्तराप्तिरन्मन्केद्रे गृहसुखाप्तयः ॥ ११४ ॥

इत्थं बली रविभूस्थः पूर्वार्जितपदासिकृत् ।

एकादशेस्मिन्सख्यं स्थान्नृपामात्यगणोत्तमैः ॥ ११५ ॥

भा०—जो बलमहित वर्गका स्वामी दशम स्थान में स्थित हो तो

वर्षे शे राज्यसप्तमेऽर्कशात्वले महानृपः ॥ ११८ ॥

भा०—जो वर्षकाल में दशम भाग का स्वामी, वर्ष लग्न स्वामी, और तीसरे इन तीनों का परस्पर इत्यंशाल योग होवे तो राज्य का देने वाला होता है, तथा वर्षेय राज्य महम में स्थित हो और वर्ष के साथ इत्यंशाल योग को करे तो वही भारी राजा होने का योग जानना ॥ ११८ ॥

द्रुप नाश योग ।

शनिस्थाने कुजः पर्यन्मुद्यदां पापकर्मतः ।

नृपभीतिं वित्तनाशं दद्याद्दशमगो यदि ॥ ११९ ॥

भा०—जिसके जन्म समय शनि स्थित राशि पर वर्ष समय मंगल वर्ष लग्न से दशम पर में स्थित हो और गृहहा देवता हो तो उस मनुष्य को पाप कर्म से राज भय और धन नाश को देना है ॥ ११९ ॥

पापवृद्धि और पुण्य वृद्धि योग ।

ईदृशे त्रिनवस्थेऽस्मिन्दग्धे नष्टेधसंचयः ।

मंदोन्दपोऽधिकारी त्रिधर्मगोधर्मवृद्धियः ॥ १२० ॥

भा०—जन्म समय शनि जिस राशि में स्थित हो वर्ष समय उस राशि पर स्थित हो और अस्तांगत व नष्ट बल होता हुआ वर्ष लग्न से तीसरे व नववें स्थान में स्थित हो तो उसको पापवृद्धि से बलेश होता है तथा शनि वर्ष का स्वामी और अपने उच्च अधिकारों में अधिकारी होकर वर्ष लग्न से तीसरे व नववें स्थान में स्थित हो तो धर्म की वृद्धि होवे, जिससे कि उसको सुख प्राप्त होता है ॥ १२० ॥

दृष्ट योग और शुभ योग वर्णन ।

तस्मिन्दग्धे विनष्टे च पापकृद्मर्निन्दकः ।

ईदृशीदृक्फलं सूर्ये गुरावित्थं नयार्थभाक ॥ १२१ ॥

भा०—तहां दृष्ट योग को प्रथम कहते हैं, जिसके वर्षकाल में वह शनैश्चर वर्ष का स्वामी होकर अधिकारी व दग्ध (अस्तांगत) वा बल रहित होकर वर्ष लग्न से तीसरे वा नववें स्थान में स्थित हो तो वह मनुष्य पापी व

शुभ ग्रहों से क्या १९ होकर शुभाशुभदिन वर्ष लगनमें स्थित हो तो निम्नमें पक्षमें से लाभ होता है ॥ १२४ ॥

शुभ फल वर्णन ।

अस्मिन्पष्ठाष्टन्त्यगते सक्रूरे नीचकर्मकृत् ।

क्रूरेक्षणे न वा लाभोऽस्तंगते लिखनादितः ॥ १२५ ॥

भा०—पूर्वोक्त वर्णस्थितो पुत्र वर्ष लगनमें पक्षे आठवें बारहवें इन स्थानों में से किसी स्थानमें स्थित हो और पापग्रहों से युक्त हो तो यह पुरुष नीच कर्म करने वाला होवे यथा पूर्वोक्त वर्ष वर्षेश होके पक्षे, आठवें बारहवें स्थान में स्थित हुआ पापग्रहों से देखा जाता हो या अस्मन्नगत हो तो निम्नमें पक्षमें से लाभ नहीं होवे ऐसा कहना ॥ १२५ ॥

शुभा शुभ योग वर्णन ।

जीवेऽदपे क्रूरहते लगने हानिर्भयं नृपात् ।

अस्मिन्नधिकृन्ते घूने त्यवहाराद्धनासयः ॥ १२६ ॥

भा०—जो वृहस्पति वर्षेश हो और पापग्रहों से पीड़ित होके वर्ष लगन में स्थित हो तो द्रव्य की हानि और राजा से भय होता है तथा वृहस्पति वर्षेश उवाधिकार आदिको प्राप्त होके वर्ष लगनमें सातवें घर में स्थित हो तो चाण्डाल्य से धनका लाभ होवे ॥ १२६ ॥

प्राप्ति योग वर्णन ।

लग्नायेशेत्यशालेस्याल्लाभःस्वजनगौरवम् ।

सर्वेपि लाभे वित्ताप्तये सवला निर्वला न तु ॥ १२७ ॥

भा०—जिसके वर्षकाल में लगन स्वामी और लाभ स्वामी इन दोनों का परस्पर इत्यशाल योग होवे तो उय मनुष्य को लाभ और अपने जनों में गौरव (बढाई) होवे है, तथा यदि सम्पूर्ण ग्रह बली होकर लाभ स्थान में स्थित हो तो द्रव्यकी प्राप्ति जानना और जो सम्पूर्ण ग्रह बलहीन होकर लाभ घर में स्थित हो तो द्रव्य प्राप्ति के अर्थ नहीं जानना ॥ १२७ ॥

स्वत्ता रिथत द्रव्य प्राप्ति योग ।

सर्वीयों ज्ञः समुद्यहो लग्नेऽर्थसहमे शुभाः ।

तदा निखातद्रव्यस्य लाभः पापदृशा न तु ॥१२८॥

भा०—जिनके वर्ष कान में बलवान मुक्ता सहित युव वर्ष लग्ने में हो जाय शुभग्रह द्रव्य महम में स्थित हो तो उस प्राणी को रिथत द्रव्य का लाभ होता है और उक्त योग पर पापग्रहों की दृष्टि होने में उसे द्रव्य का लाभ कदापि नहीं होता है ॥ १२८ ॥

इति लाभ भाव विचारः ।

अथ अय्य भाव विचारः ।

नरनान्दपो हनत्रलो व्यपगमृतिस्थो यद्राशिगौ तदनुसारि
विनिन्द्यम् । पष्टेऽब्दपे भृगुमुतेऽथ विनष्टवीर्ये दृष्टे खलेः क्षु
शादिनदन्मिसंस्थे ॥ १२९ ॥

भृगुशक्तिवृग्गात्त चतुरंघ्रिभस्येन्वम्भिन्नर्पादमुदितं फलमन्दना
मस्ये कृते शशिकृते वृग्गादिनाशः स्याद्व्याकुलत्व मशुभाप
दये वा ॥ १३० ॥

दिकों का जाग और मनमें व्याकुलता होती है प्रथम उक्त मंगल चन्द्रमा महिन पावप्रदों में पीड़ित द्वादश भाग में स्थित हो तो पूर्वोक्त फल फलना यही इन श्लोक में (अथै कृते जीमगने) यह पाठ प्रभाकार ने अपनी पृष्ठ में व्याख्यान मान पढ़ा शीतल में (अथै कृते शनि युते) यह पाठ उचित है, क्योंकि ममर सिंह ने कहा है कि (शनिगृहि कृते मनगने चेता व्याकुल्यं तुरंग नाशदच) शनि में युक्त वर्षेण मंगल दशम स्थान में हो तो निच पी व्याकुलता और पोंदों का नाश होता है एवं जातिकालकार में भी कहा है (भौमे मन्देयुते स्थिते च दशमे म्यादाकुलत्वं) मनपश्यावनां क्षतिः क्षतिः) मंगल वर्ष का शर्मा होता हुआ शनश्चर युक्त दशम स्थान में हो तो व्याकुलता और पोंदों का क्षय होता है ॥ १३० ॥

पृष्ठे स्वो खलहते चतुरभिस्थे भूतैः समं कलिस्थाष्टमरिफ्फ-
नेऽपि । मन्देऽब्दपे वलयुते रिपुरिफ्फसंस्थे भूवासनहुमजलाश-
येनिर्मित्तिश्च ॥ १३१ ॥

भा०—जो नृप वर्ष का स्वामी होवे पाप गृहों में युक्त चतुष्पद राशि में स्थित छठे स्थान में हो अथवा आठवें बारहवें स्थान में स्थित हो तो सेवकों के साथ कलह होवे, तथा वर्ष का स्वामी चल महिन शनि हो और छठे बारहवें स्थान में स्थित हो तो उसको उजाड़ भूमि में बसाता हुआ बाग कुआ, तालाब को निर्माण करता है अर्थात् यह प्राणी उजाड़ भूमि में ग्राम को बसावे और कहीं बाग कुआ तालाब बनवावे ॥ १३१ ॥

दुर्गरे स्थान को प्राप्त हुए गृहों का फल ।

स्वत्तोच्चगे कर्मणि सूर्यपुत्रे नैरुज्यमर्थाधिगमश्चजीवे ।
सूर्यं नृपाद्वाब्दावलात्कुजेर्थां बुधे भिपगज्योत्तिपकाव्यशिल्पैः ॥

भा०—जिसके वर्ष काल में शनश्चर वंश होता हुआ अपनी राशि व अपने उच्च राशि में स्थित हो और वर्ष लग से दशम घर में हो तो शरीर आरोग्यता और धन की प्राप्ति जानना, एवं बृहस्पति वर्षेश होकर अपनी राशि व उच्च राशि में होके दशम भाग में हो तो आरोग्यता व धन मिलता है एवं सूर्य वर्षेश होता हुआ अपनी राशि व अपने उच्च राशि में होके दशम

वृष में विराजमान हो तो राजा से धन मिलता है, एवं मङ्गल वर्षेश होता हुआ मन्दे राशि में उच्च में विद्यमान होकर दशम जगह विराजमान हो तो उसको अपने बुनवन में धन मिलता है, तथा वृष वर्षेश होता हुआ अपने राशि या उच्च राशि में विद्यमान होके दशम जगह विराजमान हो तो वैयकी, ज्योतिष, कविता और चार्मीगरी आदि करते धन लाभ होता है ॥ १३२ ॥

निर्वल शनि का फल ।

मन्देऽन्दपे गतवले नेराश्यं दोःस्थ्यमादिशेत् ।

मृगंऽन्देरो शशिस्थाने मन्देऽन्दजनुपोर्हते ॥ १३३ ॥

मयंकर्मसु वैकल्यां वक्रेऽस्ते च तथा पुनः ।

मयंकर्मेशमहमनाथाः शनियुनेक्षिताः ॥ १३४ ॥

अथ १-जो शनिश्चर वर्ष का स्वामी होता हुआ बलहीन हो वर्षालय में दशम जगह में विराजमान हो तो वह मनुष्य प्राणाहीन होकर चंचल चित्त को प्राप्त होता है, दशम जगह में स्वामी मय हो और शनिश्चर जन्म और वर्ष मन्दे राशि में उच्च में विराजमान हो, उच्च राशि में बलहीन होकर विराजमान हो तो वह मनुष्य सम्पूर्ण कामों के करने में विकल और सामर्थ्य प्राप्त होता है और शनिश्चर वर्ष का स्वामी हो तो भी उक्त फल पहना जाता है, उक्त दशम जगह और दशम भाग्य, कर्ममहमेश ये तीनों शनिश्चर में मयंकर्मेश का मय कर्मों में बुरा होता है ॥ १३३ ॥ १३४ ॥

दशम भाग्य वर्षेश का फल ।

मन्देऽन्दपेऽन्देरो कर्मेशे च वन्तोऽभिकते ।

मृगंऽन्दे च न मृगं तत्रान्दे मृनिपे तथा ॥ १३५ ॥

अथ २-जो शनिश्चर वर्ष का स्वामी निर्वल होकर वर्षालय में दशम भाग्य वर्षेश का स्वामी मय हो तो वह मनुष्य सम्पूर्ण कामों के करने में विकल और सामर्थ्य प्राप्त होता है, उक्त दशम जगह और दशम भाग्य, कर्ममहमेश ये तीनों शनिश्चर में मयंकर्मेश का मय कर्मों में बुरा होता है ॥ १३५ ॥

इति मयमभानविधायः ।

वर्षं के मामान्य शुभाशुभ फल ।

यत्र भावं शुभफलो दृष्टो वा जन्मनि ग्रहः ।

वर्षे तद्भावगस्तादृक तत्फलं यच्छ्रुति ध्रुवम् ॥ १३६ ॥

भा०—जन्म समय जिन भाव में शुभ व अशुभ फल का देने वाला जो कोई ग्रह हो यदि वही ग्रह अंशाल में उर्ध्व के समान होकर उर्ध्व भाग में विराजमान हो तो उस भाव के शुभ व अशुभ फल को निश्चय करके देता है ॥ १३६ ॥

वर्षं में ग्रहों का फल पाक वर्णन ।

येजन्मनि स्युः सवला विधौर्या वर्षे शुभं प्राकचरमे त्वनिष्टम् ।

दद्युर्विलोमं विपरीततायां तुल्यं फलं स्यादुभयत्र साम्ये ॥ १३७ ॥

भा०—जन्म समय में जो ग्रह चलवान होकर वर्ष समय में चलहीन होवे तो यह पूर्वार्ध में शुभ और उत्तरार्ध में अशुभ फल देवे है इससे विपरीत हो तो विपरीत फल जानना, अर्थात् जन्मकाल में निचले हो और वर्ष काल में सचले हो तो वर्ष के पूर्वार्ध में अनिष्ट और उत्तरार्ध में अच्छा फल जानना तथा जो समान चल हो तो सम्पूर्ण वर्ष पर्यंत समान फल होता है, जो जन्म समय में समय श्रेष्ठ बली हो तो नालभर श्रेष्ठ फल, हीन बली हो तो सालभर अनिष्ट फल देने हैं इस प्रकार ग्रहों से उत्पन्न फल उन ग्रहों की दशा अन्नदशा में करना चाहिये ॥ १३७ ॥

इति नीलकण्ठीभाषाटीकायां वर्षं तन्त्रे तन्वादिद्वादशभावविचारोनाम

पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ दशाफलाध्यायः षष्ठः प्रारभ्यते ।

पूर्वा बल युक्त लग्न का फल ।

हेममुक्ताफलद्रव्यलाभमारोग्यमुत्तमम् ।

कुरुते स्वामिसन्मानं दशालग्नस्य शोभना ॥ १ ॥

मध्यम बलवाली मृग की दशा का फल ।

दशारवेर्मध्यवलस्य पूर्वमिदं फलं मध्यममेव दत्ते ।

आमाधिकार व्यवसाय धैर्यःकुलाऽनुमानाच्च सुखादिलाभः ॥६॥

भा०—तो मध्यम बलयुक्त मृगकी दशा हो तो पूर्वोक्त फल मध्यम देती है । आमाके अधिकार में और उद्योग से य धीरज करके य कुल के अनुमान से सुख आदि पा त होता है ॥ ६ ॥

शुन्यवली मृग की दशा का फल ।

दशारवेरल्पवलस्य पुन्सां ददाति दुःखं स्वजनैर्विवादात् ।

मतिभ्रमं पित्तरुजं स्वतेजो विनाशनं घर्षणमप्यरिभ्यः ॥७॥

भा०—जो शून्यवली मृग की दशा हो तो मनुष्यों को अपने जनों के साथ लड़ाई होने में दुखको देती है, और मतिभ्रम, पित्त में रोग अपने तेजका विनाश शत्रु से घर्षण (दवाव) यह अशुभ फल देती है ॥ ७ ॥

नष्टवली मृग दशा का फल ।

दाशरवेर्नष्ट बलस्य पुन्सान्पाद्रिपोर्वा भय मर्थ नाशम् ।

स्त्री पुत्र मित्रादि जनैर्विवादं करोति बुद्धि भ्रममामयंच ॥८॥

भा०—नष्ट बलवाली मृग की दशा मनुष्यों को राजा और शत्रु से भय और धन नाश को करती है । तथा स्त्री, पुत्र, मित्र आदि जनों से विवाद (लडाई) बुद्धि भ्रम और रोग को करती है ॥ ८ ॥

मृग के विशेष स्थान स्थिति से दशा का फल ।

लग्ना द्रविः पट्टत्रिदशाय सस्थो निन्द्योऽपिदत्तेशुभमर्ध मेव ।

मध्यत्वमूनः शुभतांचमध्या यातीत्यमत्यन्त शुभःशुभःस्यात् ॥९॥

भा०—वर्ष लग्न से मृग छठे, तीसरे, दशवें, ग्यारहवें इन स्थानों में स्थित हो तो अर्निष्ट दशा का फल भी आधा शुभ देता है और मध्यम बल हो तो शुभ फल हो और हीन बली हो तो मध्यम फल हो और पूर्ण बली हो तो बहुत ही शुभ फल होता है ॥ ९ ॥

मध्यत्वमूनः शुभतां च मध्यो यामीत्यमिन्दुः शुभन्ता च मध्ये १४

भा०—एवं, आठवें, धारद्वों, इनमें इन गति में स्थित निन्द्य भी चन्द्रमा जपनी दशा में आधा सुख देता है, और होनवली चन्द्रमा मध्यम फल और मध्यम प्रती चन्द्रमा शुभ फल देता है और जो चन्द्रमा पूर्ण चली हो तो अत्यन्त शुभ फल देने वाला जानना ॥ १४ ॥

पूर्ण चली मंगल की दशा का फल ।

दशापतिः पूर्णचलो महीजः सेनापतित्वं तनुते नराणाम् ॥
जयं रणो विद्रुमहेमरक्त वस्त्रादिलाभं प्रियसाहसत्वम् ॥१५॥

भा०—जो दशा का स्वामी मंगल पूर्ण चली होवे तो मनुष्यों को सेनापतिवत् (फौजका मानिक) बनावे और संग्राम में जय व मृगा, मोना, लाल कपड़े आदिक लाभ और प्रिय साहस्य इनको देता है ॥ १५ ॥

दशा पतिर्मध्य चलो महीजः कुलाऽनुमानेन धनं ददाति ।
राजाधिकारं त्वय तत्परत्वं तेजास्वता कान्तिवलाभि वृद्धिम् ॥१६॥

भा०—जो दशा का स्वामी मङ्गल मध्यचली हो तो कुलके अनुमान से धनको देवे है तथा राजा से किसी अधिकार का लाभ और उस अधिकार में प्रधानत्व और तेज कान्ति व चले वृद्धि इन सबको देता है ॥ १६ ॥

अल्प चले मंगल की दशा का फल ।

दशापतिः स्वल्पचलो महीजो ददाति पित्तोष्णरुजं शरीरे ।
रिपोर्भयं वन्धन मास्यतोऽसृक्सूवं च वैरं स्वजनेश्चशश्वत् १७॥

भा०—जो अल्पचली मंगल की दशा हो तो शरीर में पित्त और ताप से रोग और शत्रु से भय तथा बन्धन मुख से रुधिर टपकना, और निरन्तर अपने भाई बन्धुओं से भय इन सबों को देता है ॥ १७ ॥

नष्ट चली मंगल की दशा का फल ।

दशापतिर्नष्टचलो महीजो विवादमुग्रं जनयेद्राणं वा ।

चौराद्भयं रक्तरुजं ज्वरं च विपत्तिमन्यस्वहृतिं खजूर्म ॥ १८ ॥

भावार्थः—जो मंगल नष्ट बलवाला होकर दशा को स्वामी हो तो उस विचाद (कश्चिन इगड़ा) वा संग्राम, और चोरों से भय, रक्तविकार, ज्वर और चित्ति, चिजातीय जन से धन हरण और खाज को उत्पन्न करता है ॥ १८ ॥

तीसरे, लट्टे, ग्याखे स्थान में स्थित मङ्गल का फल ।

त्रिपदायगतो भौमो नष्टवीर्यः शुभार्द्धदः ।

मन्ये हीनः शुभोमध्यः शुभोऽत्यन्त शुभावहः ॥ १९ ॥

भावार्थः—जो तीसरे, लट्टे, ग्याखे इन स्थानों में से किसी स्थान में मङ्गल की मङ्गल मिया हो तो आता शुभ फल देता है और जो हीन नली मध्य स्थानों में से किसी स्थान में हो तो मध्यम फल देता है, मध्यम नली मङ्गल फल पूर्ण होती, मङ्गल स्थित हो तो अत्यन्त शुभ फल को देता है ॥ १९ ॥

दशमिणी की दशा का फल ।

दशमिणी पूर्णविलो बुधश्च शशोऽभिवृद्धिं गणितान्मुशिल्पात् ।

दशमिणी मेवां मङ्गलां नृपादेर्दीन्यं च वै दृश्यगुणोदयं च ॥२०॥

भावार्थः—दशमिणी की बुध पूर्ण होती हो तो गणित व सुन्दर मङ्गल फल देता है, तथा मङ्गलिकों की मङ्गल मेवा और दृश्यगुणोदय का फल देता है, दशमिणी मङ्गलिकों के उदय का फल देता है ॥ २० ॥

मौन्यम की दशा का फल ।

मौन्यम दशमिणी बुधश्च शशोऽभिवृद्धिं गणितान्मुशिल्पात् ।

मौन्यम मेवां मङ्गलां नृपादेर्दीन्यं च वै दृश्यगुणोदयं च ॥ २१ ॥

भावार्थः—मौन्यम की दशा मङ्गलिकों की मङ्गल मेवा और दृश्यगुणोदय का फल देता है, दशमिणी मङ्गलिकों के उदय का फल देता है ॥ २१ ॥

दा है और नदरों विषों व यन्त्रुमों के समागम में मध्यम ही सौख्य को
 ॥ २१ ॥

रत्न बलरूप दशा का फल ।

शापतौ स्वल्पवले बुधे स्यान्मानस्य नाशः स्वजनापवादः ॥

यकार्यकोपम्बलनाद्यनिष्टं धनव्ययं रोगभयं च विन्द्यात् ॥२२॥

भा०— जो बुध रत्न धनी होकर दशा का स्वामी हो तो मान का
 न और अपने इनो में फल, बिना प्रयोजन कोप आदि में अनिष्ट, धन का
 रोग भय वह यन्त्रुप फल जानना ॥ २२ ॥

हीन धनी बुध की दशा का फल ।

शापतौ हीनवले बुधे स्यात्स्वबुद्धिदोषो वध वंधभीतिः ।

रे गतिर्वानकफामयार्तिनिस्त्रातद्रव्यस्य च नापि लाभः ॥२३॥

भा०—ही०—जो दशा का स्वामी बुध हीन बल वाला हो तो अपनी
 दि के दोष में वध धन भय (जैन माने से दर) और दूर मनन बात
 फल रोग में थोड़ा और निदान द्रव्य का न मिलना इन सबों को देना है ॥२३॥

एते चारहवे, आठवे स्थान की इनगति में स्थित बुध का फल ।

पडप्यान्त्येतरर्क्षस्थो नष्टो त्तोऽर्धशुभप्रदः ।

मध्यो हीनः शुभो मध्यः शुभोऽत्यन्तं शुभावहः । २४ ।

भा०— जो वर्ष समय में वर्ष लग्न में छठे आठवे और चारहवे इन
 धनो में से किसी स्थान में नष्ट बली बुध स्थित हो तो अपनी दशा में
 तथा शुभ फल देता है । अल्पबली हो तो मध्यम फल मध्य बली हो तो
 म फल, पूर्ण बली हो तो अत्यन्त शुभ फल, देता है ॥ २४ ॥

पूर्णबली बुधस्पति की दशा का फल ।

परोर्दशा पूर्णबलस्य दत्तं मनोदयं राजसुहृद्गुरुभ्युः ।

नीत्यर्थलाभोपचयं सुखानि राज्यं सुतापि रिपुरोगनाशनम् ॥२५॥

भा०— वर्ष प्रवेश समय बुधस्पति की दशा पूर्णबली हो

शनि एक घरों में हो तो अपनी दशा में शारा अन्ध फल देवे है और जो हीन वनी शुक्र एक घरों में हो तो मध्यम फल जानना, तथा मध्यम वनी बुधशनि एक घरों में हो तो अपनी दशा में अन्ध फल देवे है और जो पूर्ण वनी शुक्र एक घरों में हो तो अपनी दशा में अन्यन्त शुभ फल देता है ॥ २६ ॥

पूर्ण वनी शुक्र की दशा का फल ।

दशा भृगोःपूर्णवलास्य सौख्यं सुगन्धहेमाम्बरकामिनीभ्यः ।

हयादिलाभं सुतर्कतितोपत्रे रुज्यमान्धर्वरतिं पदाप्तिम् ॥३०॥

भाषार्थः - पूर्ण वनी शुक्र की दशा में सौख्य, माला, सुगन्धि, मोना, वस्त्र स्त्री से सुख, घोड़े आदि का लाभ, पत्र प्राप्ति, कौन्नि, प्रसन्नता, आरोग्यता, मान में प्रीति, धन का लाभ इन घरों की प्राप्ति होने है ॥ ३० ॥

मध्यम वनी शुक्र की दशा का फल ।

दशा भृगोर्मध्यवलास्य दत्ते वाणिज्यतोऽर्धागमनं कृपेश्च ।

मिष्टान्नपानाम्बरभोगलाभं मित्रांश्च योपित्सुतसौख्यलाभम् ॥३१॥

भा० - मध्यवनी शुक्र की दशा व्यापार में धन को देने है, तथा खेती से धन का लाभ हो और मीठे अन्न का भोजन मद्य व भोगों का लाभ, मित्र और स्त्री पत्रों से सौख्य का लाभ होता है ॥ ३१ ॥

अल्प वनी शुक्र की दशा का फल ।

दशा भृगोल्पवलास्य दत्ते मतिभ्रमं ज्ञानयशोऽर्थनाशम् ।

कदन्नभोज्यं व्यसनात्तयार्तिं स्त्रीपक्षवैरं कलिमप्यरिम्यः ॥३२॥

भा० - जिकरे यह प्रवेश नगय अल्प वला वनी शुक्र की दशा हो तो मतिभ्रम, ज्ञान यश और धन का नाश और कुत्सित (सामा का कुत्ति) अन्न का भोजन दुःख, रोग से पीड़ा और मगुरारि वालों से वैर, शत्रुओं से भी कलह इन अशुभ फलों को देवे है ॥ ३२ ॥

नष्ट वनी शुक्र की दशा का फल ।

दशा भृगोर्नष्टवलास्य दत्ते विदेशयानं स्वजनैर्विरोधम् ।

शुभ्य चली शनि की दशा का फल ।

॥ शनेरल्पबलस्य पुंसां तनोति दुःखां रिपुत्स्करेभ्यः ।

रिद्रव्यमात्मीयजनापवादं रोगं च शीतानिलकोपमुग्रम् ॥३७॥

भाषार्थ—शुभ्य बल वाली शनि की दशा मनुष्यों को शत्रु व लोगों से व को रिपुता करे है और अपने जनों से अपवाद, दृष्टिता, रोग और प्रात के उग्र कोप को करे है ॥ ३७ ॥

नष्ट चली की शनि दशा का फल ।

दशा शनेर्नष्टबलस्य पुंसामनेकघातुव्यसनानि दत्ते ।

त्रीपुत्रमित्रस्यजनेर्विरोधं रोगाभिवृद्धिं मरणेनतुल्यम् ॥३८॥

भा०—शनि की दशा जो नष्ट चली हो तो मनुष्यों को तो अनेक दुःखों (वान, विच, कफ, रज्य) में दुःख को देने है और स्त्री, पुत्र, मित्र । अपने जनों से विरोध को करे है और मरण समान रोग बढ़ाये है ॥ ३८ ॥

तीमरे, छटे, ग्याग्द्वे स्थान में प्राप्त शनि की दशा का फल ।

त्रिपष्टलाभोपगात् मन्दो निन्द्योऽर्द्धसत्फलः ।

मव्यो हीनःशुभोमध्यः शुभोऽत्यंतं शुभावहः ॥ ३९ ॥

भा०—जो तीमरे, छटे, ग्याग्द्वे इन स्थानों में ये किसी स्थान में शनि त होतो नष्ट चली भी शनि आधा शुभ फल देने है और हीनचली हो तो थम फल मध्य चली हो तो शुभ फल और पूर्ण चली हो तो अत्यन्त शुभ । को देने है ॥ ३९ ॥

द्रेफकागवश से लग्न दशा का फल ।

दशा तनोः स्वामिबलेन तुल्यं फलं ददातीत्य परो विशेषः ।

रे शुभा मध्यफलाशुभा च द्विमूर्तिभेऽस्माद्विपरीतमूहम् ॥४०॥

निष्ट मिष्टं च समास्थिरर्त्ते क्रमाद्दृक्काणैः फलमुक्त्वाद्यैः ।

त्स्वामियोगेक्षणतःशुभंस्यात्पापेक्षणतकष्टफलं च वाच्यम् ॥४१॥

निपते हैं—दशमान इत्यादि श्लोकों में अन्तर्दशाः ग्राहण करने का प्रकार पूर्व मंत्रान्तर में कह चुके हैं इसमें यहां लिखना आवश्यक नहीं है, यहां अन्तर्दशा का भी फल चार प्रकार का धन देकर कहना, अन्तर्दशावधि हन गृहों की दृष्टि या नान गृह युक्त हो या शन गृह में मंत्री हो तो उर्मा अनुसार देकर फल का विचार कहना ॥ १ ॥ २ ॥

चन्द्रारजीवाः सौम्येज्यशुक्रा रविविधु तथा ।

मन्देज्यशुक्राः सूर्येन्दुभोमाः सौम्येज्यसूर्यजाः ॥ ३ ॥

जीवज्ञशुक्राः सूर्यादिः शुभा अन्तर्दशा इमाः ।

अन्येषामशुभान्नया इति वामनाभापितम् ॥ ४ ॥

भाषायाः—सूर्यदशा में च. मं. शू. की अन्तर्दशा, और चन्द्रमा की दशामें पु. वृ. शू. की अन्तर्दशा तथा मङ्गल की दशा में म. चं. की अन्तर्दशा, बुध की दशा में श. वृ. शू. की अन्तर्दशा, गुरु की दशा में स. चं. मं. की अन्तर्दशा, शुक की दशा में पु. वृ. शू. की अन्तर्दशा, शनि की दशा में पु. वृ. शू. की अन्तर्दशा अन्तर्दशा फल देते हैं यह सूर्यादि गृहों की दशामें शुभान्तर्दशा है अन्य अन्तर्दशा अशुभ जानना यह वामनाचार्य ने कहा है ॥ ३ ॥ ४ ॥

लग्न में स्थित गृहों का फल ।

सूर्यारमन्दास्तनुगाज्वरार्ति धनक्षयं पापयुग्मिदुरित्थम् ।

शुभान्वितः पुष्टतनुश्चसौख्यंजीवज्ञशुक्राधनधान्यलाभम् ॥५॥

भा०—रवि मङ्गल शनि इनमें से कोई भी गृह जो लग्नमें स्थित हो तो ज्वर पीड़ा और धनहानि हो करे है, इसी प्रकार पापगृह महित चन्द्रमा लग्न में स्थित हो तो ज्वर की पीड़ा और धनक्षय करता है और जो शुभगृहों से युक्त पुष्ट शरीर वाला चन्द्रमा लग्न में स्थित हो तो वह सौख्य को करता है, युग्म शुक लग्न में हों तो धन धान्य के लाभ को करते हैं ॥ ५ ॥

धन भाव में स्थित गृहों का वर्णन ।

चन्द्रज्ञजीवास्फुजितो धनस्था धनतामं राज्यसुखं च दद्युः ।

पापा धनस्था धनहानिदाः स्युनृ पाद्भयं कार्यविधातमार्किः ॥६॥

भा०—जो शुभगृह पंचम घर में स्थित हो तो धन, धन, सुख, इनके मगृहों को देते हैं, पंचम स्थान में स्थित शक्र इनको देता है तथा पापगृह जो पंचम स्थान में स्थित हो तो धन, धन, सुख, बुद्धि इनको हरने वाला होने हुए और भय, राग और क्रोध को देते हैं ॥ ६ ॥

छठे भाग में स्थित ग्रहों का फल ।

पष्टं पापा वित्तलाभं सुखातिं भौमोऽत्यन्तं हर्षदःशत्रुनाशम् ।

सौम्याभीति वित्तनाशं कलिं च चन्द्रो रोगं पापयुक्तः करोति ॥

भा०—जो छठे स्थान में पापग्रह स्थित हों तो शत्रु का लाभ और सुख की प्राप्ति करने हैं और भयानक अत्यन्त हर्ष को देता और शत्रुओं का नाश करता है, पंचम भाग में स्थित शुभ ग्रह धननाश, और फलह को करते हैं, तथा पाप ग्रह चंद्रमा रोग को करता है ॥ १० ॥

सातवें भाग में स्थित ग्रहों का फल ।

सपापःशशीमप्तमोव्योधिभीतिस्त्रलःस्त्रीविनाशं कलिंभृत्यभीतिम्

शुभाःकुर्वते विचालाभं सुखातिं यशोराजमानोदय बन्धुसौख्यम्

भा०—पाप गृह के सहित चन्द्रमा सप्तम स्थान में स्थित हो तो व्याधि (रोग) भय को करता है, पापगृह सातवें स्थान में स्थित हो तो स्त्री का नाश, सेवक से भय को करता है, तथा शुभगृह जो सातवें स्थान में स्थित हों तो धन लाभ, और सुख की प्राप्ति, यश, राजा से मान का उदय, बन्धुजनों से सौख्य इनको करते हैं ॥ ११ ॥

आठवें भाग में स्थित गृहों का फल ।

चन्द्रोऽष्टमे निधनदःखलखेटयुक्तःपापाश्चतत्रमृतितुल्यफलं चविद्यात्

सौम्याःस्वधातुवशतोरुजमर्थहानिं मानक्षयंमुथशिलेशुभजंशुभश्च ।

भापार्थ—जो वर्ष प्रवेश समय पापगृहयुक्त चन्द्रमा आठवें स्थानमें स्थित हो तो मरण को देता है, और यदि केवल पापगृह स्थित हों तो मरण तुल्य फल देते हैं ऐसा जानना तथा जो शुभगृह आठवें स्थान में स्थित हों तो

करने हैं और जो वज्र से स्मित शुभग्रह लाभ स्थान में विद्यमान हों तो वे अपने फलको समझी करने हैं ॥ १५ ॥

चारहवें स्थान में स्थित ग्रहों का फल ।

पापा व्यये नेत्ररुजं विवादं हानिं धनानां नृपतस्करादेः ।

सौम्या व्ययं सद्वायवाहारमार्गं कुर्युःशनिर्हर्षविवृद्धिमत्र ॥ १६ ॥

भा०— जो पापग्रह चारहवें स्थान में स्थित हों तो नेत्र रोग विवाद, और राजा व और शाहिकों में धन हानि को करने हैं, और जो शुभग्रह चारहवें भाग में स्थित हों तो अच्छे व्यवहार के मार्ग में स्वर्ण कराने हैं. और जो शनिश्चर ग्रहों व्ययभाव में हों तो हर्ष समेत बहुत धनको देगी हैं ॥१६॥

अध्याय की समाप्ति ।

श्रीगर्गान्वयभूषणो गणितविचिन्तामणिस्तत्सुतो

ऽनन्तोऽनन्तमतिर्व्यधात्स्वलमतध्वस्त्येजनुःपद्धतिम् ।

तत्सनुःस्वनु नीलकण्ठ- विबुधो विद्वच्छिद्रवाऽनुज्ञया

भावस्थग्रहपाकदोस्थ्यसुखतायुक्तं फलं सोऽभ्यधात् ॥१७॥

इति श्रीनीलकण्ठ्यां चर्ष तन्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

श्रीगर्गान्वयभूषणो के यश में भूषण ज्योतिष शास्त्र के ज्ञाता. चिन्तामणि- नाम होता भया, उसका पुत्र अनन्त मतिवदना अनन्त नामक भया, जिसने दुष्टों के मतध्वंस के अथ जन्मपद्धति को बनाया, उसका पुत्र विशेष विद्वान नीलकण्ठ नामक विद्वान शिवजी की आज्ञा से भावस्थ ग्रहों की दशा के अशुभ व शुभ फलको कहता भया ॥ १७ ॥

इति श्री-ज्योतिर्विन्ध्ययित्ता नागवर्णमसादकृत्यायां ताजिकनीलकण्ठीभाषाटी- कायां अन्तर्दशा तथा भावरभ्रहफलाध्यायः सप्तम् ॥ ७ ॥

अथ मासदिनप्रवेशफलाष्टमोऽध्यायः प्रारभ्यते ।

मासार्कस्य तदासन्नपतयर्केण सहांतरम् ।

कली कृत्याथत्याप्तं दिनाद्येन युतो नितम् ॥ १ ॥

का स्वामी भूतः लोभ पहले है, परा भी अपिफारियों का निश्चय नहीं है
 इस प्रकार मांश और दिनेश का निश्चय करके उनका फल वर्षेश के समान
 कहना, इस प्रकार परिदृशों करके विचार करना योग्य है ॥ ६ ॥

मास फल ।

लग्नांशाधिपतिर्विलग्नपनवांशेशेन मंत्रीदृशा दृष्टो वा सहितः
 शशी च यदि तो मंत्रीदृशाऽऽलोकते । तेस्मिन्मासि तनो मुखं
 बहुविधै नैरुज्यमित्यं फलं तावद्यावदिनेस्युरित्थमथ तां संचार्य
 वान्यं फलम् ॥ ७ ॥

भाषार्थः—मासलग्न के नवांश का स्वामी मास लग्नेश नवांश के स्वामी
 के साथ मित्रता करता हुआ देखता हो, अथवा युक्त हो और उन दोनों
 स्वामियों को चन्द्रमा मित्र दृष्टि से शरलोकन करे तो उस मास में नाना
 प्रकार का सुख और बदन में निरोगता होती है, इस प्रकार मास फल तब तक
 होता है जब तक यह ग्रह (लग्ननवांशस्वामी, लग्नाधीशानवांशस्वामी, चन्द्रमा)
 इस प्रकार के होय अर्थात् इन तीनों प्रतिदिन चलते हुएों का राशि संचार
 होय तब तक शुभ फल कहना ठीक है ॥ ७ ॥

शनिष्ट फल ।

तौ चेन्मृत्त्रदृशा मिथश्च शशिना दृष्टो मनोदुःखदो रोगाधि-
 क्यकरो च कश्चिदनयोर्नीचेऽस्तगो वा यदि । कष्टात्सौख्यमिह
 द्वयं यदि पुनर्नीचास्तगं स्यान्मृत्तिस्मृत्यब्दोद्भवरिष्टतो मृत्तिसमं
 स्यादन्यथा ऊचिरे ॥ ८ ॥

भा०—यदि वे लग्नांशनाथ लग्नेशांशनाथ दोनों परस्पर शत्रु दृष्टि से
 देखते हों और उन दोनों को चन्द्रमा भी शत्रु दृष्टि से देखता हो तो मनो
 दुःख (चिन्ता को देने हुए रोग को बढ़ाते हैं तथा पूर्वोक्त दोनों स्वामियों
 के बीच जो कोई एक नीच राशि को प्राप्त हो अथवा अस्त होगया हो तो
 वह कष्ट को लेकर पीछे से सौख्य देता है, अथवा वे दोनों नीच राशि में

लग्नांश के पक्ष से उत्पन्न भाव के शुभाशुभ फल का वर्णन ।

निर्वला व्ययपष्ठाष्टांशपाः सत्फलदायकाः ।

अन्ये सवीर्याः शुभदा व्यत्यये व्यत्यय स्मृतः ॥ ११ ॥

भा०—यदि अष्टिकारक चारहवें, छठे, आठवें इन भावों के नवांश स्वामी निर्बल (बल से रहित) होंगे तो उस भाव से शुभ फल के देने वाले फलें हैं, और इनसे शेष भावों के नवांश स्वामी यदि अष्टि हों तो उस उम भाव से शुभ फल देने वाले होंगे हैं, और जो फलें दुःख से विरुद्ध हों तो उनका होगा है ॥ ११ ॥

अधिकारी गृहों का विरुद्ध स्थान में स्थित अष्टिफल का वर्णन ।

लग्नेशमासेशमशेमुं चाधिशःषडष्ट्योपगताः सपापाः ।

दृष्टाःखलःशत्रुदशात्रमासेव्याध्यादिविद्विड्भयदुःखदाःस्युः॥१२॥

भा०—यदि लग्नेश्वामी, मासेश्वामी, वर्षेश्वामी, और मुखहा स्वामी ये चारों पापगृहों में युक्त होंकर, छठे वा आठवें स्थान में स्थित हों, और इन चारों का पापगृह शत्रु दृष्टि में देखने हों तो उम मास में व्याधि आदि, व शत्रु भय और दुःख को देते हैं ॥ १२ ॥

केन्द्रत्रिकोणायगतास्तु लग्नमासाऽब्दपा वीर्ययुतानराणाम् ।

नेरुज्यशत्रुक्षयराज्यलाभमानोदयात्यद्भुतकीर्तिदाः स्युः ॥१३॥

भाषार्थ—वर्षलग्नेश, मासेश, और वर्षेश्वर, ये तीनों बलवान होकर केन्द्र (१११७१०) स्थान में, त्रिकोण ६१५ स्थान और एकादश स्थान इन स्थानों से किमी स्थान में स्थित हों वे मनुष्य का आरोग्यता, शत्रु क्षय, राज्यलाभ, मान का उदय, और अति अद्भुत कीर्ति इनको देते हैं ॥ १३ ॥

मतमतान्तर वर्णन ।

इन्धिहा लग्नपो राशीयों बली तत्र हृद्पाः ।

दशेशाः स्वाँशलुल्याहैरित्युक्तं केशिचदागमात् ॥ १४ ॥

भाषार्थ—मासमुखहा, मास लभ इनकी जो बली राशि उस राशि में जो

मीनरे, एडे, ग्यारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो' तो वह दिन में विनाश, मान, धन, और यश इन्हीं से युक्त सुख को देने हैं ॥१८॥

एडे, आठवें, चारहवें आदि स्थान में स्थित दिनेशादिकों का फल ।

पडष्टरिफोपगतादिनाऽञ्जमासेन्विहेशा . स्वलखेटयुक्ताः ।

गदप्रदामानयशोहराश्च केन्द्रत्रिकोणायगताः सुखाप्त्ये ॥१९॥

भा०—दिनेश वर्षेश, मानेश, सुपदेश, ये चारों पापगुहों से युक्त होकर एडे, आठवें, और चारहवें इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो' तो वह रोगों को देने हुए मान और यश को हरते हैं, और जो दिनेश आदि चारों केन्द्र १ । ४ । ७ । १० वा त्रिकोण ६ । ५ वा ग्यारहवें इन स्थान में से किसी स्थान में स्थित हो तो सुख की प्राप्ति होती है ॥ १९ ॥

दिन लग्नराश दारा फल ।

लग्नांशकः सौम्यस्वर्गैः समेतो दृष्टोपि वा मित्रदृष्टेन्दुनापि ।

नेरुज्यराज्यादिशरीपुष्टर्मासोक्तिदुःखमतोन्यथात्वे ॥ २० ॥

भा०—जो दिन लग्न नवांश राशि शुभगुहों से युक्त वा मित्रदृष्टि से दृष्ट होय, तो वह आरोग्यता, राज्य आदि शरीरसुष्टि को देता है, और जो नक्त मकार से विपरीत हो तो (तीं चेन्द्रबुद्, शा०) इस मासोक्त रीति से फल जानना चाहिये ॥ २० ॥

उक्त रीति से भाव फल के अर्थ का अति देश ।

यदंशकः सोम्ययुतेक्षियो वा स्निग्धेक्षणाद्भावजसोख्यकृत्सः ।

दुःखप्रदः प्रोक्तवदन्यथात्वे सर्वेषु भावेष्वियमेव रीतिः ॥२१॥

भा०—जिस भाव के नवांश राशि शुभगुहों से युक्त अथवा मित्रदृष्टि से देखाजाता हो तो उस भाव के उत्पन्न सौख्य का करने वाला होता है, अन्यथा दुःख देता है, यह रीति सब भावों के विचार में जाननी ॥ २१ ॥

एडे और चारहवें भाव में विशेष वर्णन ।

पष्ठांशकस्सौम्यतुरोगदः पापयुक्शुभः

व्यथांशे शुभयुग्दृष्टे सद्व्ययः पापतस्त्वसत् ॥ २२ ॥

भा०—जो छठे भावका नवांश राशि शुभग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो वह सौभाग्य देता है और जो पापग्रहों से युक्त हो तो वह शुभफलको देता है, और जो चाण्डवे भावका नवांश राशि शुभग्रहों से युक्ता वा दृष्ट हो तो अच्छे काममें रचना स्वर्ण होता है, पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो निकृष्ट काम में रत होता है ॥ २२ ॥

मत्तम भाव में विशेष फल ।

जायाशः सौम्ययुग्दृष्टः स्वस्त्रीसौख्यविलासकृत् ।
 पापैर्गृहकलिं दुःखं पापन्तस्थे मृतिंवदेत् ॥ २३ ॥
 शुभमध्यस्थिते त्यशे बहुलं कामिनीसुखम् ।
 मन्मथां रतिं गुरावन्यस्वगेऽन्यासु रतिं वदेत् ॥ २४ ॥

भा०—यदि मत्तम भावका नवांश राशि शुभग्रहों से युक्त अथवा दृष्ट हो तो सौभाग्य देता है और जो पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो दुःख देता है, और जो पापग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो मृत्तम भाव में रति (रमण) करे और शुभमध्यस्थिते त्यशे बहुलं कामिनीसुखम् (शुभमध्यस्थिते त्यशे बहुलं कामिनीसुखम्) मन्मथां रतिं (मन्मथां रतिं) करे और गुरावन्यस्वगेऽन्यासु रतिं (गुरावन्यस्वगेऽन्यासु रतिं) करे ॥ २४ ॥

शुभ भाव का फल ।

शुभयोगे मृत्युर्गोष्मोष्णैर्गृह्णन्मरणं भागं ।
 निश्च निश्चं मत्तेः सौम्यं वर्षनगनाऽनुमारतः ॥२५॥

भा०—जो शुभयोगे मृत्युर्गोष्मोष्णैर्गृह्णन्मरणं भागं (शुभयोगे मृत्युर्गोष्मोष्णैर्गृह्णन्मरणं भागं) निश्च निश्चं मत्तेः (निश्च निश्चं मत्तेः) सौम्यं वर्षनगनाऽनुमारतः (सौम्यं वर्षनगनाऽनुमारतः) ॥२५॥

कर्तरी योग का फल ।

द्विद्वादश घला हानि व्ययेसौम्याः शुभव्ययम् ।

कर्तरी पापजा रोगं दरोति शुभजा शुभम् ॥२६॥

भा०—जिसके दिन प्रवेश लग्न से दूसरे और पाठवें घरमें पापग्रह स्थित हों तो वह उमरे घनका लय करते हैं, और जो चाग्हवें घर में शुभग्रह स्थित हों तो उषाम काम में खर्च होगा है, पापग्रह से उत्पन्न कर्तरीयोग रोग करता है, और शुभग्रह तबित कर्तरीयोग शुभ फलको देता है ॥ २६ ॥

चन्द्रहन शरिष्ट योग ।

लग्नेष्टमे वा क्षीणेन्दुमृत्युदः पापहृग्युत ।

रोगो वा ग्रहणं वापि रिपुतः शस्त्रभीरपि ॥२७॥

भा०—जो दिन प्रवेश लग्नमें अथवा दिन प्रवेश लग्न से आठवें स्थान में पापग्रहों में श्रेष्ठ वा युक्त होकर क्षीण चन्द्रमा स्थित हो तो उस प्राणी के अर्थ मृत्यु को देता है, अथवा वह रोगी होकर वैशियों से पकड़ा जाता है और किसी हथियार से भय भी होता है ऐसा जानना ॥ २७ ॥

पुनःचन्द्रकृत यनिष्ट र्गान ।

चन्द्रे सभौमे निधनारिसंस्थे नृणां भयं शस्त्रकृतं रिपोर्वा ।

पापैःसुखस्थैःपतनं गजाश्वायनात्तनौ स्याद्वहुला च पीडा ॥२८॥

भा०—जो वर्ष लग्न से आठवें व छठे स्थानमें मंगलसहित चन्द्रमा रिगत हो तो मनुष्यको हथियारसे भय वा शत्रुभय से होता है, और जो पापग्रह चतुर्थ स्थान में रिगत हो तो हाथी वा घोड़े की सवारी से गिरना होता है कि जिससे शरीर में बड़ी भारी पीडा होती है ॥ २८ ॥

शुभाशुभ फल वर्णन ।

शुभा द्यूने विजयदा द्यूतादर्थे सुखावहा ।

नवमे धर्मभाग्यार्थराजगौरवकीर्तिदाः ॥२९॥

भा०—जो शुभग्रह दिन प्रवेश लग्न से सप्तम स्थान में स्थित हों तो वे जुवां से विजय को देते हैं, और जो दूसरे घरमें स्थित हों तो सुखको प्राप्त

अथमृगयादि विचारानामनवमोऽध्यायः प्रारभ्यते ।

मृगयादि विचार ।

सर्वायां कुजज्ञानृपाखेटसिद्धयै न सिद्धिर्यदा वीर्यहीनाविमोस्तः ।
जलाखेटमाहुः सर्वांगैर्ग्रहैर्जलाख्यैर्नगाख्यैर्नगाखेटमाहुः ॥ १ ॥

भाषार्थः—(मयम मृगया विचार करते हैं) जो मङ्गल और भूद्र ये दोनों फलित हों तो यह राजाओं के शिकार की सिद्धि के अर्थ होते हैं, तथा जो दोनों निर्बल हों तो मृगया (शिकार) की सिद्धि नहीं होती है, मन्मथक राशियों (कर्क, वृश्चिक, मीन) करके जल सम्बन्धी शिकार को कहते हैं और पर्यन्त सप्तक राशियों (मे. मि. घ.) करके पर्यन्त सम्बन्धी शिकार को कहते हैं ॥ १ ॥

लगास्तनार्यो केन्द्रस्थो निर्वलो फलेश दायिनी ।

मृगयोक्ता शुभफला वीर्याब्धौ यदि तौ पुनः ॥ २ ॥

भा०—लग्न और सप्तम स्थान स्वामी ये दोनों यदि निर्वल होकर पड़ने, चौथे, सातवें, दशवें इन स्थानों में से किसी स्थान में विराजमान हों तो यह मृगया वनेश को देने वाली होती है, पुनः यदि यह दोनों बली होकर केन्द्र में विराजमान हों तो मृगया शुभ फल देती है ॥ २ ॥

भोजन चिन्ता ।

लग्नाधिपो भोज्यदाता सुखेशो भोज्यमीरितम् ।

बुभुक्षा मदपः कर्मपतिर्भोक्तेति चिन्तयेत् ॥ ३ ॥

भा०—लग्न स्वामी भोजन का देने वाला, चौथे घर का स्वामी भोजन की वस्तु आचार्यों ने कही है, सप्तम भाव का स्वामी भोजन को इच्छा, दशम घर का स्वामी भोजन कर्ता, यह विचार करे ॥ ३ ॥

लग्ने लाभे च सत्खेटैर्युते दृष्टे च भोजनम् ।

जीवे लग्ने सिते वापि सुभोज्यं दुःस्थितावपि ॥ ४ ॥

जाति के घर में भोजन मिलनायों से तथा है और जो चौथे घर का ग्रामों
बलवान होकर चौथे घर में विराजमान हो तो भोजन सुन्दर मिलता है तथा
जो चौथे घर का ग्रामों चरगाश में विरमान हो तो उनके घर भोजन
प्राप्त हो, फिर राशि में विराजमान हो तो एक घर, द्वितीय घर में
विराजमान हो तो दो घर भोजन प्राप्त होते ॥ ६ ॥

मूलत्रिकोणमे खेटे लगने पितृगृहेऽशनम् ।

मित्रात्तये मित्रमस्ये शत्रुगृहेऽरिगृहे ॥ १० ॥

शुभेक्षितयुते लगने बलाद्भये स्वगृहे भुजि ।

गृहराशिस्वभावेन यत्नादन्यन्त्र चिन्तयेत् ॥ ११ ॥

भाषार्थः—जो ग्रह मूलत्रिकोण में विराजमान होकर लग्न में बड़ी तो तो
पिता के घर में भोजन मिलता है, मित्र के राशि में विराजमान होने से मित्र
के घर में भोजन मिलता है, दुश्मन के घर में विराजमान हो तो दुश्मन के घर
में भोजन प्राप्त होता है ॥ १० ॥ तथा जिसके भोजन समय में शुभ ग्रहों से
दृष्ट वा युत और बल से पट्ट पेशा लग्न हो तो अपने घर में भोजन प्राप्त
होता है, पण्डित को उचित है कि ग्रहों के राशि स्वभाव से यत्र पूर्वक
भोजन पदार्थों का चिन्तन करे ॥ ११ ॥

ग्रहों के बल द्वारा भोजन के शक्ति ।

तिलान्नमर्के हिमगो तुतंदुला भोमे गमुराश्चणकाश्च भोज्यम् ।

बुधे समुद्रगाःखलु राजमापा गुरो सगोधूमभूजिः सवीये ॥१२॥

शुके यवा वाजरिका युगंधराः शनो कुलित्थादि समापमन्नम् ।

भोज्यं तुपात्रं शिखिराहुवीर्याच्छुभेक्षणा लोकनतःसहर्षम् ॥१३॥

भाषार्थः—जो लग्न में बल सहित सूर्य हो तो तिलों के लड्डुओं का
भोजन प्राप्त होवे, चन्द्रमा हो तो चावल, मसूर बली हो तो मसूर और
चना, बुध बलवान हो तो मूँग सहित उड़द लोविया का भोजन मिले,
गुरु बली हो तो गेहू का भोजन प्राप्त होवे ॥ १२ ॥ शुक्र बलवान हो

कथामो का वर्णन करना, और शिवान्तप, शक्रद्वार, आदिकों में देव-
मूर्तियों का दर्शन और राजानीय पितृ भाइयों का समागम इन सबों को
देखना है ॥ १५ ॥ १६ ॥

मदुबन्धुमंगं च मिते जलानां पारे गतिं देवरतिं विलासम् ।

शनावरणयाद्रिगतिश्च नीचैः संगं च राहो शिखिनीत्यमवेम् ॥ १७ ॥

भा०—जो शुक्र लगनांश, या लग्न में हो तो जान शर्षों के तट पर
गमन, देवरति और विनाम को देखना है, एवं शनि लग्न के नवांश या लग्न
में हो तो स्वप्न में चन्द्रमण, परंतु पर चटना, और नीचों की संगति को
देखना है, इसी प्रकार राहु और केतुका स्वप्न दर्शन जानना ॥ १७ ॥

स्वप्न में चन्द्रमा द्वारा स्त्री रमण ।

सहजधीमदनायरिपुस्थितो यदि शशी गुरुभानुसितेक्षितुः ।

नवमकेद्रगतेशु शुभग्रहेष्ववलया मनुजो रमते तदा ॥ १८ ॥

भा०—नीचं, पांचवें, गानवें, ग्यारहवें, और छठे इन स्थानों में से
किसी स्थान में यदि चन्द्रमा स्थित हो और उसके गुरु, सूर्य, शुक्र, ये तीनों
देखने हों और नवमें, पहले, चौथे, गानवें, दशवें इन स्थानों में शुभग्रह हों
तो स्वप्न में सुन्दर प्यारी स्त्री के साथ रमण करता है ॥ १८ ॥

ग्रन्थकार के वंश का वर्णन ।

असिदसीमगुणमंडितपंडिताश्रोव्याख्यद्भ्रजंगपगवोःश्रुतिवित्सुवृत
साहित्यरीतिनिपुणो गणितागमज्ञश्चिन्तामणिर्विपुलगर्गकुलावतंसः ।

भा०—अपरिमित गुणों से भूषित जो परिदत्त उन्हीं में श्रेष्ठ, महा-
भाष्य के पढ़ाने वाले, वेदविदित कर्मों के जानने वाले अन्ते आचरणों के करने
हार, साहित्य रीति में निपुण गणितशास्त्र के ज्ञाता, सुन्दर गर्गकुल के भूषण
रूप ऐसे चिन्तामणि नामक होते भये ॥ १९ ॥

तदात्मजो ऽनन्तगुणोत्थमन्तो योधोक्तदुक्तीः किल कामधेनुम् ।

सत्तुष्टये जातकपद्धतिं च न्यरूपयद्दृष्टं मतं निरस्य ॥ २० ॥

भा० — उन चिन्तामणि के पुत्र अनन्त गृणों से युक्त अनन्त नाम
जिन्होंने ने सज्जनों के आनन्दार्थ ज्योतिषशास्त्र में प्रसिद्ध पंचांग (तिमा
का मायक कामधेनु नामक ग्रन्थ के ऊपर तिलक बनाया, और दुष्टों के म
को दूर कर जानकपद्धति की निमसे उत्पन्न बालक व कन्याओं के जन्म
का शुभागुण फल कडा जाता है, तिसको निरूपण करते भये ॥ २० ॥

पद्मांशयाऽसावि ततो विपश्चित् श्रीनीलकण्ठः श्रुतिशास्त्रनिष्ठः ।
विद्वन्निवर्त्तितकर व्यधासीत् समाविवेकं मृगयावतंसम् ॥२१॥

भा० — उन अनन्त देवज से पद्मानाम्री माता ने विद्वान् वेद वेदांगों के
ज्ञाता नीलकण्ठ नामक पत्रको उत्पन्न किया जो कि विद्वान् शिष्यी की पी
का करने वाला निममें मृग या आदि का वर्णन भली भाँति किया ऐसे वर्ण
विषय को रचना भया ॥ २१ ॥

वर्ष तन्त्र का पूर्ति समय ।

शाके नन्दाप्रधानेन्दुमिते आश्विनमासके ।

शुक्लशुभ्यां ममानंत्रं नीलकण्ठबुधोऽकरोत् ॥२२॥

भा० — श्री महाशय शाकितराहनजी के शाके १५०६ आश्विन शु
२२ के श्री नीलकण्ठी उम वर्ष तन्त्र को पूर्ण करते भये ॥ २२ ॥

श्री ताजिक नीलकण्ठी भाषाटीकायां वर्ष तन्त्र समाप्तम् ।

अथ नृवीर्यं प्रहननंत्रं प्राग्भ्यते ।

२००१००

पुस्तक को अन्त ।

श्री ताजिक नीलकण्ठी भाषाटीकायां समाप्तम् ।

अथ नृवीर्यं प्रहननंत्रं प्राग्भ्यते ॥२३॥

श्री ताजिक नीलकण्ठी भाषाटीकायां समाप्तम् ।

भाषार्थ—द्वैवद को जो देव से शशाङ्ग फल करने की आज्ञा हो तो वही के संचार से मनुष्यों का शशाङ्ग फल यह सकता है ॥ १ ॥

ब्रह्मा से प्रश्न शौर्य का भी परम्परा ।

अश्रौपीन्व पुरा विष्णोर्जोनार्थं समुपस्थितः ।

वचनं लोकनाथोपि ब्रह्मा प्रश्नादिनिर्णयम् ॥ २ ॥

भा०—पूर्व जन्म में जो फल का परिणाम जानने की इच्छा हुई तब विष्णु के समीप गये वहाँ विष्णुजी के मुख कमल से प्रश्न शौर्य का निर्णय सुनकर ब्रह्माजी ने प्रश्नादि निर्णय को ज्योतिष द्वारा जगत में प्रसूत किया ॥ २ ॥

प्रश्न समय नियम ।

तस्मान्नरःकुमुमररनफलाग्र हस्तःप्रातःप्रणम्यवरयेदपि प्राङ्मुखस्थः
होरांगशास्त्रकुशलान्हितकारिणश्चमहृत्यं देवगणकान्सकृदेवपृच्छेत्

भा०—इस कारण मनुष्य प्रश्न करने के समय हाथ में फूल, रत्न फल आदि वस्तु लीके प्रातःसमय पूर्वमुख घंटे होरांग शास्त्र में कुशल और हित करने वाले ज्योतिषी पंडितों को एकत्र कर प्रश्न निमित्त वरणा करें, और बाँधे अक्षरों से एक ही बार प्रश्न करें ॥ ३ ॥

किमकी चाणी मिथ्या नहीं होती उसका वर्णन ।

देशभेदं ग्रहगणितं जातकमवलोक्य निरवशेषमपि ।

यः कथयति शुभाशुभं तस्य न मिथ्या भवेद्ब्राणी ॥ ४ ॥

भा०—जो प्रश्न समय पंडित देशभेद से ग्रह गणित करके अवशेष तम प्रकार का ग्रह गणित भाव बलाबल तथा स्थानादि ग्रहगणित व जातकादि और भी सम्पूर्ण प्रश्न गणित को भी देखकर अच्छे प्रकार का विचार कर शुभ वा अशुभ फल कहता है, उसकी चाणी मिथ्या नहीं होती है ॥४॥

पूश्न कथन में योग्य और अयोग्य पूश्नकर्ता ।
 क्षुद्रपाखण्डधूर्तेषु श्रद्धाहीनोपहासके ।
 ज्ञानं न तथ्यतामेति यदि शंभुः स्वयं वदेत् ॥५॥
 भक्तार्तदीनवदने दैवज्ञो न दिशेद्यदि ।
 विफलं भवति ज्ञानं तस्मारोभ्यः सदावदेत् ॥६॥

भा०—क्षुद्र. (कृपण, अधम, क्रूर) पाखंडी, धूर्त (मायावी, चौर)
 और श्रद्धाहित उपहासक (हंसी से पूछने वाला) इन अयोग्य पुरुषों के
 अर्थान् इनके पूछने में पूश्न ज्ञान यथार्थ नहीं होता, चाहे रायं शंभु उभा
 देते ॥५॥ तथा भक्त, दुःखी, दीनवदन, इनको जो दैवज्ञ नहीं मतलाता है, तो
 उनका ज्ञान विकल होना है इस कारण इनके पूश्न को अपश्य मत
 करे ॥ ६ ॥

अनुरयमनृजुर्वा प्रथा पूर्वं परीक्ष्य लग्नवलात् ।
 गणकेन कलं वाच्यं देवं तच्चित्तगं स्फुरति ॥ ७ ॥

भा०—परिव पृथम लग्न वला से पूश्नकर्ता के चित्त की परीक्षा कर
 कि वह लग्न वला (गीता) है या कुम्भिल है, यह पहिले परीक्षा कर
 पूश्न कर करे. लग्नवला से पूश्नकर्ता के चित्त की गति और देव (कर्म
 का) प्रमाण होता है ॥ ७ ॥

लग्नान्ते गणिते शनो केन्द्रस्थ ज्ञे दिनेशगश्मिगते ।
 भौमजनेः समदशा लग्नगचन्द्रेऽकृजुः प्रथा ॥ ८ ॥
 लग्ने शुभप्रदधृते मङ्गलः क्रौगन्विते भवेत्कुम्भिलः ।
 लग्नेः शो भौमदशा सिग्धुष्टया च मङ्गलोऽयम् ॥ ९ ॥

भा०—लग्नान्ते गणिते शनो केन्द्रस्थ ज्ञे दिनेशगश्मिगते ।
 भौमजनेः समदशा लग्नगचन्द्रेऽकृजुः प्रथा ॥ ८ ॥
 लग्ने शुभप्रदधृते मङ्गलः क्रौगन्विते भवेत्कुम्भिलः ।
 लग्नेः शो भौमदशा सिग्धुष्टया च मङ्गलोऽयम् ॥ ९ ॥

जानना, तथा लग्न में शौच मार्गों स्थान में शुभग्रहों की रहि हो वा चन्द्र गुरुकी रहि हो तो यह प्रश्नकर्ता लग्न स्वभाव है ऐसा जानना ॥ ६ ॥

यदि गुरुबुधयोरेकः पश्चत्यम्नाधिपं च रिपु दृष्टया ।

तत्कृदिलः प्रष्टा खल्वनयो रेकमतयोःमाधुः ॥१०॥

सम्यग्विचार्य लग्नंत्रयात्प्रश्नं सकृद्यथाशस्यम् ।

यस्त्वंकंठेऽपि तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी ॥११॥

भा०— जो गुरुस्पति वा ये दोनों लग्नमा स्थान के स्वामी को शत्रु, दृष्टि से देखते हो तो प्रश्नकर्ता कृदिल जानना तथा इन दोनों में से एक भी रिपु दृष्टि से देखना हो तो प्रश्नकर्ता का माधु स्वभाव जानना ॥ १० ॥ उल्लेखित वेत्ता पण्डित अन्वये प्रकार यथाशास्त्रानुसार लग्न को विचार कर एक ही प्रश्न को पहना है उसकी वाणी मिथ्या नहीं होती है ॥ ११ ॥

बहुत प्रश्नों के विषय में विधि ।

बहूनि यदि प्रश्नानि युगपद्यदि पृच्छति ।

प्रष्टा तेषां विधिवक्ष्ये शास्त्रतो लोकतुष्टये ॥१२॥

आतिमं लग्नतो चद्रस्थानाद्द्वितीयकम् ।

सूर्यस्थानात्तृतीयं स्यात्सूर्यं जीवग्रहद्वेत् ॥१३॥

बुधभृग्वोर्द्वितीयः स्यात्तद्व्यहात्पंचमं पुनः ।

राश्यनुरूपं कथयेत्संज्ञाध्यायोक्तवद्बुधः ॥१४॥

भा०— यदि प्रश्नकर्ता एकही समय में बहुत प्रश्न करे है, तो उसकी विधिको शास्त्रानुसार लोक प्रमन्नतार्थ वर्णन करता है ॥ १२ ॥ पहला प्रश्न लग्न से जानना, दूसरा चन्द्रमा से तीसरा सूर्य के स्थान से, चौथा बृहस्पति के स्थान से विचारना ॥ १३ ॥ अनन्तर पाँचवां प्रश्न बुध और शुक्र इन दोनों में जो बली हो उसको कहना, यहाँ राश्यनुसार संज्ञाध्याय में कहे प्रकार धातु, रूप, रंग, आकार, गुण आदि के प्रभाव से वर्णन करना इस प्रकार पण्डित विचार करे ॥ १४ ॥

राशि चक्र का पूजन ।

राशिचक्रं समम्यर्च्य फलैः पुष्पैः सरत्नकैः ।

प्रष्टा सुभूमौ देवज्ञानकें पृच्छेत्प्रयाजेनम् ॥१५॥

भा०—फल, फूल और रत्नों से पवित्र भूमि पर बैठकर मन्त्रकी राशि चक्र का पूजन करके देवज्ञ (पण्डित) से अपने प्रयोजन को पूछना सूचित है ॥ १५ ॥

दीप्तादि चवस्थाओं का महात्म्य ।

दशभेदं ग्रहाणां च गणितं भावजं तथा ।

विमृश्येकं च कथयेन्नानेकं प्राह पद्मभूः ॥१६॥

दीप्ताद्यं दशभेदं च ग्रहाणां भावजं फलम् ।

विचार्य प्रवदेवस्तुतस्योक्तं नान्यथा भवेत् ॥१७॥

भा०—ग्रहों के दश भेदों को गणित तथा भाव से उत्पन्न विचार करके प्रश्न को हल करने पर एक उत्तर नहीं कहें ऐसा ब्रह्माजी ने कहा है ॥ १६ ॥ सो ही ही दश भेद और ग्रहों के भाव से उत्पन्न फलों का विचार कर जो फल हमें देना चाहें मिथ्या नहीं होता है ॥ १७ ॥

दीप्तादि चवस्थाओं के नाम ।

दीप्तादीनांश्च मुदिनः स्वस्थः सुप्तो निर्पाडितः ।

मूर्च्छितः परिधीनश्च सुवीर्यश्चाधिर्वीर्यकः ॥१८॥

भा०—दीप्ता, १ मुदिन, २ स्वस्थ, ३ सुप्त, ४ निर्पाडित, ५ मूर्च्छित, ६ परिधीन, ७ सुवीर्य, ८ अधिर्वीर्य ये दश भेद हैं ॥ १८ ॥

दशभेदों का अर्थ ।

दीप्तादीनांश्च मुदिनः स्वस्थः सुप्तो निर्पाडितः ।

मूर्च्छितः परिधीनश्च सुवीर्यश्चाधिर्वीर्यकः ॥१९॥

दीप्तादीनांश्च मुदिनः स्वस्थः सुप्तो निर्पाडितः ।

मूर्च्छितः परिधीनश्च सुवीर्यश्चाधिर्वीर्यकः ॥२०॥

सुवीर्यः कथितः प्राज्ञैः स्वोच्चाभिमुखसंस्थितः ।

अधिवीर्यो निगदितः सुरश्मिः शुभवर्गगः ॥ २१ ॥

भा०—अपने उच्च राशि में स्थित ग्रह योच कहा जाता है नीच राशि में हीन कहाता है, मित्र व पर में स्थित ग्रहिन और अपनी राशि में स्थित ग्रह स्वस्थ ॥ १९ ॥ मर के पर में स्थित ग्रह सुख और अन्य पाप ग्रहों में नीचा हुआ ग्रह पीडित तथा नीचाभिनापी ग्रहहीन और व्यस्तजन ग्रह मुपित ॥ २० ॥ तथा उच्चाभिनापी ग्रह सुवीर्य पण्डितों ने कहा है, और सुन्दर रश्मि व शुभवर्ग में प्राप्त ग्रह अधिवीर्य संशक कहा जाता है ॥ २२ ॥

दीप्तादि अरम्भाओं का फल ।

दीप्ते सिद्धिश्च कार्य्याणां दीने दुःखःसमागमः ।

स्वस्ये कीर्तिस्तथा लक्ष्मीरानन्दो मुदिते महान् ॥२२॥

सुमे रिपुभयं दुःखं धनहानि निपीडिते ।

मुपिते परिहीने च कार्यनाशो ऽर्थसंक्षयः ॥ २६ ॥

गजाश्वकनकावाप्तिं सुवीर्ये रत्नसंपदः ।

अधिवीर्ये राज्यलब्धिर्ग्रहमित्रार्थसंगमः ॥२४॥

भा०—दीप्त अरम्भा में स्थित ग्रह कार्य को सिद्धि करना है और दीन में दुःखका आगम स्वस्थ में कीर्ति तथा लक्ष्मी मुदित में अत्यन्त आनन्द ॥२२॥ सुप्तारम्भा ने शत्रुभय और दुःख पीडित में धनकी हानि मुपित और हीन में कार्य नाश व धनका नाश ॥ २३ ॥ सुवीर्यारम्भा में हाथों, घोड़ा, सुवर्ण और रत्न वा सम्पत्ति का लाभ, अधिवीर्य में राज्य लाभ, मित्र, धन, इनका संगम प्राप्त होता है ॥ २४ ॥

सूर्य का स्वरूप ।

पूर्वः सत्त्वं नृपस्तातः क्षत्रं ग्रीष्मोरुणश्रलः ।

मधूदृक् पौत्तिको धातुः शूरः सूक्ष्मकचो रविः ॥२५॥

भा०—तहां प्रथम पूर्व दिशाका स्वामी, सतोगणी, राजा व पिता

शुक्र का स्वरूप ।

शुक्रः शान्तो द्विजो नारी वैश्वो मंत्री चरः सितः ।

आग्नेयी दिक् कफश्चाम्लः कुटिलासितमूर्धजः ॥ ३० ॥

भाषार्थ—शान्त १॥भार, प्राणवर्ण रीतिज्ञ, वैश्य जाति, मन्त्रज्ञ, चर ॥भार देवेन वर्ण, अग्नि दिशा का स्वामी कफ प्रकृति, अम्ल धातु, बक्र, रयाम रंग केन ये लक्षण शुक्र क हैं ॥ ३० ॥

शनि का स्वरूप ।

कृष्णस्तमः कृशो वृद्धः पंडो मूलांत्यजोलसः ।

शिशिरः पवनः क्रूरः पश्चिमो वातुलः शनिः ॥ ३१ ॥

भाषार्थ—कृष्णवर्ण, तमोवर्णी, दुर्बल वृद्ध, वृद्धावस्था, नपुंसक, मूल चीज, चाण्डालों का अस्पति, शान्ती, शिशिर क्रतु का स्वामी, वायु धातु, क्रूर स्वभाव, पश्चिम दिशा का स्वामी, वाचाल ये शनि के गुण हैं ॥ ३१ ॥

गह्र केतु का स्वरूप ।

राहुर्धातुः शिखी मूलं शेषमन्यञ्च गंदवत् ।

चित्नीयं विलग्नेशात्केन्द्रगाद्वा बलाधिकात् ॥ ३२ ॥

भा०—गह्र धातु का स्वामी, जटाधारी, मूल चीज शेष गुण शनि के समान हैं ऐसा ही केतु जानना, ये सब पूर्वोक्त ग्रह लग्न या लग्नेश से अथवा केन्द्र स्थान में या जो अधिक बला हो उसके अनुसार प्रश्न समय लक्षण कहना, विशेष गुण तथा राशियों के गुण पहले संज्ञातन्त्र में कह चुके हैं ॥३२॥

लग्न में विचारने योग्य बात ।

सौख्यमायुर्वयो जातिरारोग्यं लक्षणं गुणम् ।

क्लेशाकृती रूपवर्णस्तनोश्चिन्त्यं विचक्षणैः ॥ ३३ ॥

भा०—सुख, आयु, अवस्था, जाति, आरोग्यता, शरीर के लक्षण, गुण, क्लेश, आकृति, रूप, रंग यह सब लग्न से परिद्धर्तों करके विचारना चाहिये ॥ ३३ ॥

धन भाव में विचारने योग्य बात ।

मुक्ताफलं च माणिक्यं रत्नधातुधनाम्बरम् ।

हयकार्याश्वविज्ञानं वित्तस्थानाद्विलोकयत् ॥ ३४ ॥

भाष्य— मोती और माणिक्य, रत्न, धातु, धन, वस्त्र, अश्व सम्बन्धी व सम्बन्धी कार्य यत् मन धन भाव से देखे ॥ ३४ ॥

तीसरे भाव में विचारने योग्य बातें ।

भामिनी भ्रातृभृत्यानां दासकर्मकृतामपि ।

कुचर्नि वीक्षणं विद्वान्सम्यक् दुश्चिक्थेवश्मतः ॥ ३५ ॥

भा— रत्न भाव, मोती और दास कर्म करने से व्यापारादि कर्म भी करे परात्म कर्म इन सब कर्मों को विद्वान तीसरे धर से विचार करे ॥ ३५ ॥

चतुर्थे भाव में विचारने योग्य बातें ।

वादिह्यारवचोत्रमहोपधिनिर्धानपि ।

विद्ययादि प्रवेशं च पश्येत्पानालतो बुधः ॥ ३६ ॥

भा— यदि वा और वाचाय यादि जनाशय सेतो, आप, (अथादि से विद्ययादि प्रवेशं च पश्येत्पानालतो बुधः) बुधयादिह में प्रवेश इनका परिश्रम पश्येत्पानालतो बुधः ॥ ३६ ॥

पाचो भाव में विचारने योग्य बातें ।

मन्त्रोत्तानेयानां मंत्रमन्थानयोरपि ।

विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः ॥ ३७ ॥

भा— मन्त्रोत्तानेयानां मन्त्रमन्थानयोरपि (मन्त्रोत्तानेयानां मन्त्रमन्थानयोरपि) और विद्या विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः ॥ ३७ ॥

पाचो भाव में विचारने योग्य बातें ।

विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः ।

विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः ॥ ३८ ॥

भा— विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः (विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः) और विद्या विद्ययाद्विद्ययाश्चानां सृजन्थाने निनिर्णयः ॥ ३८ ॥

सातवें भाग में विचारने योग्य बात ।

वाणिज्यं व्यवहारं च विवादं च समं परैः ।

गमागमकलत्राणि पश्येत्प्राज्ञः कलत्रतः ॥ ३६ ॥

भा०—ज्यापार, व्यवहार, और अन्य के साथ विवाद तथा मित्रता तथा ज्ञानना, और ज्ञाना नां मंथनं ॥ विचार, यह पुद्गिमान सातवें पर ने विचारे ॥ ३६ ॥

आष्टम भाग में विचारने योग्य बात ।

नद्युत्तारेऽध्वेषभ्ये दुर्गे च शस्त्र संकटे ।

नष्टे दुष्टे रणे व्याधौ छिद्रे छिद्रं निरीक्षयेत् ॥ ३७ ॥

भा०—नदी में तैना, मार्ग मंथनी विचार, विषम स्थान, किला, शस्त्रसंकट, और नष्टता, दुष्टता, रण में, व्याध में गृहच्छिद्र, इनमें जो विचार करना सो सब आठवें स्थान में विचारना ॥ ३७ ॥

नवें भाग में विचारने योग्य बात ।

वापीकूपतडागादिप्रपादेव गृहाणि च ।

दीक्षा यात्रां मठं धर्मं धर्मान्निचिन्त्य कीर्तयेत् ॥ ३८ ॥

भा०—वायली, कुआं, तालाव, आदि तथा गौशाला, देवमन्दिर, यात्रा, मठ, धर्मकार्य, यह सब नवम स्थान में विचार करना ॥ ३८ ॥

दशमं भाग में विचारने योग्य बात ।

राज्यं मुद्रां परं पुण्यं स्थानं तातं प्रयोजनम् ।

वृष्ट्यादिव्योमवृत्तान्तं व्योमस्थानान्निरीक्षयेत् ॥ ३९ ॥

भा०—राज्यमुद्रा, (मोहर) पुण्य, स्थान, पिता, प्रयोजन, वृष्टि आदि आकाश का वृत्तान्त यह सब दशम स्थान से विचार करना चाहिये ॥ ३९ ॥

ग्यारहवें भाग में विचारने योग्य बात ।

गजाश्वयानवस्त्राणि सस्यकाचनकन्यकाः ।

विद्वान् विद्यार्थयोर्लाभं लक्षयेत्लाभभावतः ॥ ४० ॥

भा०—हाथी, घोड़ा, पालकी आदि वाहन, वस्त्र, अन्न, सुवर्ण, कन्या, विद्या, तथा धन का लाभ इनका पंडित ग्यारहवें स्थान से विचार करें ॥४३॥

गारहवें स्थान में विचारने योग्य बातें ।

त्यागभोगविवादेषु दानेष्टकृषिकर्मसु ।

व्ययस्थानेषु सर्वेषु विद्धि विद्वान व्ययं व्ययात् ॥४४॥

भा०—त्याग, भोग, दूरे में कलह, दान, इष्टस्तु सेती तथा सा प्रकार के मर्त, इस मत का विचार विद्वान गारहवें स्थान से जाने ॥ ४४ ॥

भारों का बलापल ।

योगो भावःस्वामीदृष्टो युतोवा सोम्यैर्वास्यात्तस्य तस्यास्तिवृद्धिः ।
पारोम्यं नम्य भावस्य हानिनिर्देष्टव्या पृच्छातां जन्मतो वा ॥४५॥

भा०—जो जो भाव अपने स्वामी में अथवा शुभ ग्रह से देगा जाता तो वह शुभ हो तो उस भाव की वृद्धि होती है, एवं जो पापग्रह में दृष्ट वा कलह से हो जाती हानि जानना यह पृश्न गमय तथा जन्म गमय में भी विचार करना ॥ ४५ ॥

पृश्न में अथ शुभ जान ।

सौम्य शिरसे मर्दि वा म्वरगं शीपोदय मिद्धि मुपेति कार्यम् ।
अयोः विदर्यन्मनिदिदेतुः कृच्छ्रेण गंमिद्धिकरं विमिश्रमा ॥४६॥

भा०—सौम्य शिरसे मर्दि वा म्वरगं शीपोदय मिद्धि मुपेति कार्यम् । अयोः विदर्यन्मनिदिदेतुः कृच्छ्रेण गंमिद्धिकरं विमिश्रमा ॥४६॥

रहि वश में कार्य सिद्धि वर्णन ।

लग्नपत्तिर्यदि लग्नं कार्याधिपतिश्च वीक्षते कार्यम् ।
लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम् ॥ ४७ ॥
लग्नेश कार्येशं विलोकते लग्नपं तु कार्येशः ।
शीतशुद्धौ मृत्यां परिपूर्णा कार्यनिष्पत्ति ॥ ४८ ॥

भा०—यदि लग्न का स्वामी लग्न को देखता हो और कार्य भाव का स्वामी कार्य भावको देखता हो, तथा लग्न स्वामी कार्य भावको और कार्य भावका स्वामी लग्न को देखता हो ॥ ४७ ॥ यहाँ लग्नका स्वामी कार्य भावको स्वामी को और कार्य भावका स्वामी लग्न स्वामी को देखता हो और चन्द्रमा भी रहि हो तो कार्य की सिद्धि परिपूर्ण होती है ॥ ४८ ॥

लग्न के स्वामी आदिही लग्न पर रहि फल ।

कथयन्ति पादयोगं पश्यति सौम्यो न लग्नपो लग्नम् ।
लग्नाधिप च पश्यति शुभग्रहश्चाघयोगोऽत्र ॥ ४९ ॥
एकःशुभग्रहो यदि लग्नाधिपे विलोकयति ।
लग्नं पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यसंसिद्धौ ॥ ५० ॥

भा०—सौम्य (शुभ) ग्रह लग्नको देखता हो और लग्न स्वामी लग्न को न देखता हो तो बुधजन चौभाग योगको कहते है, तथा लग्न स्वामी को शुभ ग्रह न देखता हो तो आधा योग अर्थात् दस विश्वा कार्य सिद्धि कहना ॥ ४९ ॥ तथा यदि एक शुभग्रह लग्न को देखता हो और लग्न स्वामी भी देखता हो तो चौथा भाग कर्मा अथवा १५ विश्वा कार्य सिद्धि योग बुधजन कहने हैं ॥ ५० ॥

इसी प्रकार और फल ।

लग्नपत्तिदर्शने सति शुभग्रहौ द्वौ त्रयोथ वा लग्नम् ।
पश्यन्ति यदि तदानीमाहुयोगं त्रिभागोनम् ॥ ५१ ॥
क्रावेक्ष्णवर्ज्यश्चन्द्रः सौम्याश्च खेचरा लग्नम् ।
लग्नेशदर्शने सति पश्यन्तः पूर्ण योगकराः ॥ ५२ ॥

कार्यस्य हानिरुक्ता लगनेमृते किमपि नो वान्यम् ॥५७

भा०—यौग जो चन्द्रमा लग्न अथवा लग्न स्वामी को देवता हो अथवा लग्नेज कार्पेश एतही स्थान में स्थित हो तो कार्य की सिद्धि होगी ॥ ५६ ॥ जो लग्नेज कार्पेश को न देवता हो अथवा कार्य स्थान को न दिखे तो कार्य हानि कही है लग्न हो दोड़कर अन्य भागों से कुछ भी विचार न रहना ॥ ५७ ॥

द्रोष्णान् यदा ये लाभालाभ का जान ।

लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्यो स्यातामुभो यदि ।

स्थितो द्रेष्काण एकस्मिन्प्रष्टुर्लाभस्तदा ध्रुवम् ॥५८॥

एवं द्वादशभावेपु द्रेष्काणै रेव केवलम् ॥

बुधो विनिश्चयं त्रयात्रोग प्वन्येषु निस्पृहः ॥५९॥

भा०—जो लग्न स्वामी यौग अष्टमस्थान स्वामी से दोनों अष्टम स्थान में एक ही द्रेष्काण में स्थित हों तो निश्चय प्रश्नकता को लाभ होवे ॥ ५८ ॥ इस प्रकार चारहों भागों में केवल द्रेष्काण ही में निश्चय करके पंडित भावफल पढ़े, अन्य योगों से यही बली होता है ऐसा जानना ॥ ५९ ॥

लाभ आदि काल निर्णय ।

उदयोपगतं राशिं तत्कालीकृत्य लिप्तिकां गुणये !

छांयागुलैश्च कुर्यात् हत्वा मुनिभिस्ततःशेषः ॥६०॥

गणित्वेवं प्राग्वत् हत्वा सौम्यस्य भवेदुदयः ।

कार्यप्राप्तिः प्रष्टव्यताव्य नेतफेर्ग्रहे भवति ॥६१॥

भा०—प्रश्न समय की तत्काल लग्नको स्पष्ट करके उस समय चारह अंगुल को छाया से गुणन करके १४ से भाग देना जो शेष रहेसो सेपादि राशि जानना ॥ ६० ॥ सो राशि जो शुभग्रह की होतो कार्य सिद्धि हो पापग्रह की राशि हो तो कार्य हानि कहना ॥ ६१ ॥

ग्रहगुणकारो ज्ञेयो देवविदा पंच ५ विशातिः सैकः ॥६१॥

मनवो १४ का ६ षोऽत्रितयंशभवाः ११सूर्यादितो ज्ञेयः॥

वा शुभ ग्रहों को योग मन्त्र फल में धिनाग करके प्रश्नकर्ता को शुभ फल कहना इममें विपरीत हो तो अशुभ फल कहना ॥ ६७ ॥

लग्नेशो मुमुरिको यस्मात्तस्मादतीतमाख्येयम् ॥

येनयुतस्तस्माद्भवेदप्यंयो योक्ष्यते तरतात ॥६८॥

भा०—लग्नेश का जिकरे गाथ इमराफ योग हो उगमें भूत (अतीत) कहना, और लग्नेशर्मा का जिकरे योग हो उगे वर्तमान कहना, और एहि से भविष्य फल कहना ॥ ६८ ॥

शुभ फल गणन ।

यदिलगने लग्नपतिःसौम्ययुतो वा विलोकितः सौम्यैः ॥

तत्प्रष्टुर्व्याकुलता शरीरदोषा विनश्यान्ति ॥ ६९ ॥

भाषार्थ—यदि लग्न का स्वामी लग्न में हो योग उगमें शुभ ग्रह युक्त हो वा शुभ ग्रह में देखा जाना हो तो प्रश्नकर्ता में चित्त की व्याकुलता और शरीर दोष मन्त्र नाश होजाने हैं ॥ ६९ ॥

शुभाशुभ फल ।

पापोयदि लग्नपतिस्तदा कलिब्याधिधननाशाः ।

सौम्ये निवृत्तिवृद्धिर्द्रव्याप्तिः सौख्यमतुलं च ॥ ७० ॥

भाषार्थ—यदि लग्न का स्वामी पापग्रह हो तो फलद, रोग धनका नाश हो और जो लग्न का स्वामी शुभग्रह हो तो पवित्र वृद्धि, द्रव्य की प्राप्ति, और अतुल सुख होता है ॥ ७० ॥

द्वितीय स्थान मन्त्ररी प्रश्न ।

धनलाभस्य प्रश्ने लग्नेशे नेन्दुनाऽथ धननाथः ।

कुरुते यदीत्थशालं शुभयुतिदृष्ट्यां भवेत्लाभः ॥ ७१ ॥

क्रूरग्रहेर्धनस्यैदूरे लाभोऽन्यदप्यशुभम् ।

क्रूरमुयशिले धनेशः प्रष्टा म्रियतेऽथ वा विलग्नेशे ॥७२॥

धनधनेपत्थशाले मन्दगतिर्यत्र भावानाम् ।

स्वामीय फल कहना ॥ ७८ ॥ चतुर्थ का ममत्त स्थान में पन्द्रमा हो उमर पर
में गौर शत्रु के गुण प्रकृत हो उमर का लक्षण में प्रकृतियों को तो प्रकृतियों को
जीत उन का काम होना फल कहना ॥ ७७ ॥

वीर्य स्थान पराजयी प्रकृत ।

महजपतिर्यदि महजं पश्यति चेत्तद्दृश्यं शुभेदृष्टम् ।
तद्द्वयानरो गतः स्वस्थाः कुर्यात्तं वामम् ॥ ७८ ॥
यदि महजपतिः पृष्टं तत्पतिना मथुशिलेऽथ तन्प्राद्यम् ।
पृष्टेण महजस्थे महजपतो कुरते वापि ।
सूर्यस्य रश्मिर्गन्धे भयावहं प्राप्सुरादेश्यम् ॥ ७९ ॥
पृष्ट इत्युपलक्षणम् अष्टमस्थेपि ।

भाषार्थ - यदि तीव्र भाव (1) स्वामी तीव्र पर को देखता हो, तृतीय
भाव व तृतीय भावों को गुण प्रकृतियों को तो उम प्रकृतियों के भाई का
रोग प्रकृतियों पर उम प्रकृतियों पर उम प्रकृतियों तथा यदि वाप प्रकृतियों
में तो उम प्रकृतियों फल कहना ॥ ७८ ॥ यदि तीव्र भाव का स्वामी
उम स्थान में हो या पृष्ट में उम प्रकृतियों का भाई को उम
प्रकृतियों रोग होवे, या पृष्ट तीव्र भाव में हो या तीव्र भाव का
स्वामी पृष्ट हो या उम के भाई (प्रकृतियों) को तो उम प्रकृतियों ही फल
कहना ॥ ७९ ॥

पृष्टम भावेशो यद्भावेशेनेतश्शालिनो स्याताम् ।
पीडां तस्य प्रवदेत्पृष्टमभावगे वापि ॥ ८० ॥
एवं सर्वेपि यथा पित्रांस्तुर्ये सुतानां च ।
भृत्यचतुष्पदवर्गं स्यास्ते स्त्रियाः सुहृदोये ॥ ८१ ॥

भा०-उम स्थान के स्वामी से दोनों जिन भाव के स्वामी के साथ उम-
शाल करने हो अथवा उम प्रकृतियों स्थान में स्थित हो तो उम भाव सम्बन्धी पीडा
कहनी ॥ ८० ॥ इस प्रकार सब भावों में विचार करना, जैसे चौथे स्थान के
स्वामी में पृष्ट या अष्टमेश का उम शाल हो अथवा इन भावों के स्वामी

चतुर्थ स्थान में हों वा चतुर्थेश इन भावों में हों तो माता पिता को पीड़ा होने एवं पंचम भाव से पुत्रों को, सप्तम भाव से सेवक, स्त्री, चतुष्पदै इत्यादि का निवारण करना ॥ ८१ ॥

चौथे स्थान सम्बन्धी प्रश्न ।

लग्नपतीन्दुचतुर्थपतिमथुशिलमथवा ग्रहे गमनम् ।
प्रष्टुः पृथ्वीलाभदमसौम्यदृग्योगतो नैव ॥ ८२ ॥
यदि पृच्छति कृषिको मे क्षेत्राह्लाभो भवेन्न न वा ।
लग्नं कृषिकस्तुर्यं भूमिघ्नं कृषिस्तरुर्दशमम् ॥ ८३ ॥

भावार्थ—हर्षी प्रश्नकर्ताने पृथ्वी लाभ सम्बन्धी प्रश्न किया तो लग्न का स्वामी, चन्द्रमा और चतुर्थ भाव स्वामी ये तीनों परस्पर इत्यशौच योग बनें अथवा एक ही घर में स्थित हों तो पृच्छक को पृथ्वी का लाभ होगा, और यदि घर में एक ही घर में स्थित हों तो भूमि लाभ नहीं होंगे ॥ ८२ ॥ यदि कोई कृषि करने वाला पृष्ठे कि इसको रोती से लाभ होगा या नहीं तो लग्न स्वामी और चतुर्थ भाव स्वामी भाव भूमि, सप्तम भाव रोती तथा दशम भाव का स्वामी पृच्छक को पृच्छे इन भावों में नानावन निवारण कृषि प्रश्न का निवारण करना ॥ ८३ ॥

शुभमो शुभमष्टे माकृत्यं कर्षकस्य कृषिः स्थान ।
दुर्यं च कृष्णने न्यसन्वा भूमिं प्रयात्येष ॥ ८४ ॥
दुर्यं च शुभमष्टमने शुभं कृषिस्त्वन्मथा तु विपरितमम् ।
दशमो दशममनो वा शुभयुनदृष्टे शुभा वृत्ताः ॥ ८५ ॥

भावार्थ—यदि शुभमष्टम स्थान में कृषिकर्ता हो रोती से लाभ होगा और यदि दुर्यं च कृष्णने न्यसन्वा भूमिं प्रयात्येष ॥ ८४ ॥ यदि शुभमष्टमने शुभं कृषिस्त्वन्मथा तु विपरितमम् । दशमो दशममनो वा शुभयुनदृष्टे शुभा वृत्ताः ॥ ८५ ॥

लग्ने क्रूरोपगते स्यच्चौरुपद्रवस्तु कृपिकर्तुः ।

वक्राति चारवज्ये क्रूरे चौरस्य कृपिलाभः ॥ ८६ ॥

भाषार्थः—लग्न में पापग्रह स्थित हो तो चेतो वाले को चोरों से उपद्रव हो अर्थात् कृपिकर्ता की चोरी होने और लग्न स्थित पाप ग्रह जो वक्रो या अति-चारी न हो तो चोर से भी लाभ होंगे ॥ ८६ ॥

भूभाटकपृच्छायां लग्नं प्रष्टा च भाटकं द्यूने ।

तस्यात्पत्तिर्दशमे तथावमानं चतुर्थे स्यात् ॥ ८७ ॥

लग्नस्य लग्नपस्य च शुभयोगे शुभसशोभनं वामे ।

द्यूने क्रूरोपगते यस्मादपि भाटकस्तोऽनर्थः ॥ ८८ ॥

दशमे क्रूरोपगते नोत्पत्तिर्वहुतरा भवेत्प्रष्टुः ।

क्रूरादिते तु तुर्ये स्यादवसाने शुभं नास्य ॥ ८९ ॥

भा०—अथ पृथ्वीसम्बन्धी भाड़ा किराया किस्त आदि के प्रश्न में लग्न को प्रश्नकर्ता सप्तम को किराया दशम को उत्पत्ति चतुर्थ को परिणाम कल्पना करके इन स्थानों को विचार करके शुभाशुभ उत्तर देना ॥ ८७ ॥ लग्न और लग्न स्वामी शुभ ग्रह से युक्त दृष्ट हो तो शुभ फल कहना, पाप ग्रह युक्त दृष्ट होंगे तो अर्थात् अशुभ फल कहना, सप्तम स्थान में पाप ग्रह स्थित होंगे तो भाड़ा आदि में किसी प्रकार का अनर्थ होता है ॥ ८८ ॥ दशम भाव में पापग्रह हो तो प्रश्नकर्ता को बहुत भाड़ा प्राप्त न होवेगा और चतुर्थ स्थान में पाप ग्रह हो तो परिणाम अच्छा नहीं होवेगा अथवा भाड़ा मिलने में अनर्थ होवेगा ॥ ८९ ॥

पांचवे स्थान सम्बन्धी प्रश्न ।

यदि पृच्छत्येतस्याः स्त्रियो भवेन्मे प्रजान वा कश्चित् ।

लनेशेन्द्रोः सुतपतिना मुथशिलभावे प्रसूतिः स्यात् ॥ ९० ॥

सुतभावपतिर्लग्ने लग्नपंचद्रौ सुतेथ वा स्याताम् ।

सत्त्वरितमेव वाच्या सविलंबं नक्तयोगेन ॥ ९१ ॥

आपोक्लिमेत्थशालादनीक्षणाद्भ्रमपुत्रयोर्नवम् ॥ ६६ ॥

चरलग्ने क्रूरेन्दोमुथशिलभावं विनश्यति द्विगर्भः ।

लग्नपशशिनास्तत्पतिरथ वकि मुधशिलेपितथा ॥ ६७ ॥

भाषार्थः—यदि लग्न स्वामी और चन्द्रमा का केन्द्रस्थान में स्थित पंचमेश के साथ इत्यशान योग होवे तो भी गर्भिणी है अथवा आपोक्लिम स्थान में इत्यशान होवे अथवा लग्न स्वामी पुत्र भाव को पुत्रभाव स्वामी लग्न को नहीं देवे तो गर्भवती नहीं है ॥ ६६ ॥ चरलग्न में पाप ग्रह चन्द्रमा के साथ इत्यशान करे तो गर्भ नष्ट होजायेगा और लग्न स्वामी व चन्द्रमा नीचादि से पतित ग्रहों से इत्यशान करे तो गर्भ नष्ट होजायेगा ॥ ६७ ॥

जीवितमरणप्रश्ने बालानामन्त्यये शुभेदृष्टे ।

केन्द्रस्थे सितपक्षे शुभयुक्तेन्त्ये विधौ जीवेत् ॥ ६८ ॥

क्रूरश्चेदंत्यपतिर्दग्धश्चापोक्लिमे च युतः ।

क्रूरेस्तु जातमात्रो म्रियते बालोऽथवा गर्भे ॥ ६९ ॥

भा०—बालक के जीवन मरण प्रश्न में चारहवें भाव का स्वामी जो केन्द्र में शुभ ग्रह दृष्ट हो और चारहवें शुक्लपक्ष का चन्द्रमा बँटा हो वा शुभ ग्रह से युक्त हो तो बालक बड़ी उमर वाला होवेगा ॥ ६८ ॥ तथा जो द्वादशभाव का स्वामी क्रूर ग्रह हो और दग्ध हो वा आपोक्लिम स्थान में पाप ग्रह से दृष्ट वा युक्त हो तो बालक उत्पत्ति समय वा गर्भ में मर जायेगा ॥ ६९ ॥

प्रसवज्ञानप्रश्ने भुक्त्वांलग्नांशकान् परित्यज्य ।

भोग्याद्विचिन्त्य शेषाननुमित्यैवं वदेद्विवसान् ॥ १०० ॥

यावन्तो नवमांशा गतास्तावन्तो गर्भस्य मासा गताः ।

यावन्तो भोग्यास्तावद्विरग्रतः प्रसव इति व्याख्या ॥ १ ॥

भाषार्थः—बालक उत्पन्न कब होगा इस प्रश्न में लग्न के भुक्त अंशों को छोड़कर भोग्यांश पर से दिनों का अनुमान करे वही दिन कहना, अथवा लग्न के भुक्त अंशों के समान गर्भ के भुक्त मास और भोग्यांशों से शेष दिन अनुमान से कथन करना ॥ १०० ॥ जितने नवांश गत हों उतने

यदि वा मिथो गृहगतौ स्यातामेतौ च संततिस्तदपि ।
 वाच्या तस्मिन्वर्षे शुभयोगादन्यथा न पुनः ॥ ६ ॥
 मुताप्रमृतयुवतिज्ञाने मुतपोऽथ पृष्ठपः सूर्यात् ।
 निर्गत्येदयमायात्ततः प्रसृते च नारीयम् ॥ ७ ॥
 अथजीवभौमशुक्रा आकाशे उदयनिम्नथाप्येवम् ॥ ८ ॥

भाषार्थ—यदा लग्नस्वामी, पंचमस्वामी, गह दोनों एक ही स्थान में
 अथवा परस्पर दशमे के स्थान में विद्यमान हों तथा शुभ ग्रहों से युक्त हो तो
 मन्तव्य होवेगी अन्यथा नहीं होवेगी ॥६॥ गह श्री प्रमवती होवेगी अथवा नहीं
 ऐसे प्रश्न में पंचमभाव स्वामी गृहभाव स्वामी नृप के साथ निकल गया हो
 अर्थात् उदय होगया हो तो श्री प्रमवती होवे ॥ ७ ॥ अथवा गृहस्पति
 मंगल शुक्र दशम स्थान में स्थित हों तो भी प्रमवती होवेगी ॥ ८ ॥

एते स्थान मन्वंधी प्रश्न ।

रोगदयमुत्थास्यति नवेतिलग्नं भिषग्धूनम् ।
 व्याधिदशमं रोगी हिवृकभेषजनिहाहुराचार्याः ॥६॥
 क्रूरादिते विलग्ने वैद्यान्नगुणस्तदोषघाद्रोगः ।
 वृद्धिमुपयाति दशमे क्रूरैर्निजवृद्धितोष्यगुणः ॥ १० ॥

भा०—रोगी मनुष्य रोग से आराम पावेगा अथवा नहीं इस प्रश्न में
 लग्न से वैद्य, नम्र भाव से रोग दशम भाव से रोगी, चतुर्थ भाव से औषध
 का विचार करना ऐसा पूर्वाचार्य कीर्तन करते हैं ॥६॥ जो लग्न पापग्रहों से
 युक्त हो तो वैद्य से गुण नहीं होगा अर्थात् वैद्य द्वारा रोग नहीं जायगा,
 और औषध से रोग वृद्धि को प्राप्त होवेगा अर्थात् बढ़ेगा तथा दशम स्थान में
 पापग्रहों तो अपनी ही वृद्धिसे कोई अवगुण होजाने से रोग बढ़जावे ॥१०॥

अस्ते च क्रूर्युते मान्वान्माद्यं तथौषघाद्वन्धौ ।
 सौम्योपगतेरेतौ रोगितारोगिणो भवति ॥ ११ ॥
 लग्नेशेन्द्रोः सौम्येत्थशालतो रोगनाशनं वाच्यम् ।
 वक्त्रे तु तत्र खेटे भूयोपि गदः समुपयाति ॥ १२ ॥

तनुमृत्युभावनायावन्योन्याश्रयगतौ मरणम् ॥१७॥

लग्ने चरे च रोगी क्षणे क्षणे स्यादरुक् सरुक् चापि ।

द्विशरिरे पररोगः स्थिरे गदस्यैकरोगत्वम् ॥१८॥

भा०—जगत् स्वामी स्वयं द्वारशांशमें हो तो मृत्यु होवे परं लक्षका स्वामी अष्टम भागमें अष्टम भावका स्वामी लग्नमें स्थित हो, अथवा पञ्चम दृष्टि हो तो भी मृत्यु होवे, चरलग्न हो तो रोगी क्षणक्षणमें मूर्खा दुर्खा होता रहे, द्विःस्वभाव लग्न हो तो एक रोग से दूसरा रोग होवे, स्थित लग्न हो तो आदि अन्न में एकही रोग रहे, ऐसा कहना ॥ १८ ॥

शशिनो वक्रमुधशिले स्थिररोगो मन्दमुधशिले पूर्वम् ।

मूत्रनिरोधा द्रोगोत्पत्तिर्ज्ञेया कृतप्रश्ने ॥ १९ ॥

अथ पृच्छायाःपूर्वे सप्ताहानि च विलोक्यचत्वारि ।

यदितेषु शशांकरवी शुभयुतदृष्टौ तदाशस्तम् ॥ २० ॥

अथ मंदोऽयमथ नवेति पश्ने लग्नेश्वरोऽथचंद्रो वा ।

पष्टेशमुधशिली स्यादस्तमितस्तदा चन्द्रः ॥ २१ ॥

भा०—चन्द्रमा वरी ग्रहमे इत्यशाल योग करे तो स्थित रहे, शनैश्चर से इत्यशाल योग हो तो प्रथम मूत्रके निरोध से रोगकी उत्पत्ति इसकी हुई प्रश्न में जानना ॥ १९ ॥ अथ प्रश्न के प्रथम मात वा चार दिनमें सूर्य चन्द्रमा शुभग्रह से युक्त दृष्ट हो तो शुभ फल जानना ॥ २० ॥ अथ यह रोगी होगा वा नहीं इस प्रश्न में प्रश्न लग्नका स्वामी अथवा चन्द्रमा पष्टेश से इत्यशाल करता हो अथवा अस्तलग्न हो तो रोगी होवेगा ऐसा कहना ॥ २१ ॥

स्वामी मेवक और चतुष्पद का प्रश्न ।

ईशोऽन्यो मम भविता नवेति लग्नेश्वरस्य यदि केन्द्रे ।

नो भवति मुधशिलं पष्ठांत्यपत्तिभ्यांतदा नान्यः ॥२२॥

भा०—हमारा अन्य स्वामी होगा वा नहीं अर्थात् अन्यत्र हमारी चाकरी होगी वा नहीं इस प्रश्न में लग्न स्वामी यदि केन्द्र १ । ४ । ७ । १० में हो और

भृत्यस्य वाहनस्य च यद्वा प्रश्ने च लग्नलग्नपती ।
थर्था दाता सप्तमसप्तमपौ तद्वलात्प्राप्तिः ॥ २८ ॥

भाषा—मेरुफ योग वाहन के भ्रम में लग्न और लग्न स्वामी शर्भी (देने वाले) और सप्तम व सप्तमभाव स्वामी दाता (देने वाले) जानने इनका चलावल देय के प्राप्ति अप्राप्ति कहनी, क्या लग्न स्वामी का सप्तम भाव में व सप्तम भाव का स्वामी लग्न में यथा लग्न स्वामी व सप्तम स्वामी का परस्पर इत्यशान योग होने तो मेरुफ व वाहन का प्राप्ति होगी, ईमराफ योग होने में नहीं प्राप्ति होगी ऐसा जानना ॥ २८ ॥

गत्वें गन सम्बन्धी प्रश्न ।

स्त्रीलाभस्य प्रश्ने स्मराधिपे लग्नपेन शशिना वा ।
कृतमुथशिले युवत्या अयाचिताया भवेत्लाभः ॥ २९ ॥
यदि लग्नपो विधुर्वा द्यूने तदयाचितां स्त्रियं लभते ।
लग्नेशान्मूसरिफे चन्द्रेऽस्तमुथशिले स्वयं लाभः ॥ ३० ॥

भा०—स्त्री लाभ प्रश्न में सप्तम भाव का स्वामी और लग्न स्वामी वा चन्द्रमा का इत्यशान योग हो तो बिना याचना किये ही स्त्री का लाभ होवे ॥ २९ ॥ जो लग्न स्वामी वा चन्द्रमा सप्तम घर में हो तो भी बिना मांगे स्त्री प्राप्त हो यथा लग्न स्वामी का सप्तम भाव से ईमराफ योग हो और चन्द्रमा का सप्तमेश से इत्यशान हो तो स्वयं (बिना प्रयास अर्थात् आपही से) स्त्री प्राप्ति होवे ॥ ३० ॥

येन समं तु मुथशिलं तत्र विनष्टे च पापयुतदृष्टे ।
निकटीभूततदा किल विनश्यति स्त्रीगतं कार्यम् ॥ ३१ ॥
पापेऽत्र रन्ध्रनाथे स्त्रीजातेरेव विघटते कार्यम् ।
सहजपतो भ्रातृभ्यस्तुर्येशो पितृव्य एव नान्येभ्यः ।
सौम्यकृतयुक्तिदृग्भ्यां पूर्वोक्तस्थानतः शुभंवाच्यम् ॥ ३२ ॥

भा०—जिस ग्रह के साथ इत्यशाल हो वह ग्रह नष्टवली और पाप ग्रह युक्त वा निगाह हो तथा सप्तम में नष्टवली ग्रह वा पापग्रह हो तो स्त्री लाभ

सम्बन्धी कार्य समीपवर्ती होने पर भी नष्ट हो जावें ॥ ३१ ॥ सप्तम भाव
 पाप ग्रह का अष्टम भाव का स्वामी हो तो स्त्री सम्बन्धी कार्य न हो, तीसरे
 भाव के स्वामी से सम्बन्ध हो तो भाई से, चतुर्थ भाव के स्वामी से सम्बन्ध
 तो पिता व पिता के भाई से एवं जिन भाव का स्वामी से सम्बन्ध हो उस
 भाग कार्य का नाश होवे तथा जो सप्तम भाव वा सप्तम भावेश पर शु
 क्त का योग हो अथवा शुभ ग्रह की नजर हो तो उक्त सम्बन्ध वाले से श
 क्त नाश होवे ॥ ३२ ॥

स्त्री प्रेम का प्रश्न ।

प्रीतिम्यानप्रश्ने स्मरपतिलग्नेशमुथशिले स्नेहः ।

भक्तकद्वशा भक्तकः शशिकम्बूले तु सापि शुभा ॥३३॥

यदि मन्दो लग्नेशः केंद्रे च स्यात्तदा बली प्रष्टा ।

यमेशं च मन्दे केंद्रे प्रतिवादिनोऽस्ति बलम् ॥ ३४ ॥

भावार्थ - यदि स्त्री प्रीति के प्रश्न में सप्तम भाव स्वामी और ल
 ३३ का योग हो तो स्त्री से प्रीति होगी और उनकी शत्रु नजर हो त
 ३४ का योग हो तो सप्तम भाव का स्वामी योग फलवा हो तो स्त्री सप्तम भाव
 ३३ का योग हो तो यदि शक्ति लग्न स्वामी केंद्र में हो तो प्रश्न फल
 ३४ का योग हो तो सप्तम भाव स्वामी शक्ति केंद्र में हो तो प्रतिवादी को बली

सूर्याग्निर्गतशुक्रे चक्रपि समेत चान्यथा कृष्टा ।

जीणेन्द्रो बहुदिवसेः पूर्णविधौ च द्रुतमुपैति ॥ ३७ ॥

भाषार्थः—किमी प्रश्नकर्ता ने प्रश्न किया हो कि हमारी कृष्टी हुई स्त्री पर आयेगी कि नहीं तो इस प्रकार विचार करना कि चतुर्थ स्थान पर्यन्त मृग हो और चतुर्थ भाव के ऊपर शुक्र हो तो स्त्री नहीं आयेगी, तथा जो शुक्र चर्मा होवे तो आयेगी ऐसा कहना ॥ ३६ ॥ मृग के साथ से निकल गया शर्यात् समीप ही शुक्र का उदय भया हो और चर्मा शुक्र हो तो कृष्टा स्त्री आप ही आजायेगी, इससे विपरीत हो तो नहीं आयेगी, तथा जो क्षीण चन्द्रमा इससे सम्बन्ध करे तो बहुत दिनों में और पूर्ण चन्द्रमा सम्बन्ध करे तो शीघ्र कृष्टा स्त्री लीट आयेगी ॥ ३७ ॥

कन्या परीक्षा ।

एषा कुमारिका किल निर्दोषा किन्नदेति पृच्छायाम् ।

लग्ने स्थिरे स्थिरर्क्षे लग्नपशशिनोश्च निर्दोषा ॥ ३८ ॥

चरराशिगते रेतोरियं कुमार्यपि च जातदोषा स्यात् ।

द्विशरीरस्थे चन्द्रे चरलग्ने स्वल्पदोषा स्यात् ॥ ३९ ॥

भा०—यह कुमारी निर्दोष है वा नहीं, इस प्रश्न में लग्न स्थिर हो और स्थिर राशि में लग्न का स्वामी व चन्द्रमा हो तो यह कन्या निर्दोष है ऐसा कहना ॥ ३८ ॥ तथा प्रश्न लग्न चर संज्ञक हो और लग्नेश व चन्द्रमा चर राशि में हो तो यह कन्या दोषी है और द्विःस्वभाव राशि में चन्द्रमा स्थित हो व लग्न चर हो तो थोड़े दोष वाली जानना ॥ ३९ ॥

शशिभौमावेकद्धे स्थिरवर्जे तरपरेण गुप्तमियम् ।

रमिताशनिचन्द्रमसोर्लग्नपयोः प्रकटमुपभुक्ता ॥ ४० ॥

यदि भौमशनी केन्द्रे विद्युदृष्टौ वृश्चिकेऽथ शुक्रः स्यात् ।

तद्वद्रेष्काणैथ तदा निर्भातं जातदोषैषा ॥ ४१ ॥

भा०—चन्द्रमा, मङ्गल एक राशि में स्थित हों परन्तु वह राशि स्थिर

न हो तो यह कन्या किसी ने गुम रमण करी है, तथा जो शनि और चन्द्रमा
नग्न स्थित हो तो प्रकृत भोग करी है ॥ ४० ॥ तथा यदि मंगल शनि केन्द्र में
स्थित हो और वृश्चिक में शुक्र हो और चन्द्रमा देवता हो, अथवा वृश्चिक के
दोषकाण्ड में शुक्र हो तो यह स्त्री निस्सन्देह दोषी है ऐसा कहना ॥ ४१ ॥

प्रमत्त परीक्षा ।

एषा किल प्रसूता सिते घटेजे हरौ च नो सूता ।

अनयोरलिवृषगतयोः सूता नारी परिज्ञेया ॥ ४२ ॥

भौमवृषशुक्रचन्द्रा द्विशरीरे चापवर्जिते चेत्स्युः ।

अग्नेऽग्नि तत्प्रसूतिश्चापेनाग्नेण पृष्ठतः सूता ॥४६॥

भाव — यह स्त्री प्रसूत भई अथवा नहीं, इस प्रश्न में जो शुक्र कुम्भ
का केंद्र नग्न स्थित हो तो प्रसूत नहीं भई और शुक्र वृश्चिक का, वृष वृषका
का केंद्र नग्न स्थित हो ऐसा कहना ॥ ४२ ॥ मंगल, वृष, शुक्र, चन्द्रमा ये प्रसूत
हो तो प्रसूत स्थित अथवा शनि में स्थित मान हो, तो यह स्त्री प्रथम प्रसूत हो
तब से इस प्रकार के प्रसूत घर स्थित मान हो तो न प्राप्ति भई न अगाधी
होती ॥ ४३ ॥

अग्नेऽग्नि तत्प्रसूतिश्चापेनाग्नेण पृष्ठतः सूता स्थिते तु निजपत्युः ।

विद्यायां तु मिश्रमयं ज्ञानकर्मदेहपुण्ड्यायाम् ॥ ४४ ॥

मरिचि देहक मयपत्युः पद्मपुण्याद्रे वि ताम्नमृतपत्न्योः ।

अग्नेऽग्नि तत्प्रसूतिश्चापेनाग्नेण पृष्ठतः सूता स्थिते तु निजपत्युः ॥४५॥

भाव — यह स्त्री प्रसूत भई अथवा नहीं, इस प्रश्न में जो शुक्र कुम्भ
का केंद्र नग्न स्थित हो तो प्रसूत नहीं भई और शुक्र वृश्चिक का, वृष वृषका
का केंद्र नग्न स्थित हो ऐसा कहना ॥ ४२ ॥ मंगल, वृष, शुक्र, चन्द्रमा ये प्रसूत
हो तो प्रसूत स्थित अथवा शनि में स्थित मान हो, तो यह स्त्री प्रथम प्रसूत हो
तब से इस प्रकार के प्रसूत घर स्थित मान हो तो न प्राप्ति भई न अगाधी
होती ॥ ४३ ॥

पतिव्रता परीक्षा ।

कुलटा सतीयमथवेति लग्नपतिश्चन्द्रमाश्र भोमेन ।

एकांशेन मुखशिलकृतनदेव भवने भजत्यन्यम् ॥४६॥

यदि ग्रहनिजगो भोमस्तदान्यदेशं प्रयाति जारकृते ।

रविणेति मुखमिले सत्युपभुक्ता सा तु राजपुरुषेण ॥४७॥

सोभ्येन लेखकवणिक् निजभे शुक्रेण योपयैव स्त्री ।

एतेयोगेरसती विपरीते सुचरितेतिविज्ञेयम् ॥४८॥

भा०—गठ कुलराज पतिव्रता है अथवा नहीं, इस प्रश्न में लग्नका स्वामी और चन्द्रमा मंगल के साथ एकही स्थान पर इन्धशाला योग करना हो तो उसी परमें किसी दूरमें से रमण करती है ॥ ४६ ॥ यदि मंगल अपनी राशि में हो तो किसी दूरमें पुरुष के साथ परदेश को निकल जावेगी, तथा जो सूर्य के साथ इन्धशाला उनका हो तो किसी राजपुरुष ने रमण करी है, ऐसा करना ॥ ४७ ॥ तथा जो पूर्वोक्त मंगलका पुरुषके साथ इन्धशाला करे तो किसी लेखक वा चण्डय ने रमण करी है, और जो मंगलका शुक्र के साथ इन्धशाला हो तो स्त्री ममान पुरुष ने मभोग करी है, इन पूर्वोक्त योगों के होने से व्यभिचारिणी, और इन योगों के न होने से पतिव्रता जानना ॥ ४८ ॥

लग्नपतिनाथ शशिना मूसरिफेभूसुते भवेज्जारः ।

त्यक्तः पुनर्गुरुदृशा पुत्रभयाद्रविदृशा च राजभयात् ॥४९॥

सितदृष्टया परनारीभयात्सितज्ञे कराशिगतदृष्टया ।

जारस्य स्थविरत्वल्लज्जित्वात्यजाति जारं सा ॥ ५० ॥

भा०—लग्न स्वामी वा चन्द्रमा से मंगलका ईशराफ योग होवे, तो स्त्री जार (व्यभिचारी पुरुष) से रमण करने वाली होगी, और जो बृहस्पति की दृष्टि होवे तो पुत्रके भय से सूर्यकी दृष्टि हो तो राजभय से जार त्याग करे ॥ ४९ ॥ तथा जो मंगल पर शुक्रकी दृष्टि हो तो जारकी स्त्री के भय से स्त्री जारको परित्याग करे, और जो शुक्र शुभ एक राशि पर स्थित हो और पूर्वोक्त मंगल को देखे तो जार पुरुषकी वृद्धायस्था होने से लज्जा मानकर जार को परित्याग कर देवे ॥ ५० ॥

अष्टम स्थान सम्बन्धी प्रश्न ।

नृपसंग्रामप्रश्ने विलग्नलग्नेश संस्थितास्वेदात् ।

शशिमूसरिफात्प्रधास्तास्तपसंस्थेदुमुथशिलाञ्चत्रुः ॥५१ ॥

अथवा शनिकुजजीवाः शीघ्रेभ्यो बलयुता उपरिचराः ।

बुधसितचंद्रास्तेभ्यश्चदुर्वलाधश्वराश्च संचिन्त्याः ॥ ५२ ॥

भा० -- राजा से गयाम होने के प्रश्न में लग्न और लग्नेश प्राप्त पहले चन्द्रमा के योग होवे, तो प्रश्नकर्ता का जय होवेगा, और सप्तम भाग तथा सप्तमेश का चन्द्रमा का इत्यशान होवे तो शत्रु की जय होवेगी ॥ ५१ ॥
कदाचित्, मङ्गल, बुधमणि ये ग्रह बलवान् होकर शीघ्र गामी प्रहरो ऊपर हो तो प्रश्नों विजय, सोम ग्रह, शुक्र चन्द्रमा बलहीन होकर उनसे नीचे रहें तो शत्रु की विजय होगी ॥ ५२ ॥

नमनपनावस्तपतेः पट्टत्रिदशायां मुथशिले द्वयोःस्नेहः ।

वर्गद्वयमयावः पतिनःमौऽन्ने बद्धः स्यात् ॥ ५६ ॥

वर्गद्वयविक्रानां मूमरिफेऽम्नांगले न रणदैव्यम् ।

नमनमामिनि मन्दे कंत्रले उपरिगे जयः प्रपट्टः ॥५७॥

भा० -- नमनपनावस्तपतेः की कंत्रलाय दृष्टि में दोनों का वर्गद्वयमयाव होने का कारण में मन्दे, दायाई, योग नीचे रहें इतने ही जय होवेगा, हा तो चोटे दृष्टय शत्रु को जय नही ॥ ५६ ॥ तथा पृथक् वर्गद्वयविक्रानां मूमरिफेऽम्नांगले न रणदैव्यम् का तो बुधमणि का योग का कारण मन्दे कायी मानव गामी जीतगामी का तो मन्दे का कारण मन्दे कायी विजय होगी ॥ ५७ ॥

वर्गद्वयविक्रानां मूमरिफेऽम्नांगले न रणदैव्यम् ।

वर्गद्वयविक्रानां मूमरिफेऽम्नांगले न रणदैव्यम् ।

वर्गद्वयविक्रानां मूमरिफेऽम्नांगले न रणदैव्यम् ।

वर्गद्वयविक्रानां मूमरिफेऽम्नांगले न रणदैव्यम् ।

भा०—एवं जो ग्रह मन्दगामी ग्रह अधिकतम और तीक्ष्णगामी ग्रह
इत्यंश होके चन्द्रमा से अधिकतम नीचगत हो अथवा ममम
भावे स्वामी केन्द्र में एवं लग्न व नीचगत हो तो मंग में प्रष्टा की हानि
कहनी ॥ ५५ ॥ जार से लग्न अर्थात् दशम भाव से लग्न पर्यन्त शुभग्रह और
लग्न से ऊपर अर्थात् लग्न से चतुर्थ भाव पर्यन्त शनि हो तो मृद में अष्टमी
महाप प्राप्त होवे, तथा जो लग्न का स्वामी अष्टम हो वा अष्टमेश से
इत्यंशान करता हो तो प्रश्नकर्ता का पराजय होवेगा ॥ ५६ ॥

सप्तेशे धनसंस्थे धनेशकृतमुथशिले रिपोर्नाशः ।

लग्नेशदशमपत्योर्मुथशिलतःपृच्छकस्य जयवीर्ये ॥५७॥

तुर्यास्तपयोरेवं शत्रोर्वेगे जयो ज्ञेयः ।

उभयवर्गेपि केन्द्रे तत्पतिकृतमुथशिले वलं ज्ञेयम् ॥५८॥

भाषार्थ—सातवें भाव का स्वामी धन भाव में स्थित हो और धनेश के
माथ इत्यंशान करता हो तो शत्रु का नाश होवे, और लग्नेश दशमे का
इत्यंशान हो तो पराक्रम से प्रश्नकर्ता की विजय होवेगी ॥ ५७ ॥ एवं
चतुर्थ भाव स्वामी ममम भाव स्वामी इन दोनों का इत्यंशाल हो वा योग
हो तो शत्रु की जीत जानना, तथा जो दोनों के वर्ग स्वामियों में केन्द्रस्थित
रथानेश से इत्यंशाल करता हो तो प्रश्नकर्ता का पक्ष बलवान् जानना ॥५८॥

चरराशौ सवलत्वं जित्वा प्रान्ते विनाशस्तु ।

लग्नपतावन्त्यस्थे प्रष्टा नश्यति परोऽस्तपे पण्डे ॥५९॥

स्वपतौ लग्ने प्रण्टुस्तुर्येशेऽस्ते रिपोः सहायबलम् ।

यन्मुथशिलो रवीन्दू तस्य वलं मुसरिके हानिः ॥ ६० ॥

भाषार्थ—जिसका वर्गेश चरराशि में बलवान् हो तो प्रथम शत्रु को
जीत के आपको विनष्ट होजावेगा, तथा जो लग्नेश चारहवें स्थान में हो
तो प्रश्नकर्ता नष्ट हो जावेगा, तथा जो मममेश छठे हो तो शत्रु का नाश
होवेगा ॥ ५९ ॥ दशम भाव का स्वामी लग्न में और चतुर्थ भाव

लग्नेशे नवमेशे मुखशिलकृतिरन्ध्रसप्तमे कष्टम् ।

उदयेस्मिन्वा यायाद्विनिः सृतिः स्यात्सुखकरः पंचा ॥ ६६ ॥

भाषार्थः—नरम भाव स्वामी का लग्नेश के साथ इत्यशान हो और पाप ग्रह की शत्रु रहि हो तो गमन होगा परन्तु कष्ट व धनका क्षय होवेगा ॥ ६५ ॥ तथा जो लग्न स्वामी व नरम स्वामी का इत्यशान छगट्यो या सातवे स्थान में हो तो गमन परन्तु में कष्ट होवे तथा जो यह अस्त से उदय होगया हो तो मार्ग सुखकारी होवेगा ऐसा जानना ॥ ६६ ॥

लग्नान्मार्गानुभवो व्योम्नः कार्यं स्मराद्गतिस्थानम् ।

भूमेः कार्यं परिणतिरेवं लग्ने शरीरसुखम् ॥ ६७ ॥

दशमे शुभे च सिद्धिः कार्यस्यास्ते प्रयाति यत्स्थाने ।

तत्र शुभं च चतुर्थे परिणामः सुन्दरः कार्ये ॥ ६८ ॥

भा०—लग्न से मार्ग का अनुभव करना अर्थात् लग्न जैसा हस्त वा दीर्घ वेगा ही मार्ग कहना तथा दशम भाव से कार्य, सप्तम भाव से गमन स्थान, चतुर्थभाव से कार्यका परिणाम एवं लग्नसे शरीर का सुख विचार करना ॥६७॥ दशम स्थान में शुभ ग्रह हो तो कार्य सिद्धि होवे, सप्तम में हो तो सुख पूर्वक गमन, चतुर्थ स्थान में शुभ ग्रह हो तो कार्यका परिणाम अच्छा होवेगा ॥६८॥

लग्नेशं शशिनं वा यः क्रूरस्तुदति तत्रमनुजर्त्ते ।

मनुज त्रिराशिके वा तदा भयं द्विपदतो गंतुः ॥ ६९ ॥

जलराशौ वारिभयं चतुष्पदर्त्ते तथा श्वादेः ।

घटचापे द्रुमकंटकभयं हरौव्याघ्रसिंहादेः ॥ ७० ॥

भा०—अब लग्न स्वामी और चन्द्रमा को जो पाप ग्रह पीड़ित करे वह नरराशि या नरराशि के द्रेष्काण में हो तो गमनकर्ता को द्विपद (दो पैर वाले) से भय होवे ॥ ६९ ॥ तथा जो जनराशि में हो तो जल से भय होवे, चतुष्पद राशि में हो तो घोडा आदि चौपाये से भय होवे, तथा कुम्भ व धन का हो तो वृक्ष कंटकादि से भय हो और सिंह का हो तो व्याघ्रसिंहादिसे भय हो ॥७०॥

नगरप्रवेशतोऽस्मान् फलमस्ति न वाप्रवेशलभमिह ।
 तस्मिन्धनपे वक्रे नो वसतिःकार्यसिद्धिर्वा ॥ ७१ ॥
 अतिचरिते बहुदिवसं वसतिर्नो कार्यसिद्धिरीषदपि ।
 नवमवृत्तीयगतेस्मिन्कार्यं कृत्वाशु निजपुरं याति । ७२ ॥
 लग्ने कर्मगयायेधनपयुते शोभनं ज्ञेयम् ।
 मकरमप्तमस्थे पथि विघ्नाज्भकटकशत्रुर्थस्थे ॥ ७३ ॥

भाषार्थः—नगर में प्रवेश करने से हमको फल होगा या नहीं इस प्रश्न के लिये प्रवेश लग्न में धनेश चकी हो तो स्थिति नहीं होगी और कार्य भी नहीं सिद्ध होगा ॥ ७१ ॥ नगर जो धनेश अतिभारी हो तो बहुत दिन रहना नहीं होगा और बहुत दिनों काय सिद्धि न होगी और जो धनेश नवम या तृतीय राशि में हो तो कार्य कम भेरीय अवधि पूरा को जाये ॥ ७२ ॥ लग्न दशम, एकादश स्थान में नवमेश धनेश युक्त हो तो शुभ फल जानना या पाप प्रहर्षित लग्न भाग से स्थित हो तो मार्ग में विघ्न होगा अतुर्थ स्थान में हो तो फल शोभन प्राप्त जानना ॥ ७३ ॥

दशम स्थान मध्यमी प्रश्न ।

मन्वातिवप्रनलग्ने लग्नेशे शशिनि वा नभः पतिना ।
 अलग्नशितो वन्द्या गज्यं रूपक्रमाद्भवति ॥ ७४ ॥
 अलग्नशितमभ्रमनात्कृगभावं श्यचिन्तितप्राप्तिः ।
 अलग्नशितमभ्रमनात्कृगभावं श्यचिन्तितप्राप्तिः ॥ ७५ ॥

भाषार्थः—दशम स्थान मध्यमी प्रश्न में लग्न का मन्वातिवप्रन लग्न में धनेश शशिनि वा नभः पतिना अलग्नशितो वन्द्या गज्यं रूपक्रमाद्भवति ॥ ७४ ॥ अलग्नशितमभ्रमनात्कृगभावं श्यचिन्तितप्राप्तिः ॥ ७५ ॥ अलग्नशितमभ्रमनात्कृगभावं श्यचिन्तितप्राप्तिः ॥ ७५ ॥

पापादिते तु मंदे निकटी भूयोत्तरत्यधोराज्यम् ।

भूमिस्थे क्रूरदृशा त्वपवादः शुभदृशा कीर्तिः ॥७६॥

मन्दग्रहे चलवति क्रूरवियुक्ते यदा शशी विवलः ।

मन्देन चलेन भ्रमणाद्राज्यप्राप्तिर्भवेत्प्रष्टुः ॥ ७७ ॥

भाषार्थ— मन्द गति वाला ग्रह पाप ग्रह से पीड़ित हो तो राज्य का नाश हो, चतुर्थ में हो और पाप ग्रह की दृष्टि हो तो अपवाद हो, शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो कीर्ति हो ॥ ७६ ॥ मन्द गति वाला ग्रह चलवान हो और पाप ग्रह का योग न हो और चन्द्रमा चलहीन हो, शनि चलवान हो तो भ्रमण करने से राज्य प्राप्त होवे ॥ ७७ ॥

लग्नाधिपतौ स्वगृहे लाभो राज्यस्य तुङ्गो भौमे ।

लग्नां वराधिपौ यदि कन्द्रलौ केंद्रगेंदुमुथशिलतः ॥ ७८ ॥

उत्तमराज्य वाप्तिः स्वर्क्षस्थे चेन्दुतो विपुला ।

यत्रक्षे लग्नेशस्तत्पतिरशुभे गृहे तदा कार्यम् ॥ ७९ ॥

न स्यादस्ते कष्टादशमदृशा कटुकता कार्ये ।

राज्यप्राप्तौ सत्यां यदि पृच्छति कोपि परिणतिं च तदा ॥८०॥

भा०— लग्न का स्वामी अपने घर में हो और अपनी उच्च राशि (मकर) में मङ्गल हो तो राज्य लाभ होवे तथा लग्नेश दशमेश इत्यशाल करते हुए केन्द्रस्थ चन्द्रमा से कम्बुली हो तो भी राज्य लाभ होवे ॥ ७८ ॥ तथा लग्नेश दशमेश अपनी राशि में हो और इत्यशाल योग करते हुए चन्द्रमा से कम्बल योग करें तो अच्छे प्रकार राज्य प्राप्ति हो परन्तु उत्तम कम्बूल हो और जिस राशि में लग्नेश हो उसके स्वामी पाप ग्रह की राशि में हो तो राज्यकार्य नहीं होवे ॥ ७९ ॥ और जो वह ग्रह अस्तङ्गत हो तो कष्ट से राज्य कार्य होवे, और शत्रु दृष्टि से दृष्ट हो तो कार्य में किसी प्रकार की कटुबाई होवे, राज्य प्राप्ति विषय में यदि कोई भी प्रश्न करे तो इस प्रकार परिणाम कहना ॥८०॥

राज्यं चरं स्थिरं वा लग्नपगगनशंयोः महयोः ।

येषां को मन्दः स्यात्केन्द्रे तत्स्थितमथान्यथा वाच्यम् ॥८६॥

यदि वा स चामगार्गे भूमेर्वा प्रत्युतिर्भवत्पूर्वम् ।

कम्बूलं गतिं लभते शीघ्रं मुसरिके तु नपुनः ॥ ८७ ॥

भा०—राजा और राज मन्त्री के स्नेह प्रदन में लग्न स्वामी और लग्न स्वामी दोनों कर्मों का योग मिलात इत्यथान योग कर्मों हो, शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो राजा और राजमन्त्री में परस्पर स्नेह रहे और राज्य में शुभता (आनन्द) रहे ॥ ८६ ॥ यह राज्य रहेगा या स्थिर इन प्रश्न में लग्न स्वामी और लग्न स्वामी दोनों एक राशि में हों उनमें से एक मन्द गति ग्रहकेन्द्र १।१।७।७।१० स्थान में हों तो राज्य स्थिर रहेगा अन्यथा स्थिर नहीं रहेगा ॥ ८६ ॥ यदि वा उक्त ग्रह चक्रगामी हो तो प्रथम राज्य की शानि शानि हो परन्तु उच्चानि होवे, कम्बूल योग हो तो शीघ्र राज्य का नाश हो, ईशराज योग हो तो राज्य का लाभ नहीं होवे ॥ ८७ ॥

व्यासहरेण स्थान मन्त्रिणी प्रश्न ।

नृपतेर्गौरवलाभाशादि मम स्थानवेतिपृच्छायां ।

आयेशलपग्नपत्योः स्नेहदशा मुखशिले द्रुतं भवति ॥८८॥

रिपुदृष्ट्या बहुदिवसैः केन्द्रे चायेशचन्द्र कम्बूले ॥

वाच्या पूर्णवाशा चरस्थिरद्विःस्वभावगे स्वनामफलम् ॥८९॥

मन्दे क्रूरपहते भूत्वाशाशु प्रणाशमुपयाति ॥

क्रूरायुक्ते च शुभयुज्यधिकारावशेन लक्ष्याशा ॥ ९० ॥

भाषार्थ—राजा से गौरव धन तथा आशा आदि लाभ होवेंगा वा नहीं इस प्रश्न में लाभ भाव का स्वामी और लग्न स्वामी का मित्र दृष्टि से इत्यथाल हो तो शीघ्र लाभ होवेगा ॥८८॥ शत्रु दृष्टि से इत्यथाल हो तो बहुत दिनों में लाभ होवे तथा लाभेश लग्नेश का केन्द्र में इत्यथाल होवे और चन्द्रमा से कम्बूल योग होवे तो आशा पूर्ण होगी ऐसा कहना, परंतु चर स्थिर द्विःस्वभाव में से जैसी राशि में हो उसके नाम सदृश फल कहना ॥८९॥

नाम भाव का स्वामी जो अस्त वा पाप पीड़ित हो तो आशा पूर्ण हो
निर नाश होजावे, पापरहित शुभयुक्त हो तो अपने अधिकार के समा
नय वा बृहन् आशा पूर्ण होवे ॥ ६० ॥

मित्रेण सह प्रीतिर्भविता लग्नेश्वरायपत्योश्च ।

प्रियदृष्टया मुथशिलतः प्रीतिर्वान्योन्यगृहयानात् ॥ ६१ ॥

केन्द्रस्थित योरनयोर्मैत्री किल पूर्वजातैव ।

फलफरगतौ पुरस्तादापोक्विलमतो महाप्रीतिः ॥६२॥

भासा - मित्र के साथ प्रीति होने के प्रश्न में लग्न स्वामी और लाभ
भाज स्वामी मित्र दृष्टि में इत्यथान करते हैं यथवा लग्न स्वामी लाभ भाज में
नाम स्वामी लग्न में हो तो प्रीति बढ़ेगी ऐसा कहना ॥ ९१ ॥ तथा लग्नेश
केन्द्र में हों तो मैत्री पहिलेही से है, फलफर स्थान में दोनों ही तो
स्वामी होते होंगे यापोकिलम स्थान में हों तो प्रीति बहुतबढ़ेगी ऐसा जानना ॥६२॥

गुणं कार्यमिदं मे मिथ्यति लग्नेश्वरेऽथ चन्द्रमसि ।

गुभनमशिनगे केन्द्रे तन्निकटे वाथ सिद्धिः स्यात् ॥६३॥

भासा - इसका क्या कार्य सिद्ध होगा ? उम प्रश्न में लग्न का
गुण और चन्द्रा शिनगे के साथ इत्यथान करने हुए केन्द्र में ही वा
गुभन के निकट ही तो ये गण कार्य की सिद्धि जानना ॥ ६३ ॥

भासा । स्थान मन्त्रो प्रश्न ।

विपुलपुत्रद्वयायां वनवनि पशुं रिपः मवलः ।

उत्तरगणे गुभदष्टे वनवनि नान्यं शुभं प्रपद्युः ॥ ६४ ॥

गुभदष्टे मद्रममृमेक्षण योगनो व्यगमनर्यात् ।

उत्तरगणे मद्रममृमेक्षणं मद्रमफलं मुथिया ॥ ६५ ॥

भासा - उत्तरगण के मद्रममृमेक्षण के प्रश्न में उत्तरगण स्थान वनवनि है ।
उत्तरगण के मद्रममृमेक्षण के प्रश्न में उत्तरगण स्थान वनवनि है और शुभक
उत्तरगण के मद्रममृमेक्षण के प्रश्न में उत्तरगण स्थान वनवनि है और शुभक
उत्तरगण के मद्रममृमेक्षण के प्रश्न में उत्तरगण स्थान वनवनि है और शुभक

युक्त इह हो तो प्रथम कार्य में प्रथम प्रयत्न होवे, इसी प्रकार सुन्दर बुद्धि वालों
 कार्यके सम्पूर्ण भागों में शुभाशुभ फल पढ़ना योग्य है ॥ १५ ॥

इति श्री प्रश्नमन्त्र भाषाटीक्ष्णया लग्नादिहादश

भाग प्रश्न निरूपणम् ॥

अथ केचिद्विंशतः प्रश्नाः निरूप्यन्ते ।

पथिक के आगमन का प्रश्न ।

आगमने पृच्छ्यायां लग्नेशे लग्नमध्यसंस्थेन ।

कृतमुथशिले समेति हि सुखमस्ततुरीयगे कष्टात् ॥६६॥

भा०—अब कुछ ऐसे प्रश्न विशेषतासे निरूपण करते हैं—तहाँ प्रथम

पथिक के आगमन प्रश्न को पढ़ने में पथिक के आगमन प्रश्न में लग्न स्वामी
 और लग्न में स्थित ग्रह में इत्यशाल हो तो पथिक सुखसे घर आवेगा और जो
 सप्तम चतुर्था स्थित में इत्यशाल हों तो कष्ट में आवेगा ॥ ६६ ॥

स्थानाच्चलितः प्रश्ने लग्नपतो सहजनवमगृहसंस्थे ।

लग्नस्थेन मुथशिले पंधानं वहति पथिकोयम् ॥६७॥

रंध्रेथ धने तस्मिन्नाकाशसंस्थेन मुथशिलेप्येवम् ।

केंद्रस्थितेऽथशाले लग्ने क्षणवर्ज्यमेति न कदापि ॥ ६८ ॥

भा०—स्थान में पथिक चला वा नहीं इस प्रश्न में लग्नका स्वामी तीसरे
 या नववें स्थान में स्थित होता हुआ लग्न स्थित ग्रहके साथ इत्यशाल करता
 हो तो पथिक मार्ग चल रहा है ॥ ६७ ॥ तथा लग्नका स्वामी अष्टम अथवा
 दूसरे स्थान में स्थित होता हुआ दशम स्थान स्थित किसी ग्रह से इत्यशाल करे
 तो भी पथिक मार्ग चल रहा है और केंद्र में स्थित दशमेश से इत्यशाल
 करता हो तो भी पथिक मार्ग में है तथा जो लग्नेश लग्न को देखे तो पथिक
 नहीं आवेगा ऐसा कहना ॥ ६८ ॥

लग्नाधिपतो वक्रे लग्नं पश्यत्यमुत्र चन्द्रे वा ।

वक्रगामूथशिले सति समेति पथिकःसुखं शीघ्रम् ॥ ६

पौर शुभ ग्रह केन्द्र १ । ४ । ७ । १० त्रिकोण ६ । ५ में हों तो अधिक निभय
करके रू भी स्थित हों तो भी शुभ पूर्वक घर आचना है ऐसा करना ॥ ३ ॥

चतुरस्रे त्रिकोणे वा पापगेहस्थितः शनिः ।

पापदृष्टश्च नियतं बन्धनं यातुरादिशेत् ॥ ५ ॥

शुभयुक्ते स्थिरे लगने स्थिरो बन्धश्ररेऽन्यथा ।

द्वितनौ सौम्यसंयुक्ते बंधमोक्षौ क्रमेण तु ॥ ६ ॥

भा०-केन्द्र १ । ४ । ७ । १० वा त्रिकोण ५ । ६ स्थान में तथा
पाप राशि में पाप ग्रह दृष्ट शनि स्थित हो तो अवश्य पथिक बन्धन में
पड़ गया है ॥ ५ ॥ तथा स्थिर लग्न शुभ युक्त उक्त योगों में हो तो बन्धन
स्थिर होगा, पर लग्न हो तो नाम मात्र और द्विःसंभार हो तो बन्धन में
से छूट गया है ॥ ६ ॥

पापत्रिकोणयामित्रे विलगने पृष्ठकोदये ।

शत्रुभिर्वीक्ष्यमाणश्च यातुः कष्टे वदेत्सुधीः ॥ ७ ॥

मार्गस्यथानगतेः सौम्येर्मार्गं तस्य शुभं वदेत् ।

क्रूरैर्दुःखं विलग्नस्थैः पापैः क्लेशमवाप्नुयात् ॥ ८ ॥

भा०-त्रिकोण ५ । ६ वा सातवें पाप ग्रह और पृष्ठोदय हों और शत्रु
दृष्ट हों तो युद्धवान् करके पथिक को कष्ट कहना ॥ ७ ॥ मार्ग स्थान में शुभ
ग्रह हों तो पथिक का मार्ग शुद्ध होवेगा, पाप ग्रह हों तो दुःख होवेगा तथा
लग्न में पाप ग्रह हों तो क्लेश प्राप्त होंगे ॥ ८ ॥

चरलग्ने चरांशे वा चतुर्थे यदि चन्द्रमाः ।

प्रवासी सुखमायाति कृतकार्यश्च वेशमनि ॥ ९ ॥

कंटकेः सौम्यसंयुक्तेः पाप ग्रहविवर्जितेः ।

प्रवासी सुखमायाति निधनस्थे सुधाकरे ॥ १० ॥

भापार्थ-लग्न में चर राशि हो अथवा चर राशि के नवांशों में प्रवृत्त
हो तथा यदि चौथे चन्द्रमा हो तो प्रवासी (पथिक) कार्य करके सुख

पूर्वक चर आवे ॥ ६ ॥ चन्द्र स्वान शुभ ग्रहों से युक्त हों पाप ग्रह नवा चन्द्रम स्वान में चन्द्रमा हो तो पशुक सुख पूर्वक आवे ॥ १० ॥

गमागमौ तु न स्यातां स्थिरराशौ विलग्नगे ।

न रोगोपशमोनाशो द्रव्याणां न पराभवः ॥ ११ ॥

विपरीतं चरे वाच्यं फलं मिश्रं द्विमूर्तिषु ।

स्थिर वत्प्रथमेखण्डे परार्धे चरराशिवत् ॥ १२ ॥

भावार्थः—जन्म में स्थिर राशि हो तो जाना जाना नहीं होगा, मरण नहीं होवेगा, धन नाश होवेगा और पराजय नहीं होवेगा चर राशि हो तो स्थिर में विपरीत जानना द्विःस्वभाव ही तो है अर्थात् द्विःस्वभाव के पूर्व भाग में स्थिर के समान फल हो और चर भाग के समान फल जानना ॥ १२ ॥

गमागमौ तु न स्यातां योगो दुरुधराकृत ।

गुणैः शुभ कृतां राशः पापैस्तस्करतो भयम् ॥ १३ ॥

प्रसामो गन्धमायानि गुरुशुद्धौ त्रिवित्तगौ ।

सर्वार्थ स्वान गातवौ शीघ्र मायति कार्यकृत ॥ १४ ॥

भावार्थः—जन्म में शुभ चन्द्र मन्वन्ती दृष्टाया योग हो तो शुभ कार्य होवेगा, तब ही चर पाप ग्रहों में हो तो शुभ कार्य में बाधा पड़ेगी अर्थात् नोपाय होना ही होगा ॥ १३ ॥ जो प्रथम समान राशि में शुभ शुद्ध हो तो पशुक सुख पूर्वक आवे और जो चर राशि में शुभ शुद्ध हो तो चर राशि में शुभ कार्य करके चर राशि में ॥ १४ ॥

रुद्रः स्थिरगौ नमनात्पशिकं वरिह मार्गमप्र ।

मार्गो रुद्रश्च गुरुवर्षात्प्रभामो व्यर्थास्थितः ॥ १५ ॥

गुरुर्हो ज्ञेयस्तेनानाम हौषि स्वायदायगः ।

सर्वार्थ स्वान त्रयस्त्रयदृष्टे मघने व्यये ॥ १६ ॥

भावार्थः—जन्म में रुद्र राशि में शुभ शुद्ध हो तो पशुक सुख पूर्वक आवे और जो रुद्र राशि में शुभ शुद्ध हो तो चर राशि में शुभ कार्य करके चर राशि में ॥ १५ ॥ गुरु राशि में शुभ शुद्ध हो तो पशुक सुख पूर्वक आवे और जो गुरु राशि में शुभ शुद्ध हो तो चर राशि में शुभ कार्य करके चर राशि में ॥ १६ ॥

भा०—प्रथम लगने वा लग्न स्वामी से नवम स्थान में जितने शुभग्रह हों उतने स्थान में पथिक को मार्ग में हर्षका उदय होवेगा ऐसा परिडतों करने कहना चाहिये ॥ २१ ॥ तथा लगने वा लग्न स्वामी से नववें वा बारहवें स्थान में जितने पापग्रह हों उतने ही उषद्रव मार्ग में होंगे ॥ २२ ॥

कूरयुक्ते क्षितौ मन्दः शुभ दृग्योगवर्जितः ।

धर्मस्थस्तनुतेव्याधि प्रोषितस्याष्टमे मृतिम् ॥२३॥

भा०—पापग्रह युक्त दृष्ट शनैश्चर शुभ ग्रहों की दृष्टि वा शुभग्रहों के योग में स्थित होना हुआ नाम स्थान में स्थित हो और अन्य कोई योग न हो तो मृत्यु में योग ही जाठवें हो तो मृत्यु होवे ऐसा पथिक को कहना ॥ २३ ॥

मित्रस्य शुभोत्थे यातनायाति दुरुधरायोगे ।

मित्रम्वामिनोथा त्पापोत्थे शत्रुकूर्चौरात् ॥२४॥

भा०—जो प्रथम लगने में गानवें स्थान में शुभग्रहों से दुरुधरा योग हो तो मित्र से शत्रुता जायेगी पापग्रहों में होतो नहीं, तथा मन्त्रमेश अपने मित्र से युक्त हो तो शत्रु योग, योग, इनमें कष्ट प्राप्त होवे ॥ २४ ॥

चन्द्राश्चर्योश्चिद्दृग्गोर्गमेन मन्ददृष्टयोः स्यात्पथि शम्भीतिः ।

मन्दे गिते ज्ञे च सुम्वागिरारे मन्देभयं पापयुगीक्षितेऽध्वनि ॥२५॥

भा०—चन्द्रमा और मर्ग ग्रहण स्थान में हों शनिही दृष्टि दोनों पर हो तो शत्रुता जायेगी मन्त्रमेश भय होवे और अष्टम स्थान में शुक्र, बुध, शनि, मंगल, राहू, केतु, इनमें कष्टम स्थान में मंगल और शनि पापग्रह युक्त वा अष्टम स्थान में भय जायेगा हात्मा पैसा कहना ॥ २५ ॥

दृष्टि के दृष्टि वाले के स्थान में प्रथम ।

मन्देभयं जीनक्षत्रेऽथ शत्रुं तुर्यं दृष्टमे वाप्यतिनीचमे वा ।

चन्द्राश्चर्योश्चिद्दृग्गोर्गमेन मन्देभयं पापयुगीक्षितेऽध्वनि ॥२६॥

भमेरघः स्थेन च मध्यगेन यदीत्यशालं कुरुते शशांकः ।
सौम्येरदृष्टे मरणं प्रकुर्याद्दूरस्थितस्यापि विदेशगस्य ॥२७॥

भा०—प्रश्न लग्ने चौथे स्थान के मध्य किसी स्थान में स्थित ग्रह से चन्द्रमा इत्यशाल करे और शुभग्रह की दृष्टि न हो तो विदेश गये हुए दूर स्थित जनकी मृत्यु को करे ॥ २७ ॥

सौम्येः पष्ठांत्यंरभ्रस्यैर्विवलेश्च शुभेक्षितैः ।

पापयुक्तो शशांकार्को तदा दूरस्थितो मृतः ॥२८॥

भा०—जो शुभग्रह दृष्टे, चारवें, आठवें, स्थान में निर्बल शुभग्रहों से दृष्ट तथा पापग्रहों से युक्त स्थित हो और चन्द्रमा सूर्य पापग्रहों से युक्त हो तदा दूरस्थ (प्रसारी) जन मरगया है ऐसा कहना ॥ २८ ॥

पृष्ठोदये पापयुते त्रिकोणकेंद्रापष्टोपगतेश्च पापैः ।

सौम्येरदृष्टेः परदेशसंस्थो मृतो गदातो नवमे च सूर्ये ॥२९॥

भा०—पृष्ठोदय (मे०बु०क०ध०म०मी) राशि में पापग्रह त्रिकोण ६।५ केंद्र १।४।७।१० और अष्टम स्थान में हो शुभग्रहों की दृष्टि न हो तो परदेश में स्थित गेगी पुरुष मर गया है ऐसा कहना, नवम सूर्य हो तो भी ऐसा ही फल कहना ॥ २९ ॥

तुर्या परिस्थेन स्वगेन चन्द्रमा यदीत्यशालं कुरुते शुभेक्षितः ।

सौम्यैर्युतांवा परदेशसंस्थितःसुखीच जीवेत्पथि सौख्यमेतिच ३०

भा०—तथा जो चौथे से गतवें स्थान के मध्य में स्थित किसी ग्रह से चन्द्रमा इत्यशाल करे शुभ ग्रहसे दृष्ट वा युक्त भी हो तो परदेशरथ मनुष्य जीता है, और सुख पूर्वक मार्ग में भी रहकर घर आवेगा ॥ ३० ॥

शत्रु के आने का प्रश्न ।

मार्गान्निवर्तते शत्रुः पापैः शत्रुगृहाश्रितैः।

चतुर्थगेरपि प्राप्तः शत्रुर्भग्नो निवर्तते ॥३१॥

भा०—अब शत्रु के आने के प्रश्न में जो पापग्रह शत्रु ग्रह (द्वठे स्थान) में स्थित हो तो शत्रु मार्ग ही से लौट जावेगा ऐसा कहना, और जो चतुर्थ

स्थान में पापग्रह हो तो पहुँच गया भी शत्रु भागकर हट जायगा ॥ ३१ ॥

भूपालिकुंभकर्कटा रसातले यदा स्थिताः ।

रिपोःपराजयस्तदा चतुष्पदैः पलायते ॥३२॥

भा०—जो प्रश्न लग्नसे चौथे स्थान में मीन, वृश्चिक, कुंभ, कर्क, स्थित हो, तो शत्रु का पराजय हो. और चतुष्पद राशि चतुर्था भावमें स्थित तो शत्रु भाग जावे ॥ ३२ ॥

स्थितोदये जीवशनेश्चरे स्थिते गमागमौ नैव वदेत् पृच्छतः ।

त्रिचिपष्टा रिपुसंगमाय पापाश्चतुर्था विनिवर्तनाय ॥३३॥

भा०—प्रश्न समय स्थिर लग्न हो और गुरु शनि स्थित हों तो पृच्छतः का कर्तव्य न करना जानना न होगा, और तीसरे छठे पाँचवें पापग्रह का शत्रु में संगम हो चौथे पापग्रह हों तो शत्रु हट जायगा ॥ ३३ ॥

दशमोदयगक्षमगास्तौभ्या नगराधिपस्य विजयकराः ।

आराधितागुरुसिनाः प्रभंगदा विजयदा नवमे ॥३४॥

भा०—दशम और गक्षम स्थान में सोम्य ग्रह हों तो नगराधिपति विजय करेगा. और संगम, शनि, बुध और गुरु व शुक्र नवमें स्थान में आराधित होने पर विजय देना पड़ेगा ॥ ३४ ॥

उदयार्धान्चन्द्रार्धं भवति च यात्रादिनेश्च तावद्धिः ।

यागदत्तं आराधयौर्गदि न हि मध्ये ग्रहः कश्चित् ॥३५॥

भा०—उदय अर्धे चन्द्रमा त्रिजवी राशि पर हो उतने दिवस में यात्रा करने पर याग दत्त करने में कोई ग्रह नहीं होवे ॥ ३५ ॥

जय पराजय प्रश्न ।

सूयेंदुभोमाकजसेहिकेयेः सर्वेश्वतुभिन्निभिरेवलमगेः ।

ह्न्यात्तदा स्थायिनमाशु यायीञ्च नस्थितैर्यायिनृपं पुरेशः ॥ ३७ ॥

त्यैज्यशीतांशुबुधाः सुरज्यैः सर्वैस्त्रिभिर्द्यु नतर्वलादयैः ॥

ह्न्याद्रणे स्थायिनमाशुयायी सुखास्पदस्थेश्च शुभैः सुसन्धिः ३८

भा०—मृष, चन्द्रमा, मंगल, शनि, राहु, ये सब अथवा इनमें से चार वा तीन ग्रह लग्न में हों तो स्थायी राजा को यायी राजा मारता है, तथा ये जो सातवें स्थान में हों तो स्थायी राजा यायी राजा को मारता है, ॥ ३७ ॥ शीघ्र शुक, चन्द्रमा, बुध, गुरु ये सब बलयुक्त होकर अथवा इनमें से तीन ग्रह ममम स्थान में हों तो यायी राजा स्थायी राजा का शीघ्र नाश करे, और चौथे स्थान में हों तो शीघ्र मन्धि (मिलाप) होजावे ।

कुजेत्यशाले हिमगो विलग्ने वंधोथ मृत्युयुधि नागरस्य ।

भोमेत्यशाले च विधो कलत्रे बन्धं मृतिं वा लभत्रेनयायी ॥ ३९ ॥

लग्नेश्यामित्रपयोश्च मध्ये भवेद्ग्रहो यः स्वगृहोच्चसंस्थः ।

तद्दुर्गमत्यान्नृपयोश्च संधिज्ञेयो बुधे लेखकपण्डिताभ्याम् ॥ ४० ॥

भा०—मंगल के साथ इत्यशाल करता हुआ चन्द्रमा लग्न में वा चौथे स्थान में स्थित हो तो युद्ध में स्थायी राजा की मृत्यु होवे, और पूर्वोक्त चन्द्रमा सातवें घर में हो तो यायी राजा की मृत्यु वा बन्धन हो स्थायी (अपने किला में स्थित राजा, यायी (जो चढ़कर आया है) ॥ ३९ ॥ लग्न स्थायी और ममम स्थायी इन दोनों के मध्य जो ग्रह अपनी राशि वा उच्चस्थित हो तो उसके लेखक व पण्डितादि व मन्त्री द्वारा दोनों राजाओं की संधि जानना, यहां मृष, चन्द्र, राजा, मंगल सेनापति, बुध, युवराज, वृहस्पति शुक मन्त्री, शनि दास जानना ॥ ४० ॥

करे कलत्रे ह्यदये शुभग्रहो यच्छेद्धनं यायिनृपायनागर ।

विपर्यायाद्यायिनृपःपुरेश्वरं दुर्गार्त्सनिष्कास्य ददतिवास्पदम् ४१

भा०—जो पाप ग्रह सातवें, लग्न में शुभ ग्रह हो तो यायी राजा को स्थायी राजा दूष्य देकर शक्ति करावे, तथा जो लग्न में पाप ग्रह और

ममम में शुभ ग्रह हों तो घायी राजा स्थायी राज को किला से निकाल
पुनः स्वान देवे ॥ ४१ ॥

रवीत्यशाले शशिजे सुगुप्ताश्चरा भवेयुश्च कुजेसराफात् ।

गृहान्दशांकेन युताश्च तस्मिन्ये येन्यवेपाश्च भवति नारा ॥ ४२ ॥

भाषार्थ—जो वृष भूय से इत्यशाल करता हो तो अति शुभ यथा
गुप्त प्रकार में राजा के दूत रहे, मंगल से ईमराफ योग हो और चन्द्रमा
में युक्त हो तो इन लोग हमरा वेप भारण करके संयुक्त होंगे ॥ ४२ ॥

दुर्ग प्रश्न ।

प्रदने विलम्बे कुरे वा दुर्गभंगो न जायते ।

निरोपतो भूमिपूत्रे राहो वा मूर्तिगे सति ॥ ४३ ॥

राजमे गिराजानुदुर्ग शीघ्रेण लभ्यते ।

यामित्रोदयमे कुरे रिफमे लग्ननायके ॥ ४४ ॥

भाषार्थ—इस प्रश्न में प्रश्न समा कुर यह लग्न में हो व विशेष करके
दुर्ग का उद्धार होने में राजा दुर्ग (कोट) का भंग नहीं होता है अर्थात्
दुर्ग नहीं गिरता है ॥ ४३ ॥ तथा मयव स्थान में गद्द हो तो किला शीघ्र
प्राप्त हो पायेगा, और जो पाप प्रद लग्न में वा मयमें ही लग्न यामी
नहीं हो पायेगा ॥

द्वितीये दशमे पष्टे तदा दुर्ग न लभ्यते ।

राहु मे लग्नके नकी युद्धदः केंद्रमस्थितः ॥ ४५ ॥

यद्दुर्गो न नगरे पाये वा युद्धमादिशेन ।

राजमे दे दुरीः कुरे कोटि दुर्गः तथा नृणां ॥ ४६ ॥

भाषार्थ—दशम भाग में पष्टे में अर्थात् दशम भाग में होना कि ॥ तदीय वि
राहु मे लग्नके नकी युद्धदः केंद्रमस्थितः ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

पह हों तो किन्ना में बहुत प्राणियों का बध होगा ॥ ४६ ॥

भौमाष्टमेशावकेत्र ददतो निधनं नृणाम् ।

स्वायपुत्रस्थिते जीवे कोट मध्ये भयं नहि ।

शनौ भौमे च केन्द्रस्थ वहनां बधबंधनम् ॥ ४७ ॥

भाषार्थः—मङ्गल और अष्टम भाग स्वामी एक राशि में हों तो पृथक्क के बहुत पुत्रों के मरण को देने हों, दूसरे, ग्यारहवें, पाँचवें भाग में वृहस्पति हो तो किले में भय नहीं हों, शनि और मङ्गल केन्द्र में हों तो बहुत पुत्र मारे व धाये जायेंगे ॥ ४७ ॥

लग्नगता यदि पापः पापेन युतेक्षितो वा स्यात् ।

लग्नात्पूर्वात्परगौ पापौ युद्धं तदा घोरम् ॥ ४८ ॥

भा०—यदि पाप ग्रह लग्न में हों और पाप ग्रह से युक्त दृष्टि हों और लग्न से चारहवें, दूसरे स्थान में पाप ग्रह हों तो घोर युद्ध होवे ॥ ४८ ॥

रोगी के शुभाशुभ प्रश्न ।

विलग्ने पृष्ठपः पापो जन्मराशि निरीक्षिते ।

रोगिणस्तस्य मरणं निश्चयेन वदेद्बुधः ॥ ४९ ॥

चतुर्थाष्टमगे चन्द्रे पापमध्यगतेपि वा ।

मृतिः स्याद्बल संयुक्तं सौम्यदृष्टया चिरात्सुखम् ॥ ५० ॥

भा०—अब रोगी के शुभाशुभ प्रश्न में छट्टे स्थान का स्वामी पाप ग्रह लग्न में हों और जन्म राशि को देखता हो तो उस रोगी का मरण निश्चय पण्डित कहें ॥ ४९ ॥ चौथे आठवें स्थान में चन्द्रमा हो अथवा पाप ग्रहों के बीच में हों तो रोगी की मृत्यु निश्चय से जानना, तथा जो शुभ बलपूक्त हो कर देखे तो रोगी शीघ्र सुखी होवे ॥ ५० ॥

विधौ लग्ने स्मरे भानौ रोगी याति यमालयम् ।

प्रश्ने क्रूर ग्रहे लग्ने रोगवृद्धिश्च कित्सकात् ॥ ५१ ॥

तथा लग्नगते सौम्ये वैद्योक्तममृतं वचः ।

लग्नं वैद्यो घुनं व्याधिः खं रोगी तुर्य मौषधम् ॥ ५२ ॥

पापयुक्त न हों तो प्रश्नकर्ता के हृदय में स्नेह व कृपा रहे, इनसे विपरित हो तो अर्थात् शुभग्रह के स्थान में पापग्रह हों तो उनका फल जानना ॥ ६६ ॥

दूसरे स्वामी का प्रश्न ।

पृष्ठेश्वरेणव्ययपेन केन्द्रे यदीत्थशालं कुरुते विलग्नपः ।

प्रभुस्तदान्यः प्रभुरर्थदः स्यादतः प्रतीपान्न भवेत्परः प्रभुः ॥६७॥

लग्नेश्वरे स्वर्गगते स्वतुंगे केन्द्रस्थिते शीतकरेत्यशाले ।

शुभग्रहेहृष्टयुते चलान्विते प्रष्टुर्निजस्वाम्यमितार्थलाभः ॥६८॥

भा०—दूसरे स्वामी के प्रश्न में यदि छुट्टे भाव के स्वामी वा वारहवें भाव के स्वामी से केन्द्र में स्थित लग्नेश इत्यशाल करे तो प्रश्नकर्ता को अन्य स्वामी धनका देने वाला होगा, इनसे विपरित हो तो अन्य प्रभु नहीं होंगे ॥६७॥ लग्नका स्वामी अपनी राशि वा अपने उच्च में केन्द्र स्थित होकर चन्द्रमा से इत्यशाल कर्ता हो तथा शुभग्रहों से युक्त छष्ट और चलवान हो तो प्रश्नकर्ता को अपने ही स्वामी से अगल्य धन प्राप्त होंगे ॥ ६८ ॥

जायेश्वरे स्वोच्चनिजर्क्षसंस्थे केन्द्रस्थिते शीतः करेत्यशालेग ।

शुभग्रहेहृष्टयुते चलोत्कटेः प्रष्टुस्तदान्य प्रभुरर्थदा भवेत् ॥६९॥

इदं गृहं वा शुभमन्यदालयं स्थानं त्विदं वाऽशुभमन्यदालयम् ।

ममात्र भद्रं गमनात् तत्र वा पृष्ठोदयेत्थ विधिना विमृश्य ॥७०॥

भा०—नप्तम भावका स्वामी अपनी उच्चराशि वा अपने घरमें हो और केन्द्र स्थान में स्थित चन्द्रमा के साथ इत्यशाल हो और चलवान शुभग्रह देखते हों वा युक्त हों तो प्रश्नकर्ता को अन्य प्रभु धनका देने वाला होंगे ॥ ६९ ॥ यह गृह हमारे को शुभदायक है अथवा अन्य स्थान, तथा यह स्थान अशुभ वा अन्य स्थान, और गमन में शुभ होगा वा नहीं, इन प्रश्नों में लग्नेश, काणेश के इत्यशाल ईसराफादि योग से शुभाशुभनुसार विचार कर कहना ॥ ७० ॥

स्वान दर्शन प्रश्न ।

लग्नेऽर्केनृपतिं वह्निं शस्त्रं पश्यन्ति लोहितम् ।

श्वेतं पुष्पं सितं वस्त्रं नारीं च शीतगौ ॥७१॥

पापयुक्त न हो तो प्रश्नकर्ता के हृदय में स्नेह व कृपा रहे, इसमें विपरीत हो तो अर्थात् शुभग्रह के स्थान में पापग्रह हों तो उल्टा फल जानना ॥ ६६ ॥

दूरे स्वामी का प्रश्न ।

पष्टेश्वरेणव्ययणेन केन्द्रे यदीत्थशालं कुरुते विलग्नपः ।

प्रभुस्तदान्यः प्रभुरर्थदः स्यादतः प्रतीपान्न भवेत्परः प्रभुः ॥६७॥

लग्नेश्वरे स्वर्गगते स्वतुंगे केन्द्रस्थिते शीतकरेत्यशाले ।

शुभग्रहोदृष्टयुते बलान्विते प्रष्टुर्निजस्वाम्यमितार्थलाभः ॥६८॥

भा०—दूरे स्वामी के प्रश्न में यदि छत्रे पाप के स्वामी वा वारहवें भाग के स्वामी से केन्द्र में स्थित लग्नेश इत्थशाल करे तो प्रश्नकर्ता को अन्य स्वामी धनका देने वाला होगा, इसमें विपरीत हो तो अन्य प्रभु नहीं होंगे ॥६७॥ लग्नका स्वामी अपनी गणि वा अपने उच्च में केन्द्र स्थित होकर चन्द्रमा से इत्थशाल करना ही तथा शुभग्रहों से युक्त छत्र और बलवान हो तो प्रश्नकर्ता को अपने ही स्वामी से अग्रन्थ धन प्राप्त होंगे ॥ ६८ ॥

जायेश्वरे स्वोच्चनिजर्क्षसंस्थे केन्द्रस्थिते शीतः करेत्यशालेग ।

शुभग्रहोदृष्टयुते बलोत्कटेः प्रष्टुस्तदान्य प्रभुरर्थदो भवेत् ॥६९॥

इदं गृहं वा शुभमन्यदालयं स्थानं त्विदं वाऽशुभमन्यदालयम् ।

ममात्र भद्रं गमनात् तत्र वा पृष्ठोदयेत्य विधिना विमृश्य ॥७०॥

भा०—सप्तम भावका स्वामी अपनी उच्चराशि वा अपने घरमें हों और केन्द्र स्थान में स्थित चन्द्रमा के साथ इत्थशाल हो और बलवान शुभग्रह देखते हों वा युक्त हों तो प्रश्नकर्ता को अन्य प्रभु धनका देने वाला होंगे ॥ ६९ ॥ यह गृह हमारे को शुभदायक है अथवा अन्य स्थान, तथा यह स्थान अशुभ वा अन्य स्थान, और गमन में शुभ होगा वा नहीं, इन प्रश्नों में लग्नेश, कार्गेश के इत्थशाल ईमराफादि योग से शुभाशुभ्यनुसार विचार कर कहना ॥ ७० ॥

स्वप्न दर्शन प्रश्न ।

लग्नेऽर्केनृपतिं वन्हि शस्त्रं पश्यन्ति लोहितम् ।

श्वेतं पुष्पं सितं वस्त्रं नारीं च शीतगौ ॥७१॥

रक्तं मांसं प्रवालं च सुवर्णं धरणीसुते ।

बुधे खेगमनं जीवे धनं बंधमागमम् ॥ ७२ ॥

भा० — लग्नमें मूर्य हो तो राजा, अग्नि, हथियार रक्तवर्ण के पदार्थों में आते हैं, चन्द्रमा हो तो सफेद फूल, वस्त्र, चन्दन, स्त्री, व सफेद रंग के वस्त्र इष्टि पयमें होते ॥ ७१ ॥ मङ्गल लग्नगत होने से रक्त, मांस, मूंगा सुवर्ण पदार्थ दीख पडे बुध हो तो आकाश में गमन दीख पडे, वृद्धसति हो धन तथा बन्धुजनो से समागम स्वप्नगत होवे ॥ ७२ ॥

जलावगाहनं शुके शनौ तुंगावरोहणम् ।

लग्नलग्नांशपवशात्स्वप्नो वाच्योऽथवा बुधः ॥७३॥

सर्वोत्तमवलाद्वापि खेटा बुध्या विचिन्तयेत् ।

बलसाम्ये फलं मिश्रं दुःस्वानो निर्वलैः स्वर्गैः ॥७४॥

भा० — यदि लग्न में शुक हो तो जन में स्नानादि, शनि हो तो जने पर चढ़ना, पवनस लग्न व लग्नांश म्यामी के पश से पंडितों करके स्नान का फल कल्याण चार्तिये ॥ ७३ ॥ यथा मानी बुद्धि में जो ग्रह मयमें उत्तम बला में हो उतम मय में फल चढ़ना, बल समान हो तो मिला भया अधान् यथा बुध हो तो पशार का स्नान करना तथा जो स्नानकर्ता ग्रह निर्वल हो तो दुःस्वप्न चढ़ना ॥ ७४ ॥

रविगमने शशिदृष्टे रविशशिममेते विलग्नाद्वा ।

स्वर्गं दृष्टं प्रवदेत्प्रप्लुतं ग्नान्तगन्कालः ॥७५॥

भा० — यदि रवि गमनसे शशि दृष्ट हो या रवि मय चन्द्र हो तो स्वर्ग में गमन काल दे पावे, यदि स्वानो में हो देगा ॥ ७५ ॥

अथ चन्द्रमसि विचारः ।

अथ चन्द्रमसि विचारः ।

अथ चन्द्रमसि विचारः ।

भाषार्थ—लग्न स्वामी ममम स्वामी में इन्धजाल कम्पा दृष्ट्या मित्ररूपि से परस्पर दोनों का सम्बन्ध हो तो आग्नेय (शिकार) मफल होवे, शत्रु-दृष्टि हो तो निष्फल अथवा अनिष्टमिथम से आग्नेय की प्राप्ति होवे, ॥७६॥ लग्न का स्वामी ममम में और ममम भाव का स्वामी लग्न में हो तो शिकार बहुत प्राप्त होवे, तथा ममम भाव का स्वामी चतुर्थ वा दशम हो तो शिकार कुछ थोड़ा भी प्राप्त नहीं होवे ॥ ७७ ॥

ज्ञभोमो सत्रलो सिद्धिरस्तांशे मृगयाच्युतिः ।

लग्नद्युने पत्पती च हेतुस्तेर्जलजादिगोः ॥ ७८ ॥

क्राकान्तानि यावन्ति मध्ये भानीन्दुलग्नयोः ।

तावन्तः प्राणिनो वाच्या द्वित्रिणाः स्वांशकादिपु । ७९ ॥

भाषार्थ—बृध और मंगल चलाएन हो तो शिकार सिद्ध होवे जो बृध मंगल ममम भाव के नवांश में हो तो शिकार हाथ से छूट जावे लग्न और ममम राशि वा उनके पतिस्थल आकाश जैसी राशियों में वा जँसे स्वभाव के हो वेसी ही आग्नेय कहना ॥ ७८ ॥ चन्द्रमा के मध्य जितनी राशि आकाश हो उतने प्राणी आग्नेय में प्राप्त होवेगे, जो वे अपने वा उच्च मित्रांशकों में हो तो दृग्गण विगुण आग्नेय प्राप्त हो और वर्गोत्तम में होने से अनेक गुणा आग्नेय प्राप्त होवे ऐसा कहना ॥ ७९ ॥

किमदन्ती ।

लग्नतुं लग्नेश्वरशीतगूदयेः शुभान्वितैः केन्द्रगतैस्तु सत्या ।

पापान्वितैः पापानिरीक्षितैश्च त्रिकस्थितैर्वा भवतीहमिथ्या ८०

शुभदृग्योगतः सौम्यां वार्ता सत्यां विनिर्दिशेत् ।

पापदृग्योगतो दुष्टा वार्ता सत्पमेति कीर्त्यते ।

लग्नेश्वरे भाविवक्रे मिथ्या वार्ता भविष्यति ॥ ८१ ॥

भाषार्थ—लग्न, लग्नस्वामी और चन्द्रमा, शुभ ग्रहों से युक्त केन्द्र स्थित हो तो सुनी हुई बात सच्ची, और पाप ग्रहों से युक्त वा दृष्ट वा त्रिक ३।८।१२ में स्थित हो तो मिथ्या ॥ ८० ॥ लग्न और चन्द्रमा

कर्म शलग्नाधिपतीत्यशाले चौरः स्वमादाय पुरात्पलायते ।
चन्द्रेऽस्तपेचाऽर्ककरप्रविष्टे तल्लभ्यते नष्टधनं सतस्करम् ८७
तस्मैश्वरे केन्द्रगतेऽस्ति चौरस्तत्रै व वान्यत्र पुराद्विनिर्गतः ।
धर्म शत्रुश्रिणयपतीत्यशालं जायेश्वरेऽन्यत्रगतः स चौरः ८८

भा — दशम भाव का स्वामी लग्नेश से इत्यशाल करना हो तो चौर धन लेकर पुर से भाग जायगा और चन्द्रमा व सप्तमेश ये दोनों ग्रह-गत हो तो चौर नहीं धन का लाभ होवे ॥ ८७ ॥ सप्तम भावका स्वामी हो तो चार नहीं है पुर से बाहर नहीं भागा धर्मेश और तृतीयेश व सप्तमेश से इत्यशाल हो तो चौर भाग गया है ऐसा कहना ॥ ८८ ॥

कर्म शलग्नाधिपतीत्यशाले तल्लभ्यते राजकुलान्च चौर्यम् ।
त्रिधर्मपद्य नपतीत्यशाले त्वन्यत्रप्रदेशादुगमने तदाप्तिः ८९
शुभेत्यशाले हिमगो विलग्ने स्वस्थेऽथ वा नष्टधनस्यलाभः ।
सुस्नेहदृष्ट्या रविणा शुभेन दृष्टे विलग्ने हिमसौच लाभः ९०

भा०—दशमेश लग्नेश का इत्यशाल हो तो राजकुल से चौर पकड़ा जाये, तथा तीमने नये और मानवे इन भावों के स्वामी का इत्यशाल हो तो दूरने देश जाने से चोरी की प्राप्ति होवे ॥ ८९ ॥ लग्न में अथवा दशम भाव में स्थित चन्द्रमा शुभग्रहों से इत्यशाल करे तो नष्ट हुए धन का लाभ होवे, और जो लग्न चन्द्रमा को सूर्य व शुभ ग्रह मित्रदृष्टि से देखे तो भी वही फल होवेगा ॥ ९० ॥

स्थिरादये स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेपिवा ।
स्थितं तत्रैव तद्द्रव्यं स्वर्कायेनैव चोरितम् ॥ ९१ ॥
आदिमध्या वसानेषु द्रेष्काणेषु विलग्नतः ।
द्वारदेशे तथा मध्ये गृहान्ते च वदेद्धनम् ॥ ९२ ॥

भाषार्थ—स्थिरलग्न का उदय हो, वा स्थिरराशि का नवांश हो, अथवा वर्गोत्तम राशि हो, तो उसी जगह पर द्रव्य स्थित है अथवा आपस में किसी ने चोराया है ॥९१॥ जो लग्न का प्रथम द्रेष्काण हो तो घर के

सुख दुःखों का द्रष्टृ हो वा शुभ अहं युक्त हों तो सौम्य वार्ता सत्य क्रूर
 वार्ता हो तो अज्ञान जनना, पापद्रष्टि योगमें क्रूर वार्ता सत्य, सौम्य
 वार्ता अज्ञान जन्मेग नहीं होने वाला हो तो सभी वार्ता भिन्न्या होवैगी ८१
 नयं द्रव्य लाभ का प्रश्न ।

प्रश्ने चतुर्धाधिपतिस्तत्रस्थे वावलोकिते ।

आश्रयं वर्तते तत्र धनं चन्द्रेऽथवा भवेत् ॥ ८२ ॥

नितये धनमे वंशे वास्ति तत्र धनं बहु ।

पाप तर्कगने द्रव्यं स्थित तूर्णं न लभ्यते ॥ ८३ ॥

८२- प्रश्न द्रव्य लाभ के प्रश्न में, प्रश्न लग्न में चतुर्धा धान का सामीप्य
 वा अश्रयस्थ धन लाभ होवे, वा आश्रय धन प्राप्त होवेगा अथवा
 अश्रय धन प्राप्त होवेगा तो भी द्रव्य प्राप्त प्राप्त होवेगा ऐसा कहना
 ८३- नितये धनमे वंशे वास्ति धान वा चतुर्धा धान में हो तो बहुत धन
 प्राप्त होवेगा ८४- पाप तर्कगने द्रव्य लाभ न प्राप्त होवे ॥ ८३ ॥

भोगे महापापशुभे भनमन्यत्र नाप्यते ।

गन्धे भूमोर्भातिदृष्टे तदा द्रव्यं न लभ्यते । ८४ ॥

८४- भोगे महापापशुभे भनमन्यत्र नाप्यते तो अन्वय धन
 न प्राप्त होवेगा ८५- गन्धे भूमोर्भातिदृष्टे तदा द्रव्यं न लभ्यते ॥ ८४ ॥
 तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते ॥ ८५ ॥
 तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते ॥ ८६ ॥
 तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते ॥ ८७ ॥
 तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते ॥ ८८ ॥
 तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते ॥ ८९ ॥
 तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते तर्कगने द्रव्यं न लभ्यते ॥ ९० ॥

कर्म शलग्नाधिपतीत्यशाले चौरः स्वगादाय पुरात्पलायते ।
चन्द्रेऽस्तपेचाऽर्ककरप्रविष्टे तल्लभ्यते नष्टधनं सतस्करम् ८७
तस्त्वश्वरे केन्द्रगतेऽस्ति चौरस्तत्रै व वान्यत्रपुराद्विनिर्गतः ।
धर्मशुद्धिश्चिन्त्यपतीत्यशालं जायेश्वरेऽन्यत्रगतः स चौरः ८८

भा — दशम भाग का स्वामी लग्नेश से इन्धशाल करता हो तो चौर धन लेकर पुर से भाग जायगा और चन्द्रमा व रासमेश से दोनों अस्म-गत हो तो चौर महिष धन का लाभ होवे ॥ ८७ ॥ दशम भागका स्वामी हो तो चार बर्ती है पुर से बाहर नहीं भागा धर्मेश और तृतीयेश व सप्तमेश से इन्धशाल हो तो चौर भाग गया है पैसा कहना ॥ ८८ ॥

कर्म शलग्नाधिपतीत्यशाले तल्लभ्यते राजकुलान्च चौर्यम् ।
त्रिधर्मपद्य नपतीत्यशाले त्वन्यत्प्रदेशाद्गमने तदाप्तिः ॥ ८९ ॥
शुभेत्यशालं हिमगो विलग्ने स्वस्थेऽथ वा नष्टधनस्यलाभः ।
सुस्नेहदृष्ट्या रविणा शुभेन दृष्टे विलग्ने हिमस्तौच लाभः ९०

भा० — दशमेश लग्नेश का इन्धशाल हो तो राजकुल से चौर पकड़ा जावे, तथा तीसरे नवरे और मानवे इन भाशों के स्वामी का इन्धशाल हो तो दूसरे देश जाने से चोरी की प्राप्ति होवे ॥ ८९ ॥ लग्न में अथवा दशम भाग में स्थित चन्द्रमा शुभग्रहों से इन्धशाल करे तो नष्ट हुए धन का लाभ होवे, और जो लग्न चन्द्रमा को सूर्य व शुभ ग्रह मित्रदृष्टि से देखे तो भी वही फल होवेगा ॥ ९० ॥

स्थिरोदये स्थिरांशे वा वर्गोत्तमगतेपिवा ।
स्थितं तत्रैव तद् व्यं स्वकीयेनैव चोरितम् ॥ ९१ ॥
आदिमध्या वसानेषु द्रेष्काणेषु विलग्नतः ।
द्वारदेशे तथा मध्ये गृहान्ते च वदेद्दनम् ॥ ९२ ॥

भाषार्थ—स्थिरलग्न का उदय हो, वा स्थिर राशि का नवांश हो, अथवा वर्गोत्तम राशि हो, तो उसी जगह पर चोरित होवे, अथवा आपस में किसी ने चोराया है ॥ ९१ ॥ जो लग्न का द्वारदेश तो घर के

करता हो तो नष्ट धन का लाभ होने, तथा यदि अष्टम स्वामी का स्वामी लभ में हो तो चोर स्वयं धन देवे ॥ ६७ ॥ धनभाव का स्वामी स्वयं के साथ हो अथवा धरतंगत हो तो चोर मिल जावे, तथा लग्नेश दशमेश का इत्यशाल हो तो धन सहित चोर प्राप्त होजावे ॥ ६८ ॥

लग्नेशदृष्ट्यभावे चौरः सह मात्रया याति ।

अस्ताधिपतो दग्धे रविरश्मिगतेऽथलभ्यते चौरः ॥६९॥

लग्नपकृतेत्यशाले राजभयाद्धनमिदं स्वयं दत्ते ।

लमास्तपयोर्नस्याद्यदि दृष्टिलग्नपस्तथा विकलः ॥१००॥

मापार्थ—लग्न स्वामी दृष्टि मन्त्रम भाव पर नहीं हो तो चोर धन सहित आवेगा, सप्तम भाव का स्वामी दग्धय धरतंगत हो तो चोर पकडा जावे ॥ ६९ ॥ लग्नेश का मन्त्रमेश में इत्यशाल हो तो राजा के मयसे चोर स्वयं धन दे देवे और लग्नेश मन्त्रमेश की दृष्टि न हो तथा लग्न स्वामी कलाहीन हो ॥ १०० ॥

तत्तस्करो स्वहस्ताद्दाति चौर्यं हि राजकुले ।

लग्नपमध्यपयोगे राजकुलं प्राप्य लभ्यते चौर्यम् ॥ १ ॥

रंभ्रं चौरस्य धनं धनदे तत्राथ सप्तमे नाप्तिः ।

रंभ्रपतो धनपस्य तु मुथशिलयोगे तु प्राप्यते वित्तम् ॥२॥

मापार्थ—तो चोर अपने हाथ से राज सभा में चोरी का धन दे देवे, और लग्नस्वामी दशम स्वामी एक साथ हो तो राज द्वार से चोरी मिले ॥ १ ॥ अष्टम भाव चोरी का धन, तर्हा धनेश धनेश हो अथवा धनेश सप्तमहो तो धन नहीं मिले और अष्टम भाव का स्वामी धनेश से इत्यशाल करता हो तो धन प्राप्त होवे ॥ २ ॥

रंभ्रपतो दशमपतेमुथशिलगे चौरपक्षकृद्भूपः ।

धनपति लग्नपचैको दृष्टि विहीने श्रुतिर्भवति नोप्राप्ति ३

मापार्थ—अष्टम भावस्वामी दशमभावस्वामी का इत्यशाल हो तो

फारना उम प्रह के अनुसार जानि नय जाना चोर कहना अथवा चोरका महापक जानना. इम प्रकार जानने में अन्य भी विचार कहना. सो इम प्रकार कि पूर्वोक्त योग कर्ता मूर्ख हो तो घर के स्वामी का शिवा चोर है ॥ ८ ॥ चन्द्रमा हांती भागा शुक्र हांती स्त्री जनि हांती पय वा दाग बृहस्पति घर का प्रधान मंगल के पुत्र जयवा भाई कहना ॥ ९ ॥

ज्ञे स्वजनो मित्रं वा ज्ञात्वेत्यं पुण्य सहम मावेश्यम् ।

तस्मिन् क्रूरादृष्टे पुरा न चोरोस्तपे पुरापि स्यात् ॥१०॥

अस्तेशान्मृमरिफे भौम श्रौरः पुरापि निगृहीतः ।

सप्तेशे रविपुत्रे चन्द्र दशा तस्करो हि पाखंडी ॥११॥

भा०—बुध हांती राजन वा मित्र ऐसा जान कर पुण्य सहम देखना पुण्य सहम पर क्रूर दृष्टि न हो तो प्रथम चोर नहीं था सप्तमेश पाप दृष्ट हो तो पहिले भी चोर था ॥ १० ॥ तथा मन्मथ भाव स्वामी से मंगल का ईसराफ योग हांती चोर प्रथम भी चोरी में पकटा गया था सप्तमेश शनि हो और चंद्रमा की दृष्टि. हांती चोर पाखंडी है ऐसा कहना ॥ ११ ॥

जीवो विलोक्य लोकं भौमे खातेन तालकं भंक्त्वा ।

प्रति कुंचिकयापहतं सितेतिथिज्ञे प्रपंचकरः ॥ १२ ॥

भा०—बृहस्पति की दृष्टि पूर्वोक्त शनि परहांती लोक में विदित है मंगल मन्मथ में हो और चंद्रमा की दृष्टि हांती कामल देकर ताली जूनीर आदि तोड कर चोरने धन हरा है तथा सप्तम शुक्र चन्द्र दृष्ट हांती अपूर्व (नवीन) चोर हैं. बुध चन्द्र दृष्ट हांती प्रपंची चोर जानना ॥ १२ ॥

चोर की आयु ज्ञान ।

चौरस्य वयोज्ञाने सिते युवाज्ञे शिशुर्गुरौ मध्यः ।

तरुणो भौमे मन्दे वृद्धोऽर्के स्यादतिस्थविरः ॥ १३ ॥

तनुनभयोः स्वगृहे वा स्मरभूम्योर्भूमिलाभयोर्मध्यम् ।

चरति रवौ नव मध्यम वृद्ध वयोतीतकाः क्रमशः ॥१४॥

भाषार्थः—यह चौर है या नहीं यह जानने को चन्द्रमा पाप ग्रह में इत्यशाल करवा हो तो चौर होगा, जो शुभ ग्रह में इत्यशाल करे तो चौर नहीं है ऐसा कहना ॥ १८ ॥ हमने कभी चोरी कही या नहीं हम प्रश्न में लग्न का स्वामी या चन्द्रमा से लग्न स्वामी का ईशान्य योग हो तो पहले भी चोरी करी है ॥ १८ ॥

चौर की हो अथवा पुरुष ।

चौरः स्त्री पुरुषो वा पृच्छ्याथ मस्तपे स्त्रियो राशौ ।

स्त्रीखेटे स्त्रीदृष्टे चौरः स्त्री व्यत्ययात्पुरुषः ॥ २० ॥

लग्नेशेनवमांशतो वयः प्रमाणजातयो ज्ञेयाः ।

चौरायमिहानन्तं शास्त्रं कथितोय मुद्देशः ॥ २१ ॥

भाषार्थः चौर स्त्री वा पुरुष, ऐसे प्रश्न में लग्न भाव का स्वामी स्त्री राशि में हो, स्त्री ग्रह हो या स्त्री ग्रह की दृष्टि हो तो चोरी स्त्री ने करी है इससे विपरीत हो अर्थात् लग्नेश पुरुष राशि में पुरुष ग्रह और पुरुष ग्रह की दृष्टि से युक्त हो तो चौर पुरुष जानना ॥ २० ॥ लग्न स्वामी के नवांश वश से चौर की अथवा का प्रमाण और ज्ञानि को जानना, अथवा लग्न में द्रुपदाण वश से रूप रंग आकृति कहना, विशेष विचार करने का शास्त्र अनन्त है यहां बुद्धि-मार्तो के निश्चयार्थ उद्देश मात्र वर्णन किया है ॥ २१ ॥

सन्तान का प्रश्न ।

लग्नेश्वरेणाथ निशाकरेण यदीत्थशालं कुरुते सुतेशः ।

शुभः शुभेस्संयुत ईक्षितः स्यात्ससंतति प्रष्टुरसौ विदध्यात् ॥ २२ ॥

पुंस्त्रीग्रहाः पुत्रग्रहं विलग्नारपश्यन्तियावन्त इहातिवीर्याः ।

तत्संख्यकः स्युस्तनयाश्च कन्याः शुभेशयोगात्सुतभांशतुल्याः ॥

भाषार्थ—सन्तान प्रश्न में लग्न के स्वामी अथवा चन्द्रमा से पंचम भाव का स्वामी इत्यशाल करे तथा पंचमेश शुभ ग्रह हो, शुभ ग्रह से युक्त वा शुभ दृष्ट हो तो प्रश्नकर्ता को संतति देवे है ऐसा कहना ॥ २२ ॥ जितने पुरुष सप्तक ग्रह चलवान होकर पंचम भाव को देखें उतने पुत्र तथा जितने स्त्री ग्रह बली होके देखें उतनी कन्या हों अथवा पंचम में जितने नवांश युक्त हों उतनी

संयोग संज्ञाने जाने किन्तु यह संख्या पूर्वोक्त इत्यशाल हृत् में और अपने
साथी सुभक्त में होने से होने है ॥ २३ ॥

लग्नेरापुत्राधिपती परम्परं नपश्यतश्चेद्दुदयं च पंचम ।
पारिभ्रशालो मुतलग्नगो च प्रस्पृष्टस्तदा संततिनास्तितां नदेत् ॥
पुत्रालये सिंहवृपालिकन्या प्रनोदयाज्जन्मभवस्तथेन्दोः ।
तन्ममजः संततिस्तदाहः स्यात्पापैः मुतक्षे स हितेक्षिते वा ॥२४॥

वक्तव्य : लग्न सारणी, पंचम सारणी ये दोनों परस्पर न देखें तथा लग्न
संयोग का भी न देखें तथा लग्नेश पंचम पापशाली हों तो
हस्त सारणी देखना पड़ेगा ॥ २४ ॥ पंचम भाग में सिंह, वृष अधिपक, कन्या
पुत्रालय का संयोग होने से कठि भी भाग्य ही, परन्तु लग्न स वा जन्म लग्न सं
योग का भी पंचम भाग में देखा, पूर्वोक्त सारणी पंचम भाग में ही तो
पंचम भाग में देखा जाय, पंचम भाग में देखा, पूर्वोक्त सारणी पंचम भाग में ही तो
पंचम भाग में देखा जाय, पंचम भाग में देखा, पूर्वोक्त सारणी पंचम भाग में ही तो

संयोगः स्यात्संयोगो यमाहो प्रस्पृष्टः स्मिगं मंदिशतश्च नंयाम् ।
सिद्धिर्हस्तस्य चन्द्र ॥ सदायां वा काहवंध्यां ननयाप्रमर्शाम् ॥२६॥

वक्तव्य : संयोग का संयोग सारणी सारणी में देखा जाय, पूर्वोक्त सारणी पंचम भाग में ही तो
पंचम भाग में देखा जाय, पंचम भाग में देखा, पूर्वोक्त सारणी पंचम भाग में ही तो
पंचम भाग में देखा जाय, पंचम भाग में देखा, पूर्वोक्त सारणी पंचम भाग में ही तो

संयोगः स्यात्संयोगो यमाहो प्रस्पृष्टः स्मिगं मंदिशतश्च नंयाम् ।
सिद्धिर्हस्तस्य चन्द्र ॥ सदायां वा काहवंध्यां ननयाप्रमर्शाम् ॥२६॥
संयोगः स्यात्संयोगो यमाहो प्रस्पृष्टः स्मिगं मंदिशतश्च नंयाम् ।
सिद्धिर्हस्तस्य चन्द्र ॥ सदायां वा काहवंध्यां ननयाप्रमर्शाम् ॥२६॥

संयोगः स्यात्संयोगो यमाहो प्रस्पृष्टः स्मिगं मंदिशतश्च नंयाम् ।
सिद्धिर्हस्तस्य चन्द्र ॥ सदायां वा काहवंध्यां ननयाप्रमर्शाम् ॥२६॥

स्वामी अष्टम में हो वा चन्द्रान हों तो ग्री को पुत्र देने वाला मनु नहीं प्राप्त होंगे ॥ २७ ॥ अथवा शुक्र मय अष्टम स्थान में स्थित हों और पाप ग्रह दूसरे, भागहों और आठवें स्थित हों तो प्रश्नकर्ता के मन्तान होकर मरते जायें और आगे भी अच्छे प्रकार मन्तान सुख न होंगे ॥ २८ ॥

रिष्केश्वरं केन्द्रगते च सौम्यैर्युतेक्षिते जीवति वालकश्च ।
अपूर्णाभासे शुभयुक्त इन्दो केन्द्रे शिशुर्जीवति दीर्घकालम् ।

भा - राहवें भाव का स्वामी जो केन्द्र । १ । ४ । ७ । ८० । स्थान में हो और शुभ ग्रह युक्त छद्मो तो बालक जीवता है तथा पूर्ण चन्द्रमा शुभग्रहोंमें युक्त केन्द्र में स्थित हो तो बालक बहुत काल तक जीवता है ॥ २९ ॥

पंचमेशोथ लग्नेशो विपमस्थानगो यदा ।

पुत्र जन्मप्रदो ज्ञेयो कन्यानां समराशिगो ॥ ३० ॥

युग्मराशिगते लग्ने यदा तत्र शुभग्रहाः ।

गर्भेऽपत्यद्वयं वाच्यं देवज्ञेन विपश्चिता ॥ ३१ ॥

भाषार्थ--पंचम भाव का स्वामी वा लग्न का स्वामी जो विपम स्थान में हों तो पुत्र जन्म देने वाले जानने, मम राशि में हों तो कन्या का जन्म देंगे ॥ ३० ॥ जो लग्न विपम राशि वाला हो और यहां शुभ ग्रह स्थित हों तो गर्भ में दो बालक कहना, ऐसा देवज्ञानों करके कहा गया है ॥ ३१ ॥

विपमोपगतो लग्नाच्छनिः पुत्रसुखप्रदः ।

समभे योपितां जन्म विशेषं जातकोक्त्वित् ॥ ३२ ॥

भा०-लग्न से शनि विपम स्थान में हो तो पुत्र सुख का देता है, सम राशि में क या जन्म को देता है, विशेष विचार जातकोक्त्वित् यहां जानना ।

भोजन चिन्ता ।

कटुको लवणस्तिकतो मिश्रितो मधुरो रसः ।

अम्लः कषायः कथिता रव्यादीनां रसा बुधेः ॥

लग्नं पश्यति यः खेटस्तस्य यः कथितो रसः ।

भोजनेऽसौरसो वीर्यकमाद्वाच्चः परे रसाः ॥ ३४ ॥

भाषणे -- पण्डितो ने सर्वादि ग्रहों के रस वर्णन किये हैं सो इस प्रकार
 ति सूर्य का कटु रस, चन्द्रमा का स्वादा, मङ्गल का तिक्त (चरपरा) बुध का
 तिक्त, उदयति का मधुर रस, शुक का अम्ल (खट) शनि का कषाय
 (चर्मला) ॥ ३३ ॥ लग्न को जो वनी यह देगना हो उग ग्रहका जो रस कहा
 गया है सो भोजन में विशेष रस कहना, पुनः कम से अन्य रस कहना ॥ ३४ ॥

नन्दो गम्य मृगशिलास्तस्य विशेषं वदेद्भुक्तो ।

नस्ते रात्रौ मंदे रविदृष्टे भोजनाभावः ॥ ३५ ॥

भाषणे -- रात्रौ भोजन में दृश्यात् कम्पा हो गय ग्रह का रस भोजन
 में विशेष रस, नस्ते रात्रौ मंदे रविदृष्टे रात्रौ शनि सूर्य के अदि हो तो भोजन
 का अभाव वदना भोजन नहीं पाय लो ॥ ३५ ॥

रात्रौ भोजन किया जायन ।

शुक्रस्य वा भूतं पृथ्वायां यदि भवेत्स्थिरं लग्नम् ।

नन्दमहात्मानं इवात्मनि वेत्तदयं चमं स्वमकृत ॥ ३६ ॥

नन्दो लग्नमो म्यात्तारं भूमिं च कटुकमम्लमृगं ।

स ॥ रविर्दृष्टिं निहं शुकं स्निग्धं चमं च सर्वममम ॥ ३७ ॥

भाषणे -- शुक्रस्य वा भूतं पृथ्वायां रात्रौ हो ना मक नार द्विःभाषण
 नन्दमहात्मानं इवात्मनि वेत्तदयं चमं स्वमकृत नन्दो महात्मान
 नन्दो लग्नमो म्यात्तारं भूमिं च कटुकमम्लमृगं शुक्र सन्ध, नृदृष्टिं
 स ॥ रविर्दृष्टिं निहं शुकं स्निग्धं चमं च सर्वममम नन्दो हा ना विम्ल, नृदृ
 हा ना मय लो

इह शुक्रस्य वा भूतं पृथ्वायां यदि भवेत्स्थिरं लग्नम् ।

नन्दमहात्मानं इवात्मनि वेत्तदयं चमं स्वमकृत ॥ ३८ ॥

नन्दो लग्नमो म्यात्तारं भूमिं च कटुकमम्लमृगं ।

भाषणे -- शुक्रस्य वा भूतं पृथ्वायां रात्रौ हो ना मक नार द्विःभाषण
 नन्दमहात्मानं इवात्मनि वेत्तदयं चमं स्वमकृत नन्दो महात्मान
 नन्दो लग्नमो म्यात्तारं भूमिं च कटुकमम्लमृगं शुक्र सन्ध, नृदृष्टिं
 स ॥ रविर्दृष्टिं निहं शुकं स्निग्धं चमं च सर्वममम नन्दो हा ना विम्ल, नृदृ
 हा ना मय लो

पाह ग्रहों से ईशराफ और शुभ ग्रहों की शत्रु दृष्टि में इत्यज्ञान करना ही कष्ट से भोजन प्राप्त होने मित्र दृष्टि में इत्यज्ञान हो तो विवाह मयान से प्रकृत्यमा भोजन प्राप्त होते ॥ ३८ ॥

शुभेसराफत्वशुभेत्यशाले चन्द्रे कदन्नं मधुश्याव्यवर्ज्यम् ।

शुभेत्यशालेधम्वलेसराफे शक्यं न भोक्तुं परतोऽपिलब्धम् ॥ ३९ ॥

भा०—यदि चन्द्रमा शुभ ग्रह से ईशराफ और पाप ग्रह से इत्यज्ञान करना हो तो म्याद र्गहन और मधु पृत र्गहन शत्रु भोजन निया ही शुभ ग्रह से इत्यज्ञान हो और पाप ग्रह से ईशराफ योग करना हो तो शुभ भी प्राप्त गया भोजन नहीं मिलेगा ॥ ३९ ॥

चन्द्रे स्वनायदृष्टे सुखभोजनमन्यया कथात् ।

गुरुमुथशिले सगौरवमकेण मुथशिलेऽतिशुचि तांश्चाद ॥ ४० ॥

शुके सुस्वादुरसं सहास्यगीतं बुधे जनार्काणाम् ।

शस्त्रकथाव्यं शशिना कुस्थानगतं कुजे चोष्णम् ॥ ४१ ॥

भा०—चन्द्रमा अपने स्वामी से दृष्ट हो तो भोजन सुख ही अन्यथा कष्ट से भोजन मिलेगा और बृहस्पति में इत्यज्ञान से शुक गौरव से भोजन मिले, सूर्य से इत्यज्ञान हो तो अन्यन्न शुचि ही भोजन प्राप्त होगा ॥ ४० ॥ शुक से सुन्दर स्वाद वाला गन्, बुध से शस्त्र गीतादि गाने हुए बहुत जनों के साथ उत्तम भोजन प्राप्त शस्त्र कथा युक्त कुन्मित स्थान में मङ्गल से उष्ण (गन्) भोजन मिलेगा ॥ ४१ ॥

यदि वदति भोजनार्थं निमंत्रितो यामि शशिमर्दुतयाः ।

एकस्थितयोःकेन्द्रे मुथशिलयोर्वापि पूर्णता भवेत् ॥ ४२ ॥

विधिनानेन शनेः स्यात्कुभोजनं ज्ञसितयोरभोजनम् ।

जीवस्य तुष्टिजनकं होरेशो तनुखगे स्वयमुपैति ॥ ४३ ॥

भा०—यदि कोई पृच्छक कहे कि निमन्त्रित भोजन भोजन मिलेगा, तो इस प्रश्न में चन्द्रमा व मङ्गल एक ही

केन्द्रगतन में इत्याशान करे तो भोजन पूर्णता मे होने ॥ ४२ ॥ इसी प्रकार
मे शनि तो तो कुम्भिन भोजन बुद्ध, शुक्र होतो मन वाञ्छित भोजन प्राप्त
होत, नक्षत्रनि तोचो मन्वन्ता ननक भोजन मिलेगा और लग्नेश हो तो आप
तो मे भोजन प्राप्त होने ॥ ४३ ॥

रवन्देग मुनशिली तस्मिन्नीशे तनोः स्वगृहे भोज्यम् ।

विनेशे भुज्यगृहे भानुणां सहजपे तथान्यत्र ॥ ४४ ॥

रवन्देगमुनशिलीमयस्य भावभ्गेशस्तत्सम्बन्धेन भोजनमितीक्ष्णम्

भाव — रव ग्रह चन्द्रमा मे इत्यशान करना हो, वह ग्रह यदि
रव ग्रह के घर मे भोजन होगा, भ्गेश होतो सेवक के घर. सदन
के घर. कक्षा के घर. मर्त्य के घर एवं अन्य भावों का कहना ॥ ४४ ॥
यदि रव ग्रह रव ग्रह के घर मे भोजन करे वही भोजन का स्वामी हो और
यदि रव ग्रह के घर मे भोजन का विचार करना ।

शुभे शिं चन्द्रगतो भाजागो चन्द्रे तत्र केन्द्रगतो शुभान्वितो ।

विना भयं भद्रमोक्ष पापैः म्यात्थेमनिर्वर्कं गृभोजनम् ॥ ४५ ॥

शुभ ग्रह चन्द्रमा के घर मे हो और चन्द्र का
शुभ ग्रह के घर मे भोजन करे वही भोजन का स्वामी हो और
यदि शुभ ग्रह के घर मे भोजन का विचार करना ॥ ४५ ॥

शुभे शुभे भोजनं च मुखात्तांमवनकमाल् ।

रवना भोजनदन्तेषु चैव कलमार्दशेन ॥ ४६ ॥

शुभ ग्रह के घर मे भोजन करना शुभान्वित
शुभ ग्रह के घर मे भोजन करना शुभान्वित ॥ ४६ ॥

शुभे शुभे भोजनं च मुखात्तांमवनकमाल् ।

रवना भोजनदन्तेषु चैव कलमार्दशेन ॥ ४७ ॥

शुभ ग्रह के घर मे भोजन करना शुभान्वित
शुभ ग्रह के घर मे भोजन करना शुभान्वित ॥ ४७ ॥

श्री पापार रश्मिभ्यो व लग्नेश वा इत्यथान् लामेश से गो गो मुग्ध का
लाभ जानना ॥ ४७ ॥

विवाद प्रश्न ।

क्रूरः स्वचरो लग्ने विवादपृच्छा मुजयति विवादं तम् ।

सर्वविस्वामु परं नीचेऽस्ते जयति न द्विपतः ॥४८॥

लग्नघृने मुक्त्वा परस्परं क्रूर योर्जाकट्टष्टो ।

विवादद्वदादियुगं तच्छ्रिकाभ्यां प्रहरति तदेवम् ॥४९॥

भा० — लग्न में पाप ग्रह हो तो मद्य अवस्था में वादी को जीतेगा परन्तु नीच में हो शत्रु में विजय नहीं पावेगा ॥ ४८ ॥ लग्न पर मप्तम स्थान दृष्टि को टोंट कर पाप ग्रह परस्पर शत्रु दृष्टि से देखते हैं तो दोनों वादियों में छुड़ी चलेगी ॥ ४९ ॥

लग्नघृने च यदि क्रूरः स्वचरो विवादिनोर्न तदा ।

कलहनिवृत्तिः काले जयति हि बलवान्नतबलं तु ॥५०॥

भा०—लग्नमें श्रीर मानवें जो पापग्रह हैं तो वादी की कलह समाप्ति होवेगी, निरवल को बलवान बहुत कालमें जीतेंगे ॥ ५० ॥

लग्नेशसुतपः सौम्याः केन्द्रे संधिर्न वान्यथा ।

लग्नघृनेशपष्टेशारित्वेप्यन्योन्यविग्रहः ॥ ५१ ॥

भा० — लग्न स्वामी श्रीर पंचमेश व छपग्रह केन्द्र स्थान में हों तो सन्धि होगी श्रीर लग्नेश, सप्तमेश, पष्टेश छद्रे स्थान में हों तो दोनों की परस्पर लड़ाई होवेगी ॥ ५१ ॥

गृहमागतो न यदसौ किं बद्धः किमथ वा हत इति प्रश्ने ।

मूर्तो क्रूरो यदि तन्नहतो बद्धोथ वा पुरुषः ॥ ५२ ॥

भा०—जो यह घर नहीं आया तो क्या बांधा गया अथवा मारा गया ? इस प्रश्न में लग्न विषे यदि पापग्रह हों तो मारा नहीं गया कदाचित् वह पुरुष बांधा गया हांती विस्मय नहीं ॥ ५२ ॥

संबन्धेषुः सचेत्करो मृतीशः स्यात्तदा मृतिः ।

लग्नेशोऽस्तमितेषुस्ये कुजदृष्टे तदामृतिः ॥ ५६ ॥

भाषार्थ—करो से दृष्टि के प्रश्न में, जो केन्द्रस्थान का स्वामी केन्द्र में हो, और पतित लग्नेश केन्द्र में हो तो करो नहीं दृष्टेगा ॥ ५६ ॥ सम्बन्ध की इच्छा वाला पापग्रह हो तो मरण होवेगा और लग्नस्वामी जल राशि का होकर मानवें स्थान में हो तो भी मरना होवेगा ॥ ५६ ॥

चन्द्रश्चाम्बुगपापेन मृत्युनाथेन योगकृत् ।

तदा गुप्ता मृतिश्चन्द्रः केन्द्र मन्दयुगीक्षितः ॥ ६० ॥

दीर्घपीडा च भौमेन युग्दृष्टो बन्धताडने ।

दृश्यार्धे लग्नपश्चेस्या द्वयपेनेत्य शालवान् ॥ ६१ ॥

भाषार्थ—चन्द्रमा जल राशि में हो और पापग्रह ने दृष्टमेश से योग करे अर्थात् युक्त हो तो गुप्त मरण होवेगा और केन्द्र में शनि से युक्त वा दृष्ट हो तो भी मरण जानना ॥ ६० ॥ लग्न स्वामी मंगल से युक्त वा दृष्ट हो अथवा दृश्यार्थ में हो और पतित भाव स्वामी से दृश्यज्ञान करता हो तो बंध ताडन में बद्ध पीडा होवेगी ॥ ६१ ॥

पलायते तदा बद्धो व्ययगो लग्नगेपिवा ।

तृतीय नवम स्वमी व्ययगो लग्नपेन च । ६२ ॥

तदेत्यशाल योगेषुस्तदापिच पलायते ।

दृश्यार्धे ह्युपचारेण चन्द्रो मुथशिल स्तदा । ६३ ॥

भा०तृतीय भाव का स्वामी नवम भाव स्वामी वारहवें वा लग्न में हो अथवा लग्नेश के साथ वारहवें हो तो बंधुआ भाग जावेगा ॥ ६२ ॥ तथा जो दृश्यशाल योग की इच्छा वाला हो तो भी भाग जावे, और जो चन्द्रमा दृश्यार्थ में दृश्यशाल योग करे तो भी भागेगा ॥ ६३ ॥

बंधमोक्षस्त्रिधर्मेशः संग्रहः शीघ्रमोक्षकृत् ।

पतितेन्दुस्त्रिधर्मस्थग्रहसम्बन्धकृत्तदा । ६४ ॥

केन्द्रस्थत्रिभवशेन योगेषुश्चेस्तदा चिरात् ।

यावच्छुक्रो बली लग्ने तावत्कर्ता बलाधिकः ॥ ६५ ॥

वा स्वामी वक्रवर्गी हो और उसकी जगह वा चतुर्थेश शुभ ग्रह में युक्त वा दृष्ट हो तो मार्ग में नाश कुशल पर्यन्त लाभ महिष लौटिगी और जो पाप युक्त दृष्ट हो वा पिना पशु के नौका आरंभ ॥ ७० ॥

विलागरन्ध्राधिपती स्वर्गेहे प्रवेक्ष्यतश्चेद्द्वयवहारलाभः ।

यदाष्टमे साम्यस्वगा वलाख्यास्तदा तरी लाभमुखप्रदास्यात् ॥७१॥

भाषार्थः—जो लग्न स्वामी और अष्टम स्वामी अपने घर में हों अथवा अपने घर को देखते हों या व्यवहार से लाभ होंगे तथा जो आठवें घर में शुभग्रह वलाखान विराजमान हों तो नाश लाभ व मुख को देने वाली होंगे ।

कुशला ग्राति पृच्छायां मृत्युयोगे समागते ।

तदा नौरिति शीघ्रेण लाभाद्यं चान्ययोगतः ॥ ७२ ॥

लग्नेशं चन्द्रनाथं वा चन्द्रे वा मृत्युपो यदि ।

पश्येत्क्रूरदृशा नावा समं पश्यति नोपतिः ॥ ७३ ॥

भा०—हमारी नाव कुशल पूर्वक आयेगी ? इस प्रश्न में जो प्रश्न समय मृत्यु योग हो तो नौका शीघ्रता पूर्वक आवे, जो अन्य योग हो तो लाभ सहित आवे ॥ ७२ ॥ लग्न स्वामी, चन्द्र राशि स्वामी वा चन्द्रमा इनको अष्टम स्वामी क्रूर दृष्टि से देखे तो नौका सहित स्वामी का नाश होवेगा ॥ ७३ ॥

लग्नेशाष्टपतिः स्वस्य गेहं नालोकते यदि ।

तदायानस्य वक्त्रव्यं निश्चितं मज्जनं बुधैः ॥ ७४ ॥

ताद्युभौ सप्तमस्थौ चेज्जले वापनिकां वदेत् ।

लग्नचन्द्रपतिक्रूरदृष्ट्याऽन्योन्यंयदीक्षितौ ।

तदा पोतजनानां च मिथः कलहमादिशेत् ॥ ७५ ॥

भा०—यदि लग्न स्वामी और अष्टम स्वामी वे अपने घर को न देखें तो नौका दृवेगी ऐसा निश्चय पण्डितों रुक्के कहना चाहिये ॥ ७४ ॥ तथा ये दोनों लग्नेश और अष्टम स्वामी सप्तम घर में विराजमान हों तो नौका जल में द्रव्य सहित डूब जायगी ऐसा कहना, तथा लग्न स्वामी और चन्द्रमा

शक्ति का, स्वामी ये दोनों जो एक दूसरे को देखें तो नाब वाले जनों का
पसन्द कलह होवे ऐसा कहना ॥ ७५ ॥

क्रिय विक्रय का प्रश्न ।

केना लभपतिर्ज्ञेयो विक्रेता लाभपः स्मृतः ।

गृह्णाम्यहमिदं वस्तु प्रश्न एवंविधे सति ॥ ७६ ॥

वनशालि विलभनं चेद्गृह्यते तत्क्याणकम् ।

तस्मान्क्याणकालाभः प्रष्टुर्भवति निश्चितम् ॥ ७७ ॥

वित्रीणाम्यमुक्तं वस्तु प्रश्न एवंविधे सति ।

व्यायस्थाने गन्तवति विक्रेतव्यं क्याणकम् ॥ ७८ ॥

मद-वृत्त स्वामी लेने वाला जानना, लाभ स्वामी लेने वाला कहा है,
यह प्रश्न है स्वामी वस्तु का इस प्रकार के प्रश्न करने में ॥ ७६ ॥ जो लाभ
पसन्द हो तो वह मा लेना, इस कारण स्वामी होने से लाभ होगा ऐसा
कहना जो विलय वस्तुमानान विचार हम कहना ॥ ७७ ॥ अमुक्त शीत
वस्तु गृह्यते वस्तु का प्रश्न होगा, ऐसा प्रश्न में स्वामी वस्तु का प्रश्नान ही
होने से विक्रेता वस्तु का प्रश्न, ऐसा ऐसा कहना ॥ ७८ ॥

विशेष अर्थ का प्रश्न ।

दिशि वस्तुं भोग्यम्यनिष्पत्तिः क्व च मा नदि ।

परदशाम्बु भंगो दि सव दिशि क्व च ते नदि ॥ ७९ ॥

परदशाम्बु भंगो दि सव दिशि क्व च ते नदि ।

दिशि तस्यां च तस्वाथ्यं दृभिर्ज्ञं च भविष्यति ॥ ८१ ॥

दिशि यस्यां रविस्तत्र धान्यनाशो नृपाद्भवेत् ।

यत्रापि मङ्गलस्तत्र धान्यनाशोभिभीस्तथा ॥ ८२ ॥

भाषार्थ—जिन दिशा में शनि पाप ग्रहों में युक्त या दृष्ट हो उम दिशा में रोग और दुर्भिक्ष होंगेगा ॥ ८१ ॥ तथा जिन दिशा में सूर्य पाप युक्त दृष्ट हो उम दिशा में रात्रा में अन्न का नाश होवे, तथा मङ्गल जिन दिशा में पाप युक्त दृष्ट स्थित हो वहां अन्न का नाश और अग्नि भय होंगे ॥ ८२ ॥

यस्यां दिशि शुभाः खेटाः समस्तवलशालिनः ।

निष्पन्ना सैव विज्ञेया सस्यस्वाथ्यं च तत्र हि ॥ ८३ ॥

केन्द्रेषु सर्वतः पापाः समस्त बलसंयुताः ।

देशस्तदा विनष्टोऽसौ ज्ञातव्यःशास्त्र कोविदैः ॥ ८४ ॥

भा०—जिन दिशा में शुभ ग्रह सम्पूर्ण बल युक्त स्थित हों उम दिशा में सब अन्न अन्त्रे प्रकार उत्पन्न होंगे और समृद्धता भी उभी दिशा में जानना ॥ ८३ ॥ तथा सब केन्द्र स्थानों में पाप ग्रह सम्पूर्ण बल सहित स्थित हों तो देश नाश हो ऐसा शास्त्र पण्डितों करके जानना ॥ ८४ ॥

लाभालाभ प्रश्न ।

लग्नपो मृत्युपश्चापि मृत्योस्यातामुभौ यदि ।

स्थितौ द्रेष्काण एकस्मिन्प्रष्टुर्लाभस्तदा ध्रुवम् ॥ ८५ ॥

एवं द्वादशभावेषु द्रेष्काणैरेव केवलम् ।

बुधैर्विनिश्चयं ब्रूयाद्योगेष्वन्येषु निस्पृहः ॥ ८६ ॥

भाषार्थ—अब लाभालाभ प्रश्न में लग्न स्वामी अष्टम स्वामी ये दोनों अष्टम स्थान में हों और एक ही द्रेष्काण में विराजमान हों तो निश्चय करके प्रश्नकर्ता को लाभ कहना ॥ ८५ ॥ इस प्रकार चारहों भावों के विषे केवल द्रेष्काण ही से निश्चय करके पण्डितों ने कहना चाहिये और अन्य योगों में यही बलवान हैं ॥ ८६ ॥

प्रश्नकाले सौम्यवर्गे लगने यदधिको भवेत् ।

ग्रहभावानपेक्षेण तदाख्येयं शुभं फलम् ॥ ८७ ॥

लग्नाधिपश्च लाभस्याधीशश्च दायको भवेत् ।

लग्नाधिपस्य योगोत्थलाभाधीशेन लाभदः ॥८८॥

भा०—मरण समय लग्न में शुभ ग्रहों के वर्ग जो अधिक हों तो मरण का ही लक्षणा शुभ ही फल कहना ॥ ८७ ॥ लग्न स्वामी और लाभ स्वामी लाभ दायक जानने, लग्नेश का लाभेश के साथ उत्पन्न योग लाभ का देने वाला होता है ॥ ८८ ॥

भरुनि परलाभ करस्तदेवस यदि चन्द्रदृग्लाभे ।

योगाः मनेत्यकलाश्चन्द्रमृते व्यक्तमेतच्च ॥ ८९ ॥

कर्माग्निशेन नवं कर्माधीशेन च निवृत्त्यधीशेन ।

मृत्युदतिना च योगे लाभाधीशस्य नक्तव्यम् ॥ ९० ॥

भा०—लग्न स्वामी लाभ स्वामि में चन्द्र दृष्ट हो तो लाभ होने का योग चन्द्रमा में दिवा निपतन है योगा दृष्ट ही है ॥ ८९ ॥ दृग्-लाभ का ही लक्षणा विचार, परलाभों कि कर्मा जीवन भाव यही है मृत्यु मृत्युदतिना अथवा पति में लाभेश का योग हो तो लाभ योगों का है ॥

नक्षत्रानेवमनः पृथग्विद्विश्च कर्मवृद्धिश्च ।

विशेषतया निवृत्तिर्भृत्युर्भावापर्येषम् ॥ ९१ ॥

नक्षत्राणि यदि पृष्टः स्वयमेव सिपुर्भवत्प्रात्मा ।

कृत्वा कृत्वा नक्षत्राणि व्ययमः मत्तनं व्यय कृत्ते ॥९२॥

लग्नस्थं चन्द्रं चन्द्रः क्रूरो वा यदि पश्यति ।

घनलाभो भवत्याशु किन्त्वनयोऽपि पृच्छतः ॥६३॥

भा०—यदि चन्द्रमे स्थित सुर को चन्द्रमा वा पाप ग्रह देखे तो घन लाभ कीज होगा है किन्तु मर्दन कर्मा को तब अन्तर् भी होवे ॥ ६३ ॥

सामान्य गीत में भाव विचार ।

इन्दुः सर्वत्र बीजाभोलग्नं च कुसुमप्रभम् ।

फलेन सदृशोऽश्रु भावः स्वादुसमप्रभः ॥ ६४ ॥

भा०—यदि सामान्य गीतमें भाव विचार कहते हैं—ग्रह विचार में सर्वत्र चन्द्रमा बीजाभे समान, और लघ फलके समान, और सन्धा फलके सदृश, तथा भाव स्वाद के तुल्य जानना ॥ ६४ ॥

लग्नपतिर्यदि लग्नं कार्याधीशश्च वीक्षते कार्यम् ।

लग्नाधीशः कार्यं कार्येशः पश्यति विलग्नम् ॥६५॥

लग्नेशः कार्येशविलोकयेल्लग्नपं च कार्येशः ।

शीतगुह्यो सत्यां परिपूर्णा कार्यसंसिद्धि ॥ ६६ ॥

भा०—लग्नका स्वामी लग्नको, और कार्य भाव स्वामी कार्य को, और लग्न स्वामी कार्य भावको, कार्य भाव स्वामी लग्नको देखता हो ॥६५॥ तथा लग्नेश कार्येश को और कार्येश लग्नेश को, और इन सबको चन्द्रमा देखता हो तो कार्य को सिद्धि पूर्ण होवेगी ॥ ६६ ॥

कथयन्तिपादयोगं पश्यति सौम्यो न लग्नपो लग्नम् ।

लग्नाधिपं च पश्यति शुभग्रहश्चार्धयोगोऽत्र ॥ ६७ ॥

एकः शुभग्रहो यदि पश्यति लग्नाधिपं विलग्नं वा ।

पादोनयोगमाहुस्तदा बुधाः कार्यसंसिद्धये ॥ ६८ ॥

भा०—लग्न स्वामी लग्न को न देखे और शुभ ग्रह देखता हो तो पौषाई योग जानना, ऐसा पूर्वाचार्य कहते हैं, तथा केवल लग्न स्वामी को शुभ ग्रह देखे तो कोई भी योग हो तो आधा होता है ॥ ६७ ॥ एक शुभ

उद जो लग्न वा लग्नेश को देखें तो बुद्धजन उसे कागे सिद्धि के अर्थ एक
वै ३३ में मान योग-योजन करते हैं ॥ ९८ ॥

लाभाशिका ममय निर्णय ।

उद्योगगतं राशिं तत्कालीकृत्यं लिप्तिकां गुणयेत् ।
वापांगुनेश्च कुर्यात् हत्वा मुनिभिस्ततः शेषः ॥ ९९ ॥
गणयित्त्वेनं प्राग्बद्ध्वा सौम्यस्य भवेदुदयः ।
कार्यनामिः प्रष्टुर्वक्तव्या नेतरेर्ग्रहेर्भवति ॥ १०० ॥

यदि उद्योग-गति में ममय का निर्णय करने हैं—लाभादि सम्पूर्ण
गणना में उद्योग-गति की लग्नका निष्ठापित करे फिर उद्योग-ममय में द्वायशाशुलके
प्रकार में उद्योग-गति में गणना करके चौदह में भाग देवे जो शेष रहे वह
कार्य-नामि ममय ॥ ९९ ॥ उद्योग-गति जो शुभपद की हो तो कार्य-प्राप्ति
है, उद्योग-गति जो अशुभपद की हो तो कार्य-प्राप्ति नहीं होती ॥ १०० ॥

यश्चुण्णकामो ज्ञेयो देवविदा पंच ५ विंशतिः मेकः २१
मनसो २२ कान् प्रोचित्रितयंश्च भावाः २३ सूर्यादितो ज्ञेयः ॥ १ ॥
गणयित्त्वेनं प्राग्बद्ध्वा सौम्यस्य भवेदुदयः ।
कार्यनामिः प्रष्टुर्वक्तव्या नेतरेर्ग्रहेर्भवति ॥ २ ॥

यदि उद्योग-गति में ममय का निर्णय करने हैं—लाभादि सम्पूर्ण
गणना में उद्योग-गति की लग्नका निष्ठापित करे फिर उद्योग-ममय में द्वायशाशुलके
प्रकार में उद्योग-गति में गणना करके चौदह में भाग देवे जो शेष रहे वह
कार्य-नामि ममय ॥ ९९ ॥ उद्योग-गति जो शुभपद की हो तो कार्य-प्राप्ति
है, उद्योग-गति जो अशुभपद की हो तो कार्य-प्राप्ति नहीं होती ॥ १०० ॥

यश्चुण्णकामो ज्ञेयो देवविदा पंच ५ विंशतिः मेकः २१
मनसो २२ कान् प्रोचित्रितयंश्च भावाः २३ सूर्यादितो ज्ञेयः ॥ ३ ॥
गणयित्त्वेनं प्राग्बद्ध्वा सौम्यस्य भवेदुदयः ।
कार्यनामिः प्रष्टुर्वक्तव्या नेतरेर्ग्रहेर्भवति ॥ ४ ॥

यदि उद्योग-गति में ममय का निर्णय करने हैं—लाभादि सम्पूर्ण
गणना में उद्योग-गति की लग्नका निष्ठापित करे फिर उद्योग-ममय में द्वायशाशुलके
प्रकार में उद्योग-गति में गणना करके चौदह में भाग देवे जो शेष रहे वह
कार्य-नामि ममय ॥ ९९ ॥ उद्योग-गति जो शुभपद की हो तो कार्य-प्राप्ति
है, उद्योग-गति जो अशुभपद की हो तो कार्य-प्राप्ति नहीं होती ॥ १०० ॥

शुक्रशनि प्रश्न, जो शुक्र शनि का प्रश्न है, शुक्रशनि में महीना शुक्र में शुक्र, शनि महीना शुक्र में शुक्र ॥ २ ॥ साधन कथना प्रकृति, या विचार को जानि, तथा मंगलमकर, मकराजयन प्रादि के समय निश्चय करे कथना के जो कथना ॥ ५ ॥

अथ चन्द्रनक्षत्रशुभार्गा रविहजमितमौम्यजीवमौराणाम् ।

चन्द्रस्य ननि दिशालैः स्युः प्रथमोद्भवैर्वर्णैः ॥ ५ ॥

ज्ञात्वा तन्मान्नग्नं विज्ञाय शुभाशुभं च वदेत् ।

वर्गादिमध्यमान्त्यैर्वर्गैः प्रश्नोद्भवैर्विषमरापिः ॥ ६ ॥

भाषार्थ—रूपार्ग का मकर, कर्क का मंगल, चरग का शुक्र, द्वर्ग का शनि, त्वर्ग का शुक्र, र्वर्ग का शनि, मकर और शरग का चन्द्रमा ये वर्गों के प्रथम में स्थिति हैं, जहां लघु का ज्ञान न हो मकर कथना दो तीन प्रश्न एक ही समय में ही जो वर्ग में ज्ञान निश्चय कर लेना, या उस प्रकार कि प्रश्न के लक्षणों में प्रथम प्रश्न के वर्ग का जो स्वामी है ॥५॥ उसके लग्न को जानकर शुभाशुभ फल कहना जहां प्रत्येक ग्रह की दो दो राशि हैं, इनमें विषम राशि जानना, जैसे मंगल वर्गेश हो तो ११-मेघ जानना, सर्वत्र सूर्य चंद्रमा की एक ही एक राशि है सो जानना, जहां बहुत प्रश्न हों वहां प्रथम प्रश्नाक्षर के प्रथम वर्ग में दूसरे प्रश्न में मध्यवर्ग तीसरे में अन्य वाले वर्ग से ज्ञान निश्चय करना ॥ ५ ॥

लग्नज्ञाने प्रवेदत्पृच्छायुग्मं कुजज्ञजीवनाम् ।

सितरविजयोश्चनेकं रविशशिनोरेकं राशित्वात् । ७ ॥

तस्मात्प्राग्वत्प्रवेदत्पृच्छासमये शुभाशुभं सर्वम् ।

कालस्य च विज्ञानादेतच्चिन्त्यं बहुप्रश्नं ॥८॥

भाषार्थ—लग्न ज्ञान में प्रश्नकर्ता को मंगल, बुध, गुरु के राशिका लग्न प्राप्त हो तो दो प्रश्न कहना, शुक्र और शनि से अनेक प्रश्न, कहने, सूर्य चन्द्र एक राशि वाले होने से एक ही प्रश्न कहना ॥ ७ ॥ इस कारण पूर्व कथानुसार प्रश्नकर्ता को सब शुभाशुभ प्रश्न करना प्रश्न समय में इस प्रकार विचारना, तथा समय के विज्ञान से बहुत प्रश्नों में यह सब विचार करना

प्रश्न चम्तु ज्ञान ।

स्वांशे विलग्नं यदि वा त्रिकोणे स्वांशे स्थितः पश्यति धातुचिन्ताम्
परांशकम्यश्च करोति जीवं मूलं परांशोपगतः परांशम् ॥ ६ ॥

धातुमूलं जीवमित्योजराशौ युग्मेः विद्यादेतदेव प्रतीपम् ।

नगं योरात्मनस्कृमाद्गमय एवं संक्षेपोयं विस्तरात्तत्प्रभेदाः ॥ ७ ॥

भाषा—मूल प्रश्न अथवा मुष्टि प्रश्न में लघुनेश वा चन्द्रमा अपने
परांश वा मूल में पथा त्रिकोण (नगम पंचम) स्थान में वा अपने नरांश
स्थिति में निराश वा मूल का देगें तो धातु चिन्ता कहना, तथा जो दूसरे के
परांश में निराश वा मूल वा चन्द्रमा को देगें तो मूल चिन्ता जाननी ॥ ६ ॥

अथ नगम धी पाय नरांश में धातु, दूसरे में जात, चौथे में धातु, पाँचों
में धातु चन्द्र में नरांश, षष्ठों में धातु, सातवें में मूल, नवों में जीव, जाननी
के अन्वयार्थ जानना तो विधीय कथा १ । ४ । ७ नरांशा में जीव, २ ।
५ । १ । ७ मूल में जीव, ३ । २ । ७ नरांशा में धातु चिन्ता कहनी ॥ १० ॥

गिर्विद्यो केन्द्रोपगतो रविभोमो धातुक्रमे प्रश्ने ।
वृत्तसो मूलक्रमे शशिमृगशुक्राः स्मृता जीवाः ॥

मेरुवर्षादिनाम्ने कृत्वा र्कयुक्तं निर्गन्तव्यं यथा ।
तत्रैरिर्वर्षा पुरादेव मयट्कन्यागन्तव्येर्त्तनेः ॥ १२ ॥

भाषा—यदि मूल केन्द्रोपगत रवि भोमो धातु क्रम में तो धातु चिन्ता
वृत्तसो मूलक्रमे शशिमृगशुक्राः स्मृता जीवाः ॥ १० ॥
मेरुवर्षादिनाम्ने कृत्वा र्कयुक्तं निर्गन्तव्यं यथा ।
तत्रैरिर्वर्षा पुरादेव मयट्कन्यागन्तव्येर्त्तनेः ॥ १२ ॥

दुर्गोदयनेशान् वृत्तानुक्रमेणैव नचापकुरुट्टकैः ।
नरांशु मूलानुक्रमेणैव नचापकुरुट्टकैः ॥ १३ ॥

भाषा—यदि नरांश में नचापकुरुट्टकैः
नचापकुरुट्टकैः ॥ १३ ॥
यदि मूल में नचापकुरुट्टकैः
नचापकुरुट्टकैः ॥ १३ ॥

भाव प्रश्न ज्ञान ।

लग्नलाभपयोः प्राणी तयोर्यद्भावगः शशी ।
तस्यभावस्य या चिन्ता प्रष्टुः सा हृदि वर्तते ॥ १४ ॥
एवं चलाधिकाचन्द्रालग्ननाथो यतः स्थितः ।
देवज्ञेन विनिर्णयः प्रश्नस्तद्भावसम्भवः ॥ १५ ॥

भाषार्थः—लग्नेश भावेश इनके जितने संख्या के भाव में चन्द्रमा हो उस भाव सम्बन्धी जो चिन्ता वही पृच्छक के हृदय में वर्ते है ऐसा जानना ॥१४॥ इसी प्रकार चन्वान चन्द्रमा से जितने संख्या वाले भाव में लग्न स्वामी हो उस भाव सम्बन्धी प्रश्न पृच्छक के हृदय में ज्योतिषी परिणत करके निर्णय करना अर्थात् बनाना चाहिये ॥ १५ ॥

आरमसमं लग्नगतस्तृतीयगैर्भ्रातरः सुतं सुतगैः ।
माता वा भगिनी वा चतुर्थगैः शत्रुगैः शत्रुः ॥ १६ ॥
जायासप्तमसंस्थैर्नवमे धर्माश्रितो गुरुदर्शने ।
स्वांशःपतिमित्रशत्रुषु तथैववाच्यं बलयुतेषु ॥ १७ ॥

भाषार्थः—यव से उच्चम बल वाला ग्रह वा तत्काल लग्न का नवमाशेश लग्न में हो तो शपने शरीर सम्बन्धी, तीसरे हो तो भ्रातृ सम्बन्धी, पंचम भाव में हो तो पुत्र सम्बन्धी, चतुर्थ भाव में हो तो माता वा बहिन सम्बन्धी, छठे स्थान में हो तो शत्रु सम्बन्धी प्रश्न प्रश्नकर्ता के हृदय में जानना ॥ १६॥ तथा सप्तम भाव में स्थित होने से स्त्री सम्बन्धी, नवम भाव में धर्म सम्बन्धी, दशम भाव में गुरु वा राज सम्बन्धी प्रश्न कहना, तथा लग्न नवांश स्वामी बलवान होकर मित्र की राशि में स्थित हो तो मित्र सम्बन्धी प्रश्न जानना, शत्रु राशि में हो तो शत्रु सम्बन्धी प्रश्न जानना, इनमें जो बलौ हो उसी से प्रश्न कहना ॥ १७ ॥

चरलग्ने चरभागे मध्याद्भ्रष्टे प्रवासिचिंता स्यात् ।
भृष्टःसप्तमभवनात्पुर्निवृत्तो यदि न चकी ॥ १८ ॥

अस्ते रविसितवक्रैः परजायां स्वां गुरौ बुधे वेश्याम् ।

चन्द्रे च वयःशशिवत्प्रवदेत्सौरैःऽत्यजादीनाम् ॥ १६ ॥

भावार्थः—पूर्वोक्त प्रश्न जो चर राशि की लग्न में वा चर राशि के
उत्पन्न स्थान में उत्पन्न (दशम, एकादश, द्वादश) भाव में हों तो पति
(पत्नी से स्थित मनुष्य) का प्रश्न जानना, तो चर राशि नवम
भाव में उत्पन्न (सप्तम, अष्टम, नवम) भाव में हों तो प्रवासी के लिये
ही विन्ता पढ़ना, यदि वह चकी नहीं होने, यदि चकी हो तो पूर्वोक्त
विन्ता पढ़ना ॥ १८ ॥ जो मन्त्र भाव में सुग, शुक, मङ्गल चरितक
वा वा वा सी मन्त्रणी, गुरु हों तो अपने ही सम्पन्नी, एवं ही
वैशा सम्पन्नी चन्द्रमा ही तो मृगा चन्द्रमा के अथवा मान ही सम्पन्नी,
इतरे ही तो कल्प (हीन जाति) ही सम्पन्नी प्रश्न पृथक् के विषय में
॥ १९ ॥

अमाभ्यां बालशर्गा बुधश्च बुद्धांशनिः सर्गगुरु प्रगूनाम् ।

श्रीः रविर्गो भौमभिर्नो च भते एवं वयःस्यात्पुरुषोप . चैवम् ॥ २० ॥

भावार्थः—यदि चन्द्रमा वा वा ही कृमासी कन्पा, यदि में बुद्धा ही, एवं
वा वा ही वयः, मङ्गल, शुक, ही तो कदापि राजा की ही सम्पन्नी प्रश्न
में ही सम्पन्नी, एवं पश्य की सम्पन्नी ही विषय में कर्त्तनी ॥ २० ॥

सर्वप्रश्नार्थः ।

वपेश होवे, और लग्न में गृहगति, मन्म में शुक्र और नीचे चन्द्रमा हो तो मति क्रीडा हास्य पर्वक होवे ॥ २२ ॥

शुभग्रहोरथे च कञ्चलयोगे युतो रजः पुष्पसुगंधयुक्तम् ।

स्वर्क्षोच्चगे हर्म्यरतं निगद्यं स्थिते द्विदेहे वनिता स्वकीया ॥२३॥

चरोदये सा रमिते परस्त्री केन्द्रे शनौ सा मुरजो दिवारतिम् ।

निशोदये शत्रिखगे च रात्रौ दिवानिशं तद्वलिनोद्विखेटयोः २४ ॥

भा० - लग्नेश व मन्मेश का शुभ ग्रहों से कम्बूल योग हो तो रज पुष्पकी सुगंधी से मयुरत हो, पाप कम्बूल से दुर्गाभियुक्त जानना, तथा उक्तग्रह अपनी राशि वा उच्च में हों तो अच्छे घरमें, और अन्यथा हो तो सामान्य स्थान में मुरत हो, तथा नीचादि राशिमें होने से घुरे स्थान में मुरत जानना द्विःस्वभाव राशिमें हों तो अपनी राशि से, स्थिर राशि में उक्तग्रह हो तो वेश्या आदि से संभोग कथन करना ॥ २३ ॥ चरराशि लग्न हो तो पराई स्त्री से संभोग होवे, शनि केन्द्र में हो तो रजस्वला स्त्री से, दिवावली लग्न हो तो दिनमें, रात्रिबली हो तो रात्रिमें, संभवावली हो तो सायंकाल में, द्विःस्वभाव से दिन तथा रात्रि में भी मुरत कहना ॥ २४ ॥

महर्षे विचार ।

मेघे वृषे च मिथुने शुभयुक्तदृष्टेन त्रैष्मिकंतु सुलभं भवतिपृथिव्याम् ।

सौम्ये धनुर्मृगघटेषु च सारधान्यं कुर्यात्समर्धमशुभेःसहितोऽसमर्धम् ।

भा० - मेघ वर्ष, और मियन, ये राशि शुभग्रहों से युक्त दृष्ट हों तो त्रैष्मिक कर्तु पृथिवी पर सुलभ (अच्छा) होवेगी, और धन, मकर, कुम्भ में हों तो शरद ऋतुकी फसल अच्छी होगी तथा लग्न लग्नेश और चन्द्रमा शुभयुक्त दृष्ट हो तो समय अच्छा हो, पापयुक्त दृष्ट से महंगा होवे ॥ २५ ॥

लग्ने वलाढ्ये निजनाथसौम्यैर्युक्तेक्षिते केन्द्रगतैःशभैश्च ।

सर्वैःसमर्धं विबलेर्विलग्ने केन्द्रेषु पापैः सकलं त्वनर्धम् ॥२६॥

भा० - लग्न बलवान और अपने स्वामी शुभ ग्रहसे युक्त दृष्ट हो तो केन्द्र स्थानमें शुभग्रह होंतो सब सन्ता होवे अर्थात् समय सुकाल होवे और जो लग्न

चन्द्रोत्तम हो चौर केन्द्र में पापग्रह हों तो समय अन्धा नहीं हो अन्धता मरणा होता है ॥ २६ ॥

मेघ के सूर्य प्रवेश का शुभाशुभ फल ।

राकाकुहृशशिपभास्वदज प्रवेशे लग्नेश्वराःशुभखगैर्युतवीक्षिताभ्रं तद्वन्मरेजगति सौख्यमलंप्रकुर्युःपापार्दितेगदनरेन्द्रभयं प्रजानाम् २७

भाव—यद्य मेघ के सूर्य प्रवेश में शुभाशुभ फल कहते हैं—मेघाभ्रं पदमे मेघमासम्भा पूणिमा हो, और चन्द्रा क्रांत राशि का स्वामी सूर्य हो, और लग्न स्वामी शुभ युक्त पृष्ट हो तो यह सम्भवतः जगत् का यत्न प्राप्त होवे, पाप ग्रहों में पीडित होते प्रजा को रोग और राज भय प्राप्त होवे ॥ २७ ॥

मेघप्रवेशोदयनः स्वरांशः केन्द्रेण पापोदुपतिस्थशाले ।

पाप ग्रहैर्दृष्टयुतेऽथ तस्मिन्वर्षे गदातिः प्रियमन्नमुन्म्यामि २८

भाव—यद्यहं पदमे लग्न में मघमास केन्द्र में हो, पाप ग्रह में मघाशुभ युक्त पृष्ट पदमे हो, तो उक्त सम्भव में रोग पीडा, और प्रतीक प्राप्त होवे ॥ २८ ॥

भान्तोमेघ प्रवेशोदय भानपतिः गदग्रहः स्वोन्नयगम्यः ।

भान्तो वापि केन्द्रे शुभगमन चर्दृष्ट युक्तो वनात्पः ।

तस्मिन्वर्षे निरुभाजगमनि शुभगम्यं भूमि मायं सत्पुदिः ।

सुखः सत्पुदिः वा दिशति नृपभयं कष्टमन्नं महर्ष्यामा २९ ॥

भाव—यद्यहं पदमे लग्न में मघमास केन्द्र में हो, पाप ग्रह में मघाशुभ युक्त पृष्ट पदमे हो, तो उक्त सम्भव में रोग पीडा, और प्रतीक प्राप्त होवे ॥ २९ ॥

भाव—यद्यहं पदमे लग्न में मघमास केन्द्र में हो, पाप ग्रह में मघाशुभ युक्त पृष्ट पदमे हो, तो उक्त सम्भव में रोग पीडा, और प्रतीक प्राप्त होवे ॥ २९ ॥

भाव—यद्यहं पदमे लग्न में मघमास केन्द्र में हो, पाप ग्रह में मघाशुभ युक्त पृष्ट पदमे हो, तो उक्त सम्भव में रोग पीडा, और प्रतीक प्राप्त होवे ॥ २९ ॥

जन्मोदये देहसुखे धनेर्थ लाभस्तृतीये च कुटुम्बवृद्धिः ।

तुर्ये सुहृत्सौख्यमथात्मजातिःपुत्रेऽथ षष्ठेऽरिपराजयः स्यान् ३१ ।

भा०—जन्म लग्न मे मृत्यु और मेपाक प्रवेश लग्न जिन भाव में स्थित हो और शुभ ग्रह युक्त हो तो उस वर्ष में भाव की वृद्धि होती है. पाप ग्रह में युक्त हो तो अन्यथा अर्थान् भाग की हानि कहना ॥ ३० ॥ जन्म लग्न में मेपाक प्रवेश हो तो देह का सुख हो धन लग्न में होने से अर्थलाभ, तृतीय लग्न में हो तो कुटुम्ब की वृद्धि, चौथी लग्न में हो तो मित्र सुख, षष्ठम में पुत्र सुख, छठी लग्न में शत्रु का पराजय होवे ॥ ३१ ॥

स्त्री सौख्यासिर्भवति मदने मृत्युरुग्भीश्च रन्ध्रे ।

धर्मार्थासिस्तपसि दशमे वित्त सौख्यास्पदासिः ॥

लाभे लाभः सुख धन त्रयो दुःख दारिद्र्यमन्त्ये ।

पुंसो मेपं प्रविशति स्वो जन्म लग्नाद्धि लग्ने ॥ ३२ ॥

भाषार्थ—नप्तम लग्न में स्त्री का सुख, अष्टम लग्न में मृत्यु व रोगभय नप्तम लग्न में धर्मलाभ, दशम लग्न में धन का सुख और गृह लाभ लाभ में लाभ सुख व धन मंचय, द्वादश लग्न में दुःख दरिद्रता एवं मनुष्यों का मेपाक प्रवेश होनेपर जन्म लग्नमें जिनलग्न में प्रवेश हो उस भाव संबन्धी शुभाशुभ फल जानना ॥ ३२ ॥

श्री नीलकण्ठेन शरत्फलोत्तरं प्रश्नाख्यतंत्रं यदकारि पूर्वम् ।

तत्सांप्रतं पूर्णतरं न लभ्यते ह्यावश्यकं प्रश्नफलं हि मन्ये ॥

भा०—श्रीनीलकण्ठ देवज्ञ ने वर्ष फल तंत्र कहने के उपरान्त जो तीसरा प्रश्न तंत्र पूर्व कथन किया था सो सम्पूर्ण प्राप्त नहीं हुआ इस कारण प्रश्न फल को आवश्यक मान कर जो कुछ श्री नीलकण्ठ कृत वा संगृहीत भाग प्राप्त हुआ सो भाषान्तर करके लिख दिया है ॥३३॥

इति श्री देवज्ञानन्त सुत नीलकण्ठ देवज्ञ विरचितं ।

संगृहीतं वा तृतीय प्रश्नतंत्रं समाप्तम् ॥ ३ ॥

भाषा कार कृत प्रार्थना ।

वाण वाण निधीन्द्रुःदे मार्गे मास्यसिते दले ।

चतुर्थ्यां भृगु वारे च भाषा सम्पूर्णं तामगात् ॥ ३४ ॥

भाषेयं रचिता प्रेम्णा श्रीनारायणशर्मणा ।

अत्र कुत्राप्य शुद्धं चेत्यंतव्यं विबुधैर्जनैः ॥ ३५ ॥

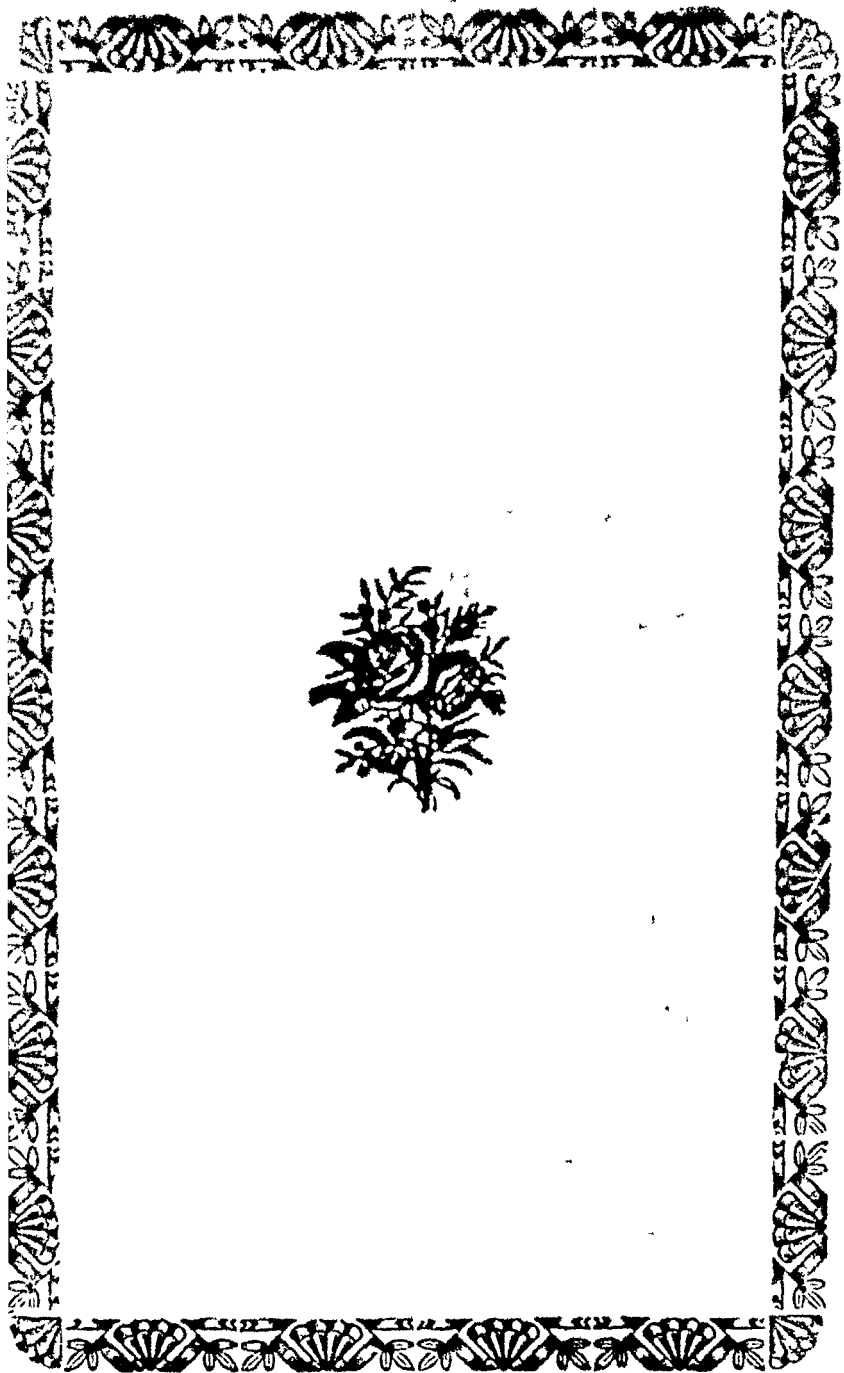
भा०--श्रीमन्महागजा विक्रमादित्यजी के संवत् १९१९ मार्गमास
दशम्यादि शुक्लवार के दिन यह भाषा टीका सम्पूर्णाता को प्राप्त हुई ॥ ३४ ॥
यह भाषा टीका श्री प्रेम से श्रीनारायणशर्मा ने रचना करी जो इसमें कहीं
कोई त्रुटि न मिले तो पंडितवनों के कर्म समा करना यही हमारा
संस्कार है ॥ ३५ ॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।



मिठने का पना--

सम्बद्ध भाषणा प्रेम, सत्यम् ।



सूचीपत्र

७७ ७७ ८८ ८८

केसर गुलाब	॥)	चम्पा चमेली)।
बालाक मालिन	।)	चैभेली गुलाब	।-)
सवा यार	॥)	दिल्लीगीका खजाना-	
तोता मैना ८ भाग	।=)	सारंगासदाबृक्षवड़ा ॥)	
अन्ध्याचात्रा ४० चोर	=)	अफीमनीका किस्सा -)	
माट्टे नोन यार	।।।)	गन्खी चूस)।।
हार्निमनाई	।।=)	भूणा मराबरा)।
बेकान पवोमी	।-)	गुलसनोबर	=)
मुल्लहाथ	।=)	मोहनी वरित्र	।=)
निशामन बवीमी	।=)	गिपाईजादा	=)
देदा म. व. नृ	।)	अनमम का बचा	=)
शिमगा शाहम)।।	सतकीमंगोली बात -)	
प. क. मानस ४० मून	-)	सत ही अनोखीबात-	
न. न. न. प. श. व. न.	-)	दुर्वीली अदिगामि =)।।	

विशेष का पता—

फिजानलान्द हायकाप्रमाद.

बन्धुः मृपण घेन, मथुमा ।

